काव्यधर्म के सम्बन्ध में टी. एस. इलियट और एस. एच. वात्स्यायन के सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन

THE THEORY OF FUNCTION OF POETRY PROPOUNDED BY T. S. ELIOT AND S. H. VATSYAYAN

A COMPARATIVE STUDY

Thesis Submitted to

Cochin University of Science and Technology

for the degree of

Doctor of Philosophy

By

पी. जे. चाक्को

P. J. CHACKO

Head of the Department

Dr. N. RAMAN NAIR

Supervisor

Prof. (Dr.) A. RAMACHANDRA DEV

Department of Hindi

Cochin University of Science and Technology

Cochin-682022

1988

C E R T I F I C A T E

This is to certify that the THESIS is a bonafide record of work carried out by P.J.CHACKO under my supervision for Ph.D. and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any University.

Prof.(Dr.)A.Ramachandra Dev.
(Supervising Teacher)

Dept. of Hindi,
Cochin University of Science & Technology,
Cochin- 682 022,

Date: 23.09.1988

वक्तव्य

समीक्षा का मार्ग संकीर्ण है । वही उस पर बढ़ सकता है जिसमें प्रतिभा हो, क्षमता हो । प्रतिभा + क्षमता = कला । अर्थात् समीक्षा कला होती है । टी॰एस॰इलियट और एस॰ एच॰वात्स्यायन की समीक्षाओं में काव्यधर्म संबन्धी अनेक बातों की चर्चा हुई है । इसलिए उनपर एक तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करके तुलनात्मक अनुसन्धान के विस्तृत इतिहास में और एक पृष्ठ जोड़ देने का प्रयत्न है "काव्य-धर्म के सम्बन्ध में टी॰एस॰इलियट और एस॰एच॰ वात्स्यायन के विचारों का तुलनात्मक अध्ययन" नाम प्रस्तुत शोध प्रबन्ध ।

अनुसन्धान प्रक्रिया की राह, जिसपर चलने की कोशिश इसमें की गई है, अंग्रेज़ी और हिन्दी साहित्य के प्रतिनिधि साहित्यकार टी॰एस॰ इलियट और एस॰एच॰वात्स्यायन के व्यक्तित्व, कृतित्व, कवि, काव्यसर्जन, काव्यभाषा, काव्यास्वादन और काव्यधर्म संबन्धी विचारों की तह में जाकर निर्णय की ओर बढ़ती है ।

इस राह पर चलने में मेरा मार्गदर्शक रहे हैं कोचिन विश्वविद्यालय के आदरणीय अध्यापक डा॰रामचन्द्रदेव जिनके आशीर्वाद से इस कार्य में मुझे वह आस्था प्रदान की, जिनकी सूक्ष्म दृष्टि एवं मेधा से मुझे वह दृष्टि मिली, जिसके द्वारा मैं अपने विषय का विवेचन प्रस्तुत कर सकता हूँ। मैं आपके प्रति हमेशा आभारी हूँ। कोचिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डा॰एम॰रामन नायरजी की ओर भी मैं कृतज्ञ हूँ। पुस्तकालय की अध्यक्षा श्रीमती कुंजिक्कावुट्टी तंपुरान, सहायक श्री॰एम॰ए॰ असीस के प्रति भी मैं बहुत आभारी हूँ।

पी॰जे॰चाक्को

1. पहला अध्याय - उपोद्घात - 1-14

2. दूसरा अध्याय - टी॰एस॰इलियट : व्यक्तित्व एवं कृतित्व 15-40

माता - पिता - शिक्षा - इलियट हारवार्ड में -

साम्तायन और बाबिट से सम्बन्ध - रसल से मुलाकात -

विभिन्न भाषाओं का अध्ययन - लाफोर्ग से परिचय -

शोधकार्य - इलियट पर भारतीय दर्शन का प्रभाव

एज़रा पाउन्ड से साक्षात्कार - इलियट और ब्राऊनी -

इलियट और बोदलयर - इलियट का वैवाहिक जीवन -

परिवर्तन - प्रसिद्धि की ओर - इलियट की मृत्यु -

इलियट का साहित्यिक व्यक्तित्व -

इलियट का कवि व्यक्तित्व - इलियट नाटककार के रूप में -

समीक्षक इलियट - संपादक इलियट - वक्ता -

क्लासिकीय मानसिकता -

3. तीसरा अध्याय - इलियट के काव्य-धर्म संबन्धी विचार 41-75

सर्जन - प्रक्रिया - कविकर्म -

निर्वैयक्तिकता - रचना के स्तर पर -

कवि और परंपरा का बोध - कवि और संवेदनशीलता -

वस्तुगत सह संबंध - काव्यभाषा -

काव्य धर्म -

चौथा अध्याय - एस्·एच्·वात्स्यायन : व्यक्तित्व और कृतित्व -76-97

माता - पिता - प्रारम्भिक शिक्षा -

स्वतन्त्रता संग्राम में योगदान - अज्ञेय : कवि व्यक्तित्व -

अज्ञेय की काव्य रचनाएं - आलोचक अज्ञेय -

कहानीकार अज्ञेय - उपन्यासकार अज्ञेय - यायावर -

संपादक अज्ञेय - पत्रिकाओं का संपादन कार्य -

पुस्तकीय संपादन कार्य - अज्ञेय नाटककार - मृत्यु -

अज्ञेय : भारतीय संस्कृति के वक्ता -

अज्ञेय : परंपरा की उपलब्धि -

पांचवां अध्याय : वात्स्यायन के काव्यधर्म संबन्धी विचार - 98-133

सर्जन प्रक्रिया -- सर्जन और परिवेश -

सीक्षा प्रक्रिया -- कवि और परंपरा -

निर्वैयक्तिकता रचना के सन्दर्भ में - काव्यभाषा -

काव्य-धर्म -

छठा अध्याय : तुलनात्मक अध्ययन 134-152

सर्जन की प्रक्रिया - काव्य और परंपरा -

निर्वैयक्तिकता - काव्य-स्तर पर- सीक्षा - काव्यभाषा -

अभिव्यक्ति में बिंब और प्रतीक --

काव्यधर्म -

सातवां अध्याय : उपसंहार - 153- 159

सन्दर्भग्रन्थ सूची

उपोद्घात

आधुनिक साहित्य में सर्जनात्मक साहित्य के समान ही आलोचनात्मक साहित्य महत्त्वपूर्ण होता है । आधुनिक दृष्टिकोण ही यह है कि किसी भी साहित्य की समृद्धि उसकी उपलब्ध सृजनात्मक कृतियों के समान आलोचनात्मक कृतियों पर भी आधारित है । विश्व-भर के समस्त समृद्ध साहित्य का अवलोकन इसका समर्थन करता है । इसलिए कविता के साथ काव्य संबंधी सिद्धान्तों का अध्ययन भी आज अनिवार्य हो गया है ।

आज जो उच्च कोटि के कलाकार होते हैं वे प्राय: उच्चकोटि के आलोचक भी होते हैं । यह बात पुराने साहित्य के बारे में भी बहुत कुछ कही जा सकती है । आधुनिक साहित्य में यह प्राय: देखा जाता है कि जो श्रेष्ठ कवि होता है वह श्रेष्ठ आलोचक भी होता है । टी॰एस॰ इलियट और एस॰एस॰ वात्स्यायन की सार्थकता यही है ।

कवि ही कविता के बारे में प्रामाणिक रूप से कुछ कह सकता है । क्योंकि कवि ही अपनी कृति को अच्छी तरह पहचानता है । इसलिए कवि अपनी कविता के द्वारा काव्य संबंधी सिद्धान्तों का स्थापन भी करता है । यह सिद्धान्त इसलिए अधिक सार्थक होता है कि उसका आधार कवि या सर्जक का अनुभव होता है । कविता कवि और सहृदय (समीक्षक) के सम्मिलन का परिणाम है । कविता का सही आस्वादक समीक्षक है ।

आर॰ए॰ स्कोट जेम्स ने लिखा "जैसे इंजिनीयर की कला का श्रेष्ठ समीक्षक एक इंजिनियर होता है, उद्यानकर्म का समीक्षक एक माली ही होता है

वैसे कविता का समीक्षक कवि ही होता है[1]।" क्योंकि काव्य को कवि ही अच्छी तरह जानता है । कविता का सर्जन उसका स्वरूप, उसका लक्ष्य आदि का गहरा अवबोध कवि को ही होता है ।

इसलिए कवि का आलोचक व्यक्तित्व भी सर्जक के समान श्रेष्ठ है । आलोचक ही काव्य को अच्छी तरह पहचानता है, समझता है, सर्जक की आवाज़ को ठीक पहचानता है । आलोचक तो पाठक, आस्वादक, अनुमोदक, न्यायकर्त्ता एवं सेंसर सब कुछ है[2]।" एक सचेत समीक्षक अपने को कवि के बिल्कुल निकट लाना चाहता है । उसका संपूर्ण अध्ययन करता है । अपनी समीक्षा के माध्यम से उसे दुबारा बनाता है ।

कलाकार हमेशा नये मार्ग का निर्माता होता है । समीक्षक ही उस नये मार्ग का पहला निरीक्षक होता है । यदि कवि का मार्ग ठीक नहीं है तो आलोचक कवि को नयी दिशा की ओर ले जाता है । इस प्रकार समीक्षक कलाकार से किसी भी तरह कम नहीं है । वह भी सर्जक होता है ।

सर्जना में अभिव्यक्ति की वस्तु क्या है ? सर्जक मन की अनुभूतियाँ काव्य वस्तु नहीं है । तब अनुभूतियों को परंपरा बोध से संपृक्त कराने पर जो भावबोध होता है वही काव्य सत्य है । इसलिए कवि को अपने वर्तमान को परंपरा से मिलाकर उसका परिष्कार करना चाहिए । क्योंकि उसके सामने एक समृद्ध परंपरा है जिसमें काव्य, संगीत, कला एवं मानव की विचार संपदा

---

1. Since the best critic of engineering is an engineer and the best critic of gardening is a gardener. We have asked whether the best critic of Poetry is also a poet.-The Making of Literature. - P.374.

2. The reader, the appreciater, the appraiser, the judge, the censor - what shall we call him ? for the critic is all of these things. - The Making of Literature - P.375.

सम्मिलित है । सर्जक के काव्य संसार के अन्तर समीक्षक को प्रवेश दिया जाना चाहिए । जीवन के बारे में व्यापक दृष्टिकोण कवि को होता है । इस दृष्टिकोण को आलोचक पहचानता है और उसे सही मार्ग की ओर ले जाता है ।

जब आलोचक सर्जक बनता है तो वह दूसरों के लिए माध्यम बन जाता है । उसका आस्वादन कलाकार की रचना का सक्रिय पुनर्सर्जन होता है । और जब से वह कवि के मार्ग को छोड़कर अलग रास्ते से जाने लगता है तब वह उसका अपना सर्जन बन जाता है । यही समीक्षक की क्षमता है । कवि यहाँ समीक्षक बन जाता है । "आलोचक अपने तथ्यबोध द्वारा प्राप्त साहित्यानुभूति का विश्लेषण करता है[1]।" उसे बात को भली-भाँति समझा - भर देना चाहिए । आलोचक में तथ्यबोध संवेदनशील, विद्वत्ता, इतिहास-बोध और निष्कर्ष निकालने की शक्ति का विकसित रूप होता है । यह कवि में भी होता है, होना चाहिए ।

अनुभव संपन्न और संवेदनशील समीक्षक कवि की भाषा एवं उसकी काव्य वस्तु को जानता है । जिससे उसकी समीक्षा मूल्यवान होती है । "कविता का समीक्षक कवि ही होता है[2]।" क्योंकि कविता की आलोचना कवि का कार्य है । वह उसके विभिन्न आयामों को सहृदय के सम्मुख प्रस्तुत करता है । रचना की मूल्यवत्ता को बुलन्द करता है । यहाँ रचना संबंधी नयी धारणाओं को भी वे प्रकट करते हैं ।

आलोचना एक अर्थ में सचमुच विज्ञान ही है । सेन्टे बुवे ‖

‖ के अनुसार एक कुशल कलाकार की कला है कविता । उसको कवि ही

---

1. टी. एस्. इलियट के आलोचना सिद्धान्त - पृ. 15.

2. An art, requiring a clever artist. Poetry can only be touched by a poet - The Making of Literature - P.385.

छू सकता है[1]।" समीक्षक की सृजनात्मकता उसे कवि की भूमिका तक ले जाती है । यहाँ एक अन्तर है । कवि अनुभूतियों को अपने परिवेश से ग्रहण करता है तो समीक्षक उन्हें पुस्तक रूप में पाता है अर्थात् साहित्य क्षेत्र में ।

तो आलोचक का पहला कार्य आस्वादन है । वह समाज की आवाज़ है । जो प्रतिक्रिया उसकी होती है वह समाज की भी है । समीक्षक यह घोषणा करता है कि कृति का सही स्वीकरण हुआ है या नहीं । यदि उसका सही स्वीकरण हुआ नहीं तो उसे वह स्वीकरण योग्य बनाता है । वह उसका परिष्कार करके सबको आस्वाद्य बनाता है । क्योंकि वह पाठक का प्रतिनिधित्व करता है ।

साहित्य की कोई विधा हो, सर्जक ही सच्चा समीक्षक हुआ करता है इसका अपवाद हो सकता है । परन्तु सर्जक की समीक्षा हमेशा मूल्यवान होती है । क्योंकि वह कृति को जानता है, उसके अन्तर जा सकता है, उसमें अपने को विलीन करके उसकी उपलब्धियों को प्राप्त करता है । जो कविता को जानता है, पहचानता है, उसके अन्तर पैठता है वही उसकी सही समीक्षा कर सकता है । कवि कर्म से भी वह काफी परिचित होता है । काव्य-सर्जना की प्रक्रिया को जानता है । वह कविता की भाषा जानता है, उसके सांस्कृतिक परिवेश को महसूस करता है । वह इसलिए उसके बारे कुछ कह सकता है । और वह प्रामाणिक भी होता है ।

कवि कविता रचता है और आलोचक आलोचना । ये दोनों भिन्न धर्म हैं । परन्तु काव्य समीक्षा का उत्स कविता है । इसलिए कलाकार ने

---

1. "Judge of poetry is the faculty of poets. - The Making of Literature - P.387.

जिसको रचा है उसको समीक्षक पुनः रचता है । काव्य के सही आस्वादन के लिए तब आलोचक को उसे एकबार अपने मन में पुनर्सर्जन करना पड़ता है । जिससे कवि के दृष्टिकोण को वह समझ सके । संसार की सभी भाषाओं में उपलब्ध साहित्य का यही इतिहास है ।

अंग्रेज़ी साहित्य में स्वच्छन्दतावाद के [महान् कवि] वेडस्वर्थ, कीट्स, शेली, कोलरिज आदि लब्ध प्रतिष्ठ कवि काव्य प्रणयन के साथ उसकी समीक्षा भी करते थे । उनकी समीक्षा का उत्स उनकी कविता है । उन्होंने अपने सिद्धान्तों का निरूपण अपनी कविताओं के माध्यम से ही किया था । एज़रा पाउन्ड, टी·एस्·इलियट आदि क्लासिकीय मनोवृत्तिवाले कवियों ने भी इस मार्ग का अनुगमन किया । वे भी कवि थे, आलोचक भी । अपनी कविताओं के माध्यम से वे अपने काव्य सिद्धान्तों पर पहुंच गये । उनकी समीक्षाओं के द्वारा पाठक उनकी कविताओं का सही आस्वादन और अध्ययन कर सकते हैं । साहित्यिक जगत को उनकी समीक्षाओं से काव्य संबंधी नवीन और मौलिक सिद्धान्त भी उपलब्ध हुए ।

हिन्दी साहित्य के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इसमें श्रेष्ठ कवि प्रखर आलोचक भी रहे हैं । छायावाद के चारों महान् कवि - जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत एवं महादेवी वर्मा प्रखर आलोचक भी थे । उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से अपना आलोचनात्मक दृष्टिकोण अर्जित किया । उनकी कविताओं के सही अध्ययन और आस्वादन के लिए उनकी समीक्षाएं मार्गदर्शक होती हैं । अपनी कविताओं के परिप्रेक्ष्य में उन्होंने काव्य संबंधी सिद्धान्तों का निरूपण किया । कवि ही कविता को अच्छी तरह जानता है और कविता के बारे में कुछ कह सकता है । इसलिए उनके सिद्धान्तों में मौलिकता के साथ सार्थकता भी है ।

प्रगतिवादी कवि नागार्जुन और रामधारी सिंह दिनकर भी अच्छे आलोचक रहे । सर्जक की प्रतिबद्धता को रचना का लक्ष्य मानकर उन्होंने काव्य को समाज से संयुक्त कर दिया । यहां भी अपने सिद्धान्तों के निर्माण में उन्होंने अपनी कविताओं का माध्यम स्वीकार किया ।

नयी कविता के श्रेष्ठ कवि मुक्तिबोध, शमशेर बहादुर सिंह, धर्मवीर भारती आदि महान् समीक्षक भी हैं । मुक्तिबोध की काव्य यात्रा के समान सफल है समीक्षा की यात्रा । अपनी काव्यात्मक उपलब्धियों के द्वारा ही आलोचना की मंजिल तक पहुंचे हैं । उनके काव्य सिद्धान्तों का सशक्त उदाहरण उनकी कविताओं में उपलब्ध है । शमशेर और भारती का कार्य भी इससे भिन्न नहीं । उन्होंने अध्ययन और आस्वादन के भिन्न-भिन्न आयामों पर अनेक मौलिक सिद्धान्त प्रस्तुत किये । काव्यसर्जन की प्रक्रिया पर महत्वपूर्ण विचार प्रकट किये । ये सब वे एक कवि होने से ही कर सके । सर्जक के द्वारा यह कार्य जितनी सहजता से संभव है, समीक्षक के द्वारा नहीं ।

-सर्जक-प्रक्रिया के समान ही आलोचनात्मक प्रक्रिया भी जटिल कार्य है । सर्जक में जो अन्तर्दृष्टि विद्यमान होती है वह आलोचक में भी है । उसके द्वारा आलोचक उपलब्ध कविता का अध्ययन और आस्वादन करके सहृदय सम्मुख प्रस्तुत करता है । कवि-सत्य को पहचानकर उसे आत्मसात् करके समीक्षक उसे आस्वाद्य बनाता है । इसलिए जहां सर्जक इसमें सफल हो जाता है उतना कोई और नहीं । कवि की समीक्षा इसलिए श्रेष्ठ होता है[1]।" वह अपने साहित्यिक अवबोध के द्वारा देशकालबद्ध कृति में स्थायी एवं कालहीन मूल्यों का अवलोकन करता है ।

आधुनिक साहित्य में विशेषतया अनुसंधान के क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन

---

1. टी. एस. इलियट के आलोचना सिद्धान्त - पृ. 21.

एक नया आयाम है । तुलना और विश्लेषण आलोचना के महत्वपूर्ण घटक हैं । अनुसंधान के कार्य तो बहुत हुए हैं । परन्तु तुलनात्मक अध्ययन का मूल्यवान कार्य बहुत कम ही हुआ है । मानव संस्कृति के विकास के इतिहास का अध्ययन करने पर यह सहज स्पष्ट होता है कि एक नई संस्कृति के विकास में विभिन्न सांस्कृतिक पहलुओं का योगदान है । साहित्य सांस्कृतिक धरातल की उपादेय है । इसलिए उसके विकास में भी विभिन्न प्रवृत्तियों का योगदान है । उसमें किसी एक भाषा का साहित्य किसी दूसरी भाषा के साहित्य को प्रभावित करता है । किसी एक भाषा का साहित्यकार दूसरी भाषा के साहित्यकार पर प्रभाव डालता है । इसलिए उनके तुलनात्मक अध्ययन से हम उनके साहित्यिक विकास और काव्य सिद्धान्तों का व्यापक ज्ञान हासिल कर सकते हैं । साथ ही उनकी मौलिक उपलब्धियों से हम भली-भान्ति अवगत हो जाते हैं ।

आज संसार अत्यंत छोटा होता जा रहा है । संचार के विभिन्न साधनों ने संसार को अत्यंत छोटा बना दिया है । इसलिए उसके किसी भी कोने में होनेवाली छोटी-सी छोटी घटनाओं का असर दुनिया भर में पड सकता है । यह आधुनिक युग की बड़ी विशेषता है । दुनिया के कहीं पर रहनेवाला मनुष्य किसी अन्य स्थान पर होनेवाले सांस्कृतिक सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक परिवर्तनों से प्रभावित रहता है । साहित्यिक क्षेत्र में भी यही होता है । पाश्चात्य साहित्य की नयी प्रवृत्तियों का प्रभाव पौरस्त्य-विशेषतया भारतीय साहित्य पर तुरंत पड़ता है । इसलिए उनके तुलनात्मक अध्ययन की विशेष सार्थकता है ।

पश्चिम के वर्तमान साहित्य के विस्तृत अध्ययन से व्यक्त होता है कि उसके विकास में फ्रान्च साहित्य का बड़ा योगदान है । साहित्य ही नहीं सांस्कृतिक और सामाजिक आन्दोलनों में भी फ्रान्स के लोग अगुआ रहे हैं । इन आन्दोलनों का प्रभाव स्वाभाविकतया वहां के साहित्य पर पड़ता है । इसलिए फ्रान्च साहित्य अन्य साहित्य के नव आन्दोलनों का उत्स रहा है । औज़ी साहित्य विशेषतया फ्रान्च साहित्यकारों से काफी प्रभावित हुआ है । क्योंकि साहित्यिक जगत में सर्जक दूसरे सर्जक को जाने अनजाने प्रभावित करता है । दूसरों से प्रभावित भी हो जाता है । यही इस तुलनात्मक अध्ययन का प्रेरणास्रोत है । टी·एस्·इलियट और एस्एच् वात्स्यायन के काव्य धर्म संबन्धी सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययम इसलिए यहां प्रासंगिक है ।

टी·एस्·इलियट के सर्जक-व्यक्तित्व के रूपायन में फ्रान्च साहित्य एवं साहित्यकारों का बड़ा योगदान है । टी·ई·ह्यूम, एज़रा पाउण्ड, ब्राऊनी आदि प्रसिद्ध साहित्यकारों से इलियट ने प्रेरणा ग्रहण की । एक क्लासिकीय मानसिकता को बनाए रखने में वे सफल हुए । उनके काव्यसिद्धान्तों में उनकी यही क्लासिकीय मानसिकता झलकती है । उन्होंने घोषणा की कि काव्य व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं, कवि एक माध्यम मात्र है । कवि परंपरा के अवबोध से अपने काव्य सत्य को रूपायित करता है । काव्य सर्जन और काव्य धर्म संबंधी ये विचार उनकी क्लासिकीय मानसिकता के सत्परिणाम है ।

टी·एस्·इलियट औज़ी साहित्य में आधुनिकता के वक्ता के रूप में

प्रविष्ट हुए[1]।" उनके परंपरा एवं क्लासिज़्म संबंधी सशक्त विचारों की आधुनिक पीढ़ी साहित्यकारों ने बड़ी प्रशंसा की है[2]।" उनकी इस आधुनिकता में परंपरा-बोध निरंतर सक्रिय है[3]।" उन्होंने आधुनिक दृष्टिकोण में परंपरा की आत्मा देखी। फ्रेन्च एवं ग्रीक साहित्य ही उनकी चिंतनधारा का उत्स रहा है। उन्होंने आधुनिक साहित्य को और मौलिक दृष्टिकोण से देखा। अपने परंपरा और वैयक्तिक प्रतिभा नामक निबन्ध में उन्होंने परंपरा के अवबोध को काव्य सर्जन केलिए अनिवार्य माना है।

इलियट ने वर्तमान को परंपरा से मिलाकर काव्य स्वरूप का निरूपण किया है। वे सृजन की सफलता पर ज़ोर देते हैं लेकिन काव्य को सृजन का वाहक नहीं मानते। सर्जना में कवि को परंपरा के प्रति अपने को समर्पित करना पड़ता है[4]।" काव्य सर्जन संबन्धी इलियट के सिद्धान्त अपने में मौलिक हैं प्रासंगिक हैं।

पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव भारतीय साहित्य पर भी पड़ा है। आधुनिक हिन्दी साहित्य की विभिन्न प्रवृत्तियों के विकास में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद आदि काव्य प्रवृत्तियों पर पाश्चात्य साहित्यिक उपलब्धियों का अनिवार्य प्रभाव परिलक्षित होता है।

---

1. In one degree or another we are all products of his work - T.S.Eliot - Ed. Allen Tate - P.1.

2. He is the invisible poet in an age of systamatized Literary Scrutiny. -The Invisible poet - T.S.Eliot - P.IX.

3. His significance, his appreciation is the appreciation of his relation to the dead poets and artists. -Selected Essays-P.15

4. Communication will not explain poetry. The use of Poetry and the Use of Criticism. P.138.

साहित्य के सभी विधाओं के विकास में यह दृष्टिगत होता है ।

एस॰एच॰वात्स्यायन ने प्राचीन साहित्य के अतिरिक्त समकालीन साहित्य का व्यापक अध्ययन किया । इससे उन्होंने पाश्चात्य साहित्यिक जगत् के ताजी साहित्यकारों विशेषतया - डी॰एच॰लारेन्स तथा टी॰एस॰इलियट आदि का अत्यन्त गहन और व्यापक अध्ययन किया । अपने काव्य सिद्धान्तों को परिपुष्ट करने में यह विस्तृत अध्ययन अत्यधिक सहायक हुआ । सौन्दर्य को अभिव्यक्ति का चरम लक्ष्य मानकर काव्य को अभिव्यक्ति का माध्यम स्वीकार किया ।

एस॰एच॰वात्स्यायन आधुनिक हिन्दी साहित्यमें प्रयोग का सन्देश लेकर उपस्थित हुए । "तार सप्तक" के माध्यम से उन्होंने अपने काव्य संबन्धी सिद्धान्त को व्यक्त किया । वात्स्यायन ने भी परंपराबोध से संपृक्त काव्य चेतना एवं आधुनिक बोध पर बल दिया । कविता उनकी दृष्टि में शब्द है । काव्य ही संस्कृति का विकास करता है । सांस्कृतिक परंपरा को परिपुष्ट करने में काव्य का बड़ा योगदान है । क्योंकि संस्कृति मानवीय संवेदना का प्रकट रूप है ।

वात्स्यायन ने सचमुच भारतीय और पाश्चात्य साहित्यों का गहरा अध्ययन किया । इसके फलस्वरूप उन्होंने अपने काव्य संबन्धी दृष्टिकोण को व्यापक बनाया । सार्वलौकिक सत्य ही काव्य सत्य होता है । कवि का व्यक्ति सत्य परंपरा बोध से संपृक्त होकर सामान्य सत्य बन जाता है । सामान्य सत्य ही सार्वलौकिक बन सकता है । कवि सत्य कविता के माध्यम से सामान्य सत्य बनकर पाठक के सामने आता है । इस सत्य को पकड़ना ही सचमुच कवि धर्म है

1·Eliot's thing of poetry stresses the importance of tradition which is the history of man's artistic and spiritual inquires - T.S.Eliot - P.34.

कवि जब इस प्रकार करता है तब वह समाज से अपना सम्बन्ध जोड़ता है । इस सम्बंध को वह अपनी कविताओं के माध्यम निरन्तर बनाए रखता है । समाज भी कविता के द्वारा कवि तक पहुँच जाता है । तब कविता कभी भी व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं हो जाता ।

वार्ष्णेयायन सृष्टि की पूर्णता को कविता का चरम लक्ष्य मानते हैं । काव्य सृष्टि ही है । इसलिए कवि को अपने सर्जन के प्रति पूर्णतः समर्पित होना चाहिए । इस समर्पण से ही काव्य का जन्म होता है । उसे ऐसी भाषा का प्रयोग करना है जो इस सृष्टि को सफल बनाए । एतदर्थ वह प्रतीकों एवं बिंबों का बड़ी मात्रा में प्रयोग करते हैं । उनमें वह अधिकाधिक अर्थ भर देते हैं ।

वार्ष्णेयायन के काव्य धर्म संबंधी सिद्धान्त अपने में मौलिक होते हुए भी पाश्चात्य विचारों से प्रभावित है । यहीं टी॰एस॰इलियट एवं एस॰एच॰वार्ष्णेया के विचारों के तुलनात्मक अध्ययन की सार्थकता है, प्रासंगिकता है ।

काव्य धर्म के सम्बंध में टी॰एस॰इलियट और एस॰एच॰वार्ष्णेयायन के अपने मौलिक सिद्धान्त हैं । दोनों सर्जना को तप:पूत कार्य मानते हैं । सर्जना में कवि अपने परिवेश और परिवेश की घटनाओं से प्रभावित होता है । सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश का विशेष योगदान इसमें है । क्योंकि सर्जक भी उसी समाज का एक अंग है ।

सर्जन प्रक्रिया में कवि मात्र माध्यम है । विभिन्न अनुभव और अनुभूतियां कवि मन से होकर नया रूप धारण करती हैं । यह कवि का वैयक्तिक स्वरूप नहीं होता, वह सबकेलिए आस्वाद्य हो जाता है । इसलिए सर्जना में कवि को निर्वैयक्तिक रहना अनिवार्य है ।

दोनों कवि इस बात पर ज़ोर देते हैं कि निर्वैयक्तिकता को प्राप्त करने केलिए कवि को अपनी परंपरा के प्रति समर्पित होना चाहिए । वह काव्य का निर्माण नहीं करता, बल्कि अपनी अनुभूतियों को परंपरा बोध से संयुक्त कर देता है जो हमेशा विद्यमान है ।

भाषा संस्कृति की देन है । इलियट और वात्स्यायन कविता को सृजन मानते हैं । इसलिए कवि ऐसी भाषा का प्रयोग करता है जो सही ढंग सृजन कर सके । सृजन से ही कवि कर्म पूर्ण होता है । कवि अपने वांछित अर्थ की अभिव्यक्ति के लिए प्रतीकों तथा बिंबों का प्रयोग करता है ।

इस शोध प्रबन्ध के सात अध्याय हैं । पहला अध्याय है उपोद्घात । इसमें कवि एवं आलोचक व्यक्तित्व के पर विशद अध्ययन प्रस्तुत किया है । कवि आलोचक भी है । कविता की समीक्षा कवि ही करता है । इसलिए आलोचक व्यक्तित्व कवि व्यक्तित्व का दूसरा पक्ष या पूरक है । आलोचना ही कविता की महत्ता को पाठक के सामने प्रस्तुत करती है । और इस तुलनात्मक अध्ययन की प्रासंगिकता और प्रयोजन पर भी प्रकाश डाला गया है ।

दूसरा अध्याय इलियट के व्यक्तित्व और कृतित्व को प्रस्तुत करता है इसमें इलियट का परिवार, प्रारम्भिक शिक्षा, उच्च शिक्षा एवं एक सफल साहित्यकार के रूप में उनके विकास का विस्तृत अध्ययन किया गया है । इसके अलावा उनकी सर्जनात्मक प्रतिभा तथा व्यक्तित्व के रूपायन में एज़रा पाउण्ड, ब्राऊनी, रसल और लाफोर्ग के योगदान का भी उल्लेख हुआ है । इलियट की समस्त रचनाओं का संक्षिप्त अध्ययन भी इसमें प्रस्तुत किया गया है । अंग्रेज़ी साहित्य के विकास में इलियट के योगदान का भी इसमें चर्चा की गई है ।

काव्यधर्म के सम्बन्ध में टी॰एस॰इलियट के विचारों का व्यापक और गहरा अध्ययन तीसरे अध्याय का प्रतिपाद्य विषय है । काव्य का स्वरूप, काव्य सर्जन, काव्य निर्माण में कवि का स्थान, काव्य में परंपरा बोध, काव्य के स्तर पर निर्वैयक्तिकता, काव्य-भाषा एवं काव्यधर्म इसमें चर्चित विषय है । इलियट के प्रमुख और मौलिक सिद्धान्त वस्तुगत सह संबंध पर भी काफी गहरा अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । सार्थक और प्रासंगिक उद्धरणों से इन विचारों को पुष्ट किया गया है ।

हिन्दी के जाने माने साहित्यकार एस॰एच॰वात्स्यायन के सर्जनात्मक व्यक्तित्व और कृतित्व का सटीक अध्ययन चौथे अध्याय में प्रस्तुत किया गया है । एक श्रेष्ठ कवि एवं प्रखर आलोचक के रूप में उनके क्रमिक विकास का विस्तृत वर्णन इसमें हुआ है । उनकी सर्जनात्मक प्रतिभा के विभिन्न आयामों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है । उनकी अन्य रचनाओं की संक्षिप्त समीक्षा भी इसमें हुई है ।

पांचवें अध्याय में एस॰एच॰वात्स्यायन के काव्यधर्म संबन्धी सिद्धान्तों का गहन और विस्तृत अध्ययन है । काव्य के विभिन्न पहलू, काव्यसर्जन, कवि और काव्य के बीच संबंध, काव्य और परंपरा, काव्य का माध्यम और काव्य धर्म आदि विभिन्न विषयों पर वात्स्यायन के विचारों की समीक्षात्मक चर्चा इसमें की गई है । काव्य कला के संबंध में वात्स्यायन का दृष्टिकोण भी इसमें उपलब्ध होता है ।

काव्य धर्म के संबंध में टी॰एस्॰इलियट और एस्॰एच्॰वात्स्यायन के सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन छठे अध्याय का मुख्य विषय है । काव्यधर्म संबंधी दोनों सर्जकों के सिद्धान्तों में अधिकतर समानता दिखाई पडती है । सिद्धान्त निरूपण में इलियट ने वात्स्यायन को प्रभावित किया है ? कहाँ तक प्रभावित किया ? वात्स्यायन और इलियट की मौलिक उपलब्धियाँ क्या है ? काव्य सिद्धान्त में उनके विचारों में लक्षित समानता आदि इस अध्याय में चर्चित विषय है ।

उपसंहार नामक अन्तिम अध्याय में उपर्युक्त छहों अध्यायों में प्रस्तुत विचारों का निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है । इसके परिप्रेक्ष्य में मेरा निर्णय भी प्रकट किया गया है ।

टी॰एस॰ इलियट : व्यक्तित्व और कृतित्व

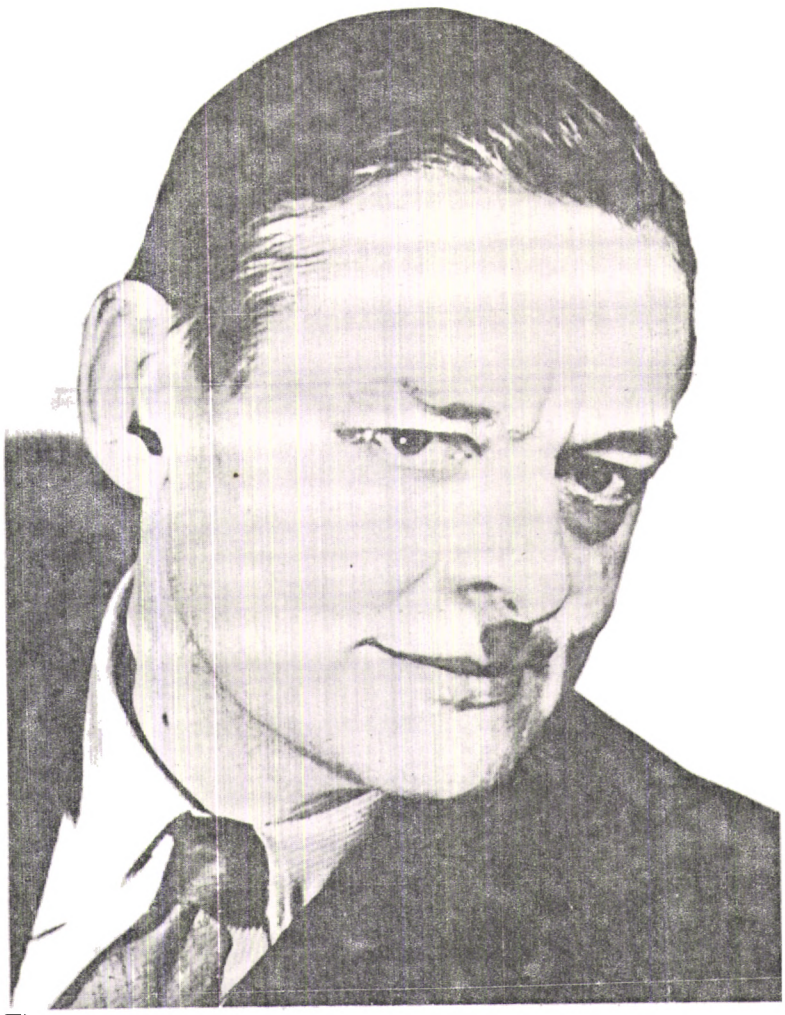

टी. एस. इलियट

आधुनिक साहित्य के अध्येता केलिए टी॰एस॰इलियट के साहित्यिक सिद्धान्तों का ज्ञान अनिवार्य है । बीसवीं शती के साहित्य पर इलियट का प्रभाव सर्वाधिक है । इलियट का योगदान अंग्रेज़ी साहित्य में चिर स्थायी है । उनकी तूलिका ने अंग्रेज़ी साहित्य को स्पर्श किया, उसे विकास की चरम सीमा पर पहुंचा दिया । अब वे आधुनिक साहित्यकारों के लिए मार्गदीर्शी रहे हैं ।

इलियट का व्यक्तित्व महान् है । परन्तु वह साधारण परिवेश की देन है । जीवन भर वे इधर-उधर घूमते रहे । अत: जीवन के प्रति, साहित्य के प्रति एक व्यापक दृष्टिकोण प्राप्त करने में वे सफल हुए । जीवन और साहित्य के व्यापक अनुभवों के, अध्ययन के परिप्रेक्ष्य में उनके प्रति अपने विचारों को प्रकट करने में इलियट हमेशा आगे रहे हैं । उनके विचारों के मूल यही व्यापक अनुभव एवं अध्ययन ही रहे हैं ।

इलियट के जीवन पर दृष्टिपात करने से यह मालूम हो जाता है कि उनके व्यक्तित्व के गठन में अमेरिका एवं इंगलैंड की परिस्थितियों का प्रबल योगदान है । एकान्तता को पसन्द करनेवाले इलियट ने अपने को गहरा सामाजिक होने नहीं दिया । अपना एक अलग व्यक्तित्व को बनाने में वे सफल भी हुए । इसमें उनके पारिवारिक परिवेश और बाद में उनके परिचित और मित्रों ने बड़ा योगदान किया ।

माता - पिता

हेनरी वेर इलियट (Henry Ware Eliot) सन्त लुईस के एक बड़े व्यापारी संघ के अध्यक्ष थे । काफी पढ़े लिखे होने पर भी व्यापार की ओर उनका

लगाव था और फलस्वरूप छोटे-मोटे व्यापार करते करते आखिर व्यापारी संघ के अध्यक्ष पद पर पहुँच गये । वे बड़े उत्साही और परिश्रमी थे । उनका परिवार सन् 1670 में ईस्ट कोकर से मसाचुसेट्स [Massachusetts] आकर बस गया । उनके पिता विलियम ग्रीन लीफ इलियट थे । वे वाशिङ्गटन विश्वविद्यालय [Washington University] के संस्थापक थे और सन् 1872 में उसका कुलपति भी बन गये ।[1]"

चार्लट चाउन्सी स्टेर्नस [Charlotte Chauncy Stearns] से हेनरी वेर इलियट का विवाह हुआ था । वे काफी शिक्षित नारी थी । स्कूल में वे पढ़ने में सबसे आगे थी । लेकिन उस समय स्त्री को विश्व विद्यालय में प्रवेश नहीं दिया जाता था । इसलिए उच्च शिक्षा से वे वंचित रही । उन्होंने अपनी प्रतिभा और क्षमता के बल पर कुछ साहित्यिक रचनाएं की थीं । अपने ससुर विलियम ग्रीन लीफ इलियट की जीवनी लिखी और सावनरोला [Savonarola] पर एक पद्यनाटक भी उन्होंने प्रस्तुत किया ।

हेनरी वेर इलियट और चार्लट चाउन्सी स्टेर्नस की सातवीं सन्तान के रूप में 26 सितंबर, सन् 1888 में मिसौरी के सन्तलूईस में थोमस स्टेर्नस इलियट का जन्म हुआ । अपने जन्म स्थान सन्त लुईस के प्रति इलियट को विशेष ममता थी । सन् 1953 में सन्त लुईस में दिये भाषण में उन्होंने कहा कि यह बड़ा सौभाग्य है कि मेरा जन्म बोस्टन या न्यूयार्क या लन्दन में न होकर सन्त लुईस में हुआ ।[3]"

1.The Achievement of T.S.Eliot. P.XIX

2. Notes on Some Figures Behind T.S. Eliot 32

3.T.S.Eliot. P.3.

पारिवारिक परिवेश से अभिभूत शिशु इलियट-बोध से ही अत्यधिक उत्साही थे। प्रत्येक कार्य बड़ी लगन और तन्मयता के साथ करते थे। इलियट के चरित्र पर अपने पूर्वजों का प्रभाव पड़ा था। इसलिए वे बड़े प्रतिभा संपन्न थे और धार्मिक विचारों से प्रभावित भी।

शिक्षा

इलियट की प्रारंभिक शिक्षा सन्लुईस में स्थित स्मिथ अकादमी में हुई। उसके बाद उन्होंने मेसाचुसेट्स के मिल्टन अकादमी से स्नातकपूर्व शिक्षा प्राप्त की।

इलियट हारवार्ड में

जून सन् 1906 में इलियट हारवार्ड विश्वविद्यालय की प्रारंभिक परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। उनके प्रोटस्टेन्ट पुरखेनी ने ही उन्हें हारवार्ड पहुंचा दिया। यहां उन्होंने बी॰ए॰करने के बाद ग्रीक साहित्य में एम॰ए॰किया और शोध कार्य भी प्रारंभ किया। हारवार्ड में इलियट संवेदनशील और आत्मसीमित छात्र थे। उनकी इच्छाएं बिल्कुल वैयक्तिक थीं। वार्तालाप संयमित और शान्त थे। पाइप पीते थे और हमेशा अकेला रहना चाहते थे। वस्त्र धारण में उतनी सतर्कता नहीं थी[1]।"

इस प्रकार कालेज में इलियट का जीवन एक उच्चकुल परन्तु संयमित व्यक्ति का है। अपने आसपास के दृश्यों को वे निराले ढंग से देखा करते थे। उनकी तीक्ष्ण दृष्टि उनको चीरकर उनकी अन्तरात्मा को पकड़ने का सफल प्रयत्न करती थी। इसलिए अपने आसपास की वस्तुओं को वे हमेशा निरखकर उनसे

---

1. Twentieth Century Author - P.420.

प्रेरणा पाने का प्रयास करते थे । उनकी कविताएं इसका उदाहरण है । काव्य में बिंबों और प्रतीकों को चुनते वक्त उनका यह अनुभव सहायक होता था । जो कुछ वे देखते, उनकी गहरी छाप उनके मन पर पड़ी रही । अभी काव्य-यात्रा में यह उनका सहायक रहा ।

सान्तायन और बाबिट से सम्बन्ध

हारवार्ड का जीवन इलियट के लिए महत्वपूर्ण साबित हुआ । हारवार्ड महान विद्वानों और दार्शनिकों से अंकित विद्यापीठ था । वहां रहकर पढ़ने का सुअवसर इलियट को मिला । इलियट को काव्य जगत की ओर आकर करने में हारवार्ड के जीवन ने सबल योगदान किया है ।

हारवार्ड में उनका सम्बन्ध विलियम जेम्स, जार्ज सान्तायन, रोइस, बाबिट, कीटरेज्ज आदि प्रतिभा संपन्न साहित्यकारों से हुआ । सबसे यहां इलियट के व्यक्तित्व में गहरा परिवर्तन आया । ज्ञान की विभिन्न शाखाओं में प्रवीण ऐसे विद्वानों के बीच रहकर इलियट अध्ययन करते थे ।

यान्त्रिक-भौतिक दृष्टिकोण के अरस्तु के दर्शन का पुनराविष्कार करनेवालों में प्रमुख थे जार्ज सान्तायन ‖ GeorgeSantayana ‖ । कल्पना का तीव्र विरोध करनेवालों में प्रबल थे इर्विंग बाबिट ‖ Irwing Babbit ‖ । बाबिट ने इलियट को भारतीय दर्शन और संस्कृति की ओर आकृष्ट किया[1] ।*

---

1. It was Babbit who first directed Eliot's attention to the study of Sanskrit and Oriental religion that distrust for personality played a large part here. T.S.Eliot. P.37.

बाबिट के "मास्टेर्स आफ माडर्न क्रिटिसिज़्म (Masters of Modern French Criticism) से इलियट को अपने ऐतिहासिक अवबोध को विकसित करने की प्रेरणा मिली[1]।" इस ऐतिहासिक अवबोध ने उनके सम्पूर्ण काव्य चिंतन को प्रभावित किया है। आलोचना के मानदण्डों में इतिहास के अवबोध को इलियट ने स्वीकार किया है[2]।"

रसल से मुलाकात

1914 में एक हृत्व समय केलिए हारवार्ड में बरटन्ट रसल (

(प्रोफसर बनकर आये। वहां इलियट पर उनकी दृष्टि पडी। रसल भी उनसे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने इलियट के बारे में एक भोज में भाग लेते वक्त कहा कि वे बिल्कुल सभ्य मनुष्य हैं, श्रेष्ठ साहित्य का जानकार हैं, फ्रन्च साहित्य से काफी परिचित आदमी हैं[3]।"

विभिन्न भाषाओं का अध्ययन

हारवार्ड में रहकर इलियट ने ग्रीक, लेटिन, फ्रेन्च और आधुनिक भाषाओं का व्यापक अध्ययन किया। ग्रीक भाषा के प्रति उनका विशेष लगाव था। इलियट मानते थे कि ग्रीक की उपेक्षा करने पर सारा यूरोप अचेतन होगा

---

1. In Babbit's "Masters of Modern French Criticism" for example, he would have come across the notion of tradition as the constant adjustment of the experience of the past to meet the changing needs of the present. - T.S.Eliot . P.106.

2. Both Eliot and Babbit stressed the need for tradition and both in same sense or other felt that tradition is the embodiment of the same ultimate Kinship of man. - T.S.Eliot - Between Two Worlds - P.9.

3. Ottoline - P.257.

बारह साल की आयु में ही इलियट ने स्मिथ अकादमी में लेटिन और ग्रीक पढ़ना शुरु किया था । ग्रीक भाषा के अध्ययन से उन्हें एक प्रकार का मनोरंजन मिलता था । उनके अनुसार ग्रीक ऐसी एक महान भाषा है जिसमें दुनिया भर के विचार और भावों को अपने में समा लिया है[1]।"

हारवार्ड में ही दान्ते (Dante) के विचारों से इलियट विशेष आकृष्ट हुए । दान्ते का बहुत गहरा प्रभाव इलियट पर पड़ा है[2]।" उन्होंने सन् 1920 में "सेक्रड वुड" (Sacred Wood) में दान्ते के बारे में एक निबन्ध भी लिखा है । इसमें उन्होंने दान्ते को महान कवि माना है जिन्होंने अनुभूतियों को सशक्त रूप में अभिव्यक्त किया है[3]।" हारवार्ड में ही उन्होंने फ्रान्च, जर्मन और ग्रीज़ी साहित्य का गहन अध्ययन किया ।

इस समय इलियट का सम्बन्ध फ्रान्च प्रतीकवादी कवि लाफोर्ग (Jules Laforgue) की रचनाओं से हुआ । उन्हें इसकी प्रेरणा अरतर साइमण्स (Arthur Symons) की पुस्तक "दि सिंबोलिस्ट मूवमेन्ट इन लिटरेचर (The Symbolist Movement in Literature) ने दी थी । प्रतीकवादियों से प्रभावित होते हुए भी इलियट ने उनमें से किसी का अनुकरण नहीं किया । काव्य क्षेत्र में अपने व्यक्तित्व को स्वतन्त्र रखने में वे जागरुक थे । फिर भी इलियट ने

1.I still think it a much greater language a language which has never been surpassed as a vehicle for the fullest range and the finest shade of thought and feeling.
Notes on some Figures Behind - T.S.Eliot . P.60.

2.T.S.Eliot - P.5

3.Dante is the most comprehensive and the most ordered presentation of emotions that has ever been made. -
The Sacred Wood.

यह स्वीकार किया है कि उनके कवि व्यक्तित्व पर लाफार्ग का प्रभाव पड़ा है[1]।" 1910-12 के बीच रचित "ए पोर्टराइट आफ ए लेडी (A Portrait of A Lady)" दि लव् सोङ्स आफ जे अल्फ्रेड प्रुफोक (The Love Songs of J.Alfred Preifrock) आदि इसके उदाहरण हैं।

शोध कार्य

इलियट ने सन् 1911 में अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए.डिग्री प्राप्त की। तत्पश्चात् उन्होंने पी.एच.डी. केलिए शोधकार्य प्रारंभ किया। दर्शनशास्त्र के वे अध्येता तो थे ही। दार्शनिक अभिरुचि ने उन्हें एफ.एच्.ब्राडली (F.H.Bradly) के दर्शन तक पहुंचा दिया। "क्लोलिड्ज एण्ड एक्सपीरियन्स इन दि फिलोसफी आफ एफ.एच्.ब्राडली (Knowledge and Experience in the Philosophy of F.H.Bradly) विषय पर वे शोध करने लगे। सन् 1914 में इसकेलिए सामग्री जुटाने केलिए वे विदेश भी गये थे। लेकिन इस समय प्रथम विश्व युद्ध छिड़ गया और वे इसे आगे नहीं ले सके।

इलियट पर भारतीय दर्शन का प्रभाव

इलियट के काव्य और काव्य चिंतन का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि उनपर भारतीय दर्शन का व्यापक प्रभाव पड़ा है। दि वेस्ट लेन्ड (The Waste Land) और फोर क्वार्ट्टस (Four Quartets) में भारतीय धर्म और रहस्यवादी चिंतन का प्रभाव परिलक्षित होता है। बर्न्ड नोर्टम (Burnt Norton) के प्रारंभ में इस प्रकार भारतीय बिंब को प्रस्तुत किया गया है।

1.Jules Laforgue, to whomI owe more tnan to any one poet in my Language - To Criticise the Criticize - P.27.

तालाब के पानी पर तैरनेवाले कमल के माध्यम से इसका उद्घाटन हुआ है । इसका बौद्ध दर्शन के साथ सम्बन्ध है । दि ड्राई सालवेजस [The Dry Salvages] में हिन्दु धर्म के त्रिमूर्ति [Trinity] के ब्रह्म-विष्णु-शिव का उल्लेख हुआ है[1]।" उसके तीसरे भाग में भगवद्गीता से उद्धरण मिलता है । जहाँ कृष्ण अर्जुन को गीता सुनाते हैं[2]।"

भारतीय दर्शन की एक बड़ी विशेषता है उसके पुनर्जन्म-सिद्धान्त । इलियट की कविताओं में इसका स्पष्ट चित्रण उपलब्ध नहीं है तो भी यत्र तत्र उसका उल्लेख हुआ है । "फोर क्वार्टेटस" में यात्रा पर निकलनेवाले और लक्ष्य पर पहुंचनेवाले यात्रियों में अन्तर है । यात्रा की शुरुवात करनेवाले नहीं है लक्ष्य पर पहुंचनेवाले । उनमें जो परिवर्तन हुआ वही आध्यात्मिक उन्नति है । अन्तिम लक्ष्य तो अर्ह से मुक्ति है । इस प्रकार भारतीय दर्शन की अमिट छाप इलियट पर पड़ी है ।

इलियट पर भारतीयदर्शन और चिंतन का प्रभाव कैसा पड़ा यह विचारणीय विषय है । सन्त लुईस में जहाँ इलियट ने अपना प्रारंभिक जीवन बिताया भारतीय दर्शन से प्रभावित अनेक दार्शनिक विद्यमान थे । सन्त लुईस फिलोसफिकल मूव्मेन्ट [St.Louis Philosophical Movement] में अनेक ऐसे लोग शामिल थे । जिनके विचारों से संपर्क में आनेका सुयोग इलियट को मिला था ।

1.Time the destroyer is time the preserver - Four Quartets -P.4
2.And do not think of the fruit of action - Four Quartets-P.42.

इलियट जब हारवार्ड में आये तो वह समय हारवार्ड का सुवर्णकाल था । विलियम जेम्स, सान्टायन, इर्विंग बाबिट, रोयस, जार्ज लाममान आदि विद्वान वहां भाषण देने आया करते थे । पौरस्त्य भाषाओं के जाने माने विद्वान चार्ल्स रोकवेल, लाममान और जेम्स वुड्स संस्कृत और पाली में पढ़ाते थे । स्नातकोत्तर शिक्षा के बाद सन् 1910 में इलियट पेरिस चले गये जो दूसरा संस्कृत विद्यापीठ माना जाता था ।

सन् 1911 में इलियट हारवार्ड लौटे आये और चार्ल्स रोकवेल लानमान [Charles Lanman] के इन्डिक फिलोलजी कोर्स [Indic Philology Course] के अध्ययन में लग गये । बाबिट के भाषणों में भारतीय वेदों और पुराणों विशेषत: बौद्धदर्शन का अच्छा खासा प्रभाव लक्षित होता था । जेम्स वुड्स जो पतंजलि की योग पद्धति पर काम कर रहे थे, भी इलियट को पढ़ाते थे । आफ्टर स्ट्रेंज गॉड्स [After strange Gods] में इलियट ने भारतीय वेदों और पुराणों का अध्ययन करने का अपने उद्देश्य को व्यक्त किया है । संस्कृत और पतंजलि के अध्ययन ने उसे आध्यात्मिकता की ओर आकर्षित किया है । पाश्चात्य चिंतन और दर्शन भारतीय चिंतन और दर्शन के सामने नगण्य है[1]।"

इलियट ने खुद स्वीकार किया है कि उनकी कविताओं पर भारतीय दर्शन और चिंतन का गहरा प्रभाव पड़ा है[2]।" उनकी ऐसी एक कविता है

---

1. Two years spent in the study of Sanskrit under Charles Lanman, and a year in the mazes of Patanjali's metaphysics under the guidance of James Woods left me in a state of enlightened mystification. - After Strange Gods - P.40.

2. Long ago I studied the ancient Indian languages and while I was chiefly interested at that time in philosophy. I read a little poetry too ; and I know that my own poetry shows the infludence of Indian thought and sensibility.

Notes Towards a Definition of Culture . P.113.

"टु दि इण्डियन्स् हू डाइड इन आफ्रीका (To the Indians who died in Africa) जिसमें उनकी भारतीय संस्कृति और दर्शन की पहुंच दृष्टिगत होती है। कर्म-फल सम्बन्धी भारतीय चिंतन का स्पष्ट रूप इस कविता की अन्तिम पंक्तियों में मिलता है[1]।" इलियट भारतीय जीवन और दर्शन से बहुत प्रभावित थे। अपने काव्यसर्जन में उन्हें इससे प्रेरणा भी मिली है।

एज़रा पाउण्ड से साक्षात्कार

इलियट लन्दन में अध्यापक का काम करते थे। उन्हीं दिनों 22 सितंबर सन् 1914 में हारवार्ड के उनके सहपाठी कोन्राड ऐकन (Conrad Aiken) ने उनकी मुलाकात एज़रा पाउण्ड (Ezra Pound) से करायी। यह एक अर्थपूर्ण मैत्री का अभ्युदय था। एज़रा पाउण्ड एक सशक्त बिंबवादी कवि थे। दो सशक्त प्रतिभाओं का सम्मुखीकरण। इस साक्षात्कार के संबंध में सन् 1915 में पाउण्ड ने अपने मित्र हैरिट मन्रो को लिखा था[2]।"

पाउण्ड के प्रभाव में आने के बाद ही इलियट की कवि-प्रतिभा विकास की पराकाष्ठा पर पहुंची[3]।" दोनों के सहयोग का सत्परिणाम विश्व विदित है

---

1. This was not your Land, or our, but a village in the Middle Lands. And those who go home tell the same story of you of action with a common purpose, action. None the less fruitful if neither you nor we know, until the moment after death, what is the fruit of action. -Collected Poems - P.127.
2. He is the only American I knew who has made what I can call adequate preperation for writing. He has actually trained himself and modernized himself on his own. Who are the Major American Writers - P. 197.
3. Ezra Pound described Eliot as the poet who had modernized himself on his own.T.S.Eliot - P.32.

कवि इलियट के व्यायन में पाउण्ड का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है[1]।" पाउण्ड स्वयं एक महान कवि थे और उन्होंने अन्य कवियों को पर्याप्त प्रोत्साहन भी दिया है[2]।" जो भी कवि उनके संपर्क में आये हैं वे उनसे अवश्य प्रभावित हुए है । इलियट के कवि या सर्जक व्यक्तित्व के व्यायन में इसलिए आलोचक पाउण्ड के योगदान को महत्वपूर्ण मानते है[3]।" पाउण्ड ने इलियट को काव्यसर्जन और आलोचना प्रक्रिया में काफी प्रेरणा प्रदान की है ।"दि वेस्ट लैंड" ‖The Waste Land‖ को काव्य रूप में प्रस्तुत करने केलिए पाउण्ड ने इलियट की बडी सहायता की । इलियट की उपलब्धियों का एक शक्तिशाली प्रेरक रहा पाउण्ड । उन्होंने इलियट को इंगलण्ड में रहने की प्रेरणा दी । पाउण्ड इलियट के मार्गदर्शक रहे[4]।"

इलियट और ब्राडली

इलियट के काव्य चिंतन पर एफ॰एच॰ब्राडली ने काफी प्रभाव डाला है । अनुभव साकल्य ‖Totality of Experience‖ से सम्बन्धित ब्राडली के विचारों को इलियट ने पूर्णतया स्वीकार किया है । विघटित संवेदनक्षमता, एकीकृत संवेदनाशक्ति एवं परंपरा के अवबोध के सम्बन्ध में इलियट के सिद्धान्त ब्राडली के विचारों का स्मरण दिलाते है । अनुभव की एकता में ब्राडली का अटूट विश्वास था । उनके दार्शनिक चिंतन के समग्र अध्ययन से इलियट को तीन

1.It was Pound who sharpened his appreciation of Dante and Medival Halian Poets- T.S.Eliot - P.57.
2.T.S.Eliot -P.31.
3.It is no secret that Ezra Pound exercised a very powerful influence upon T.S.Eliot. - T.S.Eliot. P.28.
4.The guiding spirit behind Eliot's first book of poems had been that of Pound. -T.S.Eliot - P.79.

विशेष बातें उपलब्ध हुई - इतिहास बोध काव्यबोध एवं व्यक्तित्व बोध । इन्हीं पर इलियट का काव्य चिंतन आधारित है[1]।"

इलियट और बोदलयर

बोदलयर (Charles Baudelaire) के दर्शन और काव्य चिंतन से इलियट विशेष प्रभावित हुए । उनके निकट आकर इलियट ने अपनी सर्जन-प्रक्रिया केलिए नयी राह ढूँढ निकालने में सक्षम हो गये । उनका काव्य चिंतन इतना गहरा और व्यापक था कि कोई भी कवि उनके प्रभाव में सहज रूप में आ सकता था । अपनी नयी उद्भावनाओं और परिकल्पनाओं के द्वारा बोदलयर ने तत्कालीन और आनेवाली पीढ़ी के कवियों को बहुत ही प्रभावित किया ।

बोदलयर की कला आधुनिक युग में मनुष्य की अवस्था का अवबोध प्रकट करती है । इससे इलियट ने सीखा कि आधुनिक मानव की संवेदनाओं की सहज अभिव्यक्ति केलिए नये भाषिक-सन्दर्भ की आवश्यकता है । अपने कवि-व्यक्तित्व को सुरक्षित रखने के लिए इस प्रकार अपनी एक नयी भाषा एवं नये शब्दों का सर्जन आवश्यक है[2]।" यही इलियट की धारणा रही जो उन्हें बोदलयर से प्राप्त हुई ।

इलियट के लिए बोदलयर मात्र कवि नहीं थे । वे मानते थे कि बोदलयर की महानता का कारण भलाई और बुराई के बारे में उनका गहरा अवबोध था ।

---

1. He used to say that he had learned how to write prose from the example of F.H.Bradley. T.S.Eliot - P.105.
2. The poet's first obligation is to create a language that is his, in order not to loose his identity as a poet. - T.S.Eliot. The Man And His Work. P.300.

इलियट ने ला फ्रान्स लिबरे (La France Libre) के साथ साक्षात्कार में कहा था कि यदि बोदलयर से उनका परिचय नहीं होता तो वे एक साहित्यकार नहीं बनते[1]।" अंग्रेज़ी साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि फ्रान्च साहित्यकारों से ही आधुनिक अंग्रेज़ी साहित्यकारों को अधिकतर प्रेरणा मिली है ।

इलियट ने बोदलयर के काव्य चिंतन का अध्ययन किया और उन्हें मालूम हुआ कि साहित्यिक विकास में कविता और आलोचना दोनों एक दूसरे के पूरक हैं । कवि ही आलोचक हो सकता है । आलोचक और कवि के बीच गहरा सम्बन्ध है । इलियट ने बाद में यह स्पष्ट कहा कि एक सच्चा आलोचक कवि भी होता है । इसकी प्रेरणा उन्हें बोदलयर से मिली थी । इस प्रकार फ्रान्च कवियों से इलियट ने जो काव्य चिंतन प्राप्त किया वह अन्य कवियों को आधार रहा[2]।" उनकी आलोचना और कविता दोनों पर यह प्रभाव दिखाई पड़ता है ।

दार्शनिक तीक्ष्णता के कारण इलियट को प्रभावित करनेवाले कवि थे बोदलयर । बोदलयर की कविता के आधार पर ही उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि एक महान कवि स्वयं चमकता है, साथ ही वह अपने युग का आविष्कार करता है । युग के बारे में गहरा अवबोध बोदलयर की कविता में है

---

1. If he had not discovered Baudelaire and the lineage of Baudelairian poets. he believed that he would not have become a writer. -T.S.Eliot. The Man And his Work. P-301.

2. But no one has yet studied an art which Eliot learned from the French poet and perfected in accordance with his own aptitude and talent. It is the art of evoking a memory, and often a distant memory, deliberating and willfully, the art of associating the sensation of their memory with the spirit and the intellect and at the same time excluding all sentimentality. -T.S.Eliot - The Man And His Work. P.314-15.

जिसने उनकी कविताओं को जीवनानुभवों से संयुक्त कर दिया । आधुनिक संस्कृति, नगर जीवन, मशीनों की प्रगति और भौतिक यथार्थ मनुष्य को एकान्तता की ओर ढकेलते हैं, परिणाम स्वरूप उत्पन्न होनेवाला आत्म संघर्ष ही बोदलयर की कविता का विषय है । इलियट की कविताओं में भी तत्संबन्धी अनेक बातें उपलब्ध होती है । "दि होलो मेन" (The Hallow Men) "दि वेस्ट लेन्ड" आदि कविताएं इसके उदाहरण है ।

इलियट का वैवाहिक जीवन

1913 में इलियट हारवार्ड विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग में सहायक-अध्यापक का कार्य संभाल रहे थे । बाद में वे "विश्वविद्यालय के दार्शनिक संघ" (University Philosophical Movement) के अध्यक्ष बने 1914 में जब वे मारबुर्ग विश्वविद्यालय में अध्यापन कर रहे थे । तब प्रथम विश्वयुद्ध छिड गया । इसलिए वे इंगलेंड वापस आये । 26 जून सन् 1915 में विक्टिया हार्ईवुड से उनकी मुलाकात हुई । बाद में उनसे उनका विवाह हुआ । उसी वर्ष वे लन्दन में एक बोइस स्कूल में अध्यापक नियुक्त हुए । लेकिन यह कार्य उन्हें पसन्द नहीं था । इसलिए वे बैंक में काम करने लगे । उनकी साहित्यिक उपलब्धियों ने उन्हें फेबर एण्ड फेबर (Faber And Faber) का निदेशक बना दिया । फेबर में रहते हुए उन्होंने साहित्यिक क्षेत्र में और अधिक उत्साह के साथ काम किया । उन्हें यश मिला । फेबर ने ही इलियट की साहित्यिक उपलब्धियों को विकसित किया है ।

परिवर्तन

सन् 1928 में जब इलियट समसामयिक स्वच्छन्दतावादी, उदारवादी एवं धर्म निरपेक्ष एहिक प्रवृत्तियों पर कठोर आघात कर चुके थे। बाद में 28 नवंबर सन् 1928 में फोर लान्सलट ऐंड्रूस (For Lancelot Andrews) नामक आलोचनात्मक रचना में उन्होंने अपने को साहित्य में क्लासिक, राजनीति में राजतंत्रवादी एवं धर्म में एंग्लो-कैथलिक घोषित किया। उनकी मान्यता रही कि राज्य में सुव्यवस्था के लिए चर्च आवश्यक है, और अस्थिर मानवता केलिए सशक्त शासन की आवश्यकता है।

"दि वेस्ट लैंड" और "होलो मैन" में इलियट निराशाग्रस्त थे, लेकिन एश वेनस्डे (Ash Wednesday) में आकर उनका दृष्टिकोण बदल जाता है। यहाँ वे जीवन के प्रति एक स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाते हैं। अपने जीवन में घटित इस महान परिवर्तन का प्रभाव इलियट की तत्कालीन रचनाओं पर पड़ा है।

प्रसिद्धि की ओर

सन् 1932-33 में इलियट हारवार्ड में चार्ल्स इलियट नोर्टन (Charles Eliot Norton) के सम्बन्ध में भाषण देने केलिए आमन्त्रित किये गये। साहित्यिक क्षेत्र में इलियट की प्रतिष्ठा अनुदिन बढ़ रही थी। देश-देशान्तर में वे विख्यात हो चुके थे। उनकी रचनाओं का प्रचार विश्व भर में हो रहा था। सन् 1948 में उन्हें नोबल पुरस्कार मिला। 10 दिसंबर सन् 1948 में नोबल पुरस्कार ग्रहण के समारोह में भाषणदाताओं ने कहा कि इलियट आधुनिक

For Lancelot Andrews Preface 1

साहित्य के महान नेता है।[1] उसी वर्ष इंगलण्ड के राजा जार्ज पंचम ने उन्हें "आर्डर आफ मेरिट" (Order of Merit) भी प्रदान किया।

इलियट की मृत्यु

22 जनुवरी, 1947 में इलियट की पत्नी विवियन की मृत्यु हुई। फिर दस वर्ष तक इलियट अकेले रहे। 10 जनुवरी 1957 में वे वरेरिया फ्लेचर को विवाह करके पारिवारिक जीवन बिताने लगे। उनकी कोई सन्तान नहीं थी। अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा को वे निरंतर बढ़ाते रहे। साहित्यिक रचना में तल्लीन रहे। 4 जनुवरी सन् 1965 में उनकी मृत्यु हुई।

इलियट का साहित्यिक व्यक्तित्व

इलियट का व्यक्तित्व अत्यन्त विचित्र रहा। उनकी सर्जन शक्ति साहित्य के विविध पहलुओं में कार्यरत हुई। कविता, नाटक, समीक्षा इन सबमें उनका समान अधिकार रहा। उनकी प्रमुख काव्य रचनाएं निम्नलिखित है।

(1) इलियट के साहित्यिक सर्जन का प्रारंभ "हारवार्ड एडवोकेट" (Harward Advocate) पत्रिका में प्रकाशित "सलीम" नामक कविता के साथ हुवा। यहीं से वे निरंतर विकासशील रहे।

(2) उन्होंने सन् 1909 में "दि पोर्टराइट आफ ए लेडी" की रचना की। इसमें अतृप्त निरर्थक स्त्री-पुरुष सम्बन्ध का प्रश्न उठाया गया है। स्त्री-पुरुष के बीच संवेदना के अभाव के कारण उदित समस्याओं पर इसमें प्रकाश डाला गया है।

---

1. At the cremony of Nobel Prize (on 10 December 1948) he was (Eliot) described as a leader and champion of a new period in the long history of the World's Poetry. T.S.Eliot-P.285.

(3) 1914 में प्रकाशित "दि लव् सोङ·स आफ जे आल्फ्रड प्रुफ्रोक" में भी समस्या प्राय: यही है । भावनाओं में स्थित यथार्थ के प्रति मोह तथा भय एवं अकेलेपन से मुक्त न हो पाने से दुखित मन का विलाप इसका विषय है । जीवन की गहराई में न जाकर उसको एक टी स्पून से मापने का प्रयास प्रुफ्रोक करता है[1]।"

(4) 1914 में प्रकाशित "जरोन्शियन" (Gerontion) काव्य में इलियट ने आधुनिक जीवन की निरर्थकता तथा क्लान्तता का सटीक चित्रण किया है । इस निरर्थकता और निराशा से ईसा ही मुक्ति प्रदान कर सकता है ऐसा ही उनका दृष्टिकोण है ।

(5) इलियट की सबसे प्रसिद्ध और प्रमुख रचना "दि वेस्ट लैंड" सन् 1922 में प्रकाशित हुई । अपने में बन्दी बने अनेक पात्रों को इसमें प्रस्तुत किया गया है । अर्थ और मूल्य को खोकर चकनाचूर हुए आधुनिक मानव की दुरवस्था का चित्रण है ।

(6) "दि होलो मेन" का प्रकाशन सन् 1925 में हुआ । इसमें आधुनिक जीवन की निरर्थकता तनाव और शून्यता का चित्रण है ।

(7) "एश वेनस्डे" में आकर इलियट आशावादी दृष्टिगत होते हैं । इसमें आत्मशोध, पश्चाताप एवं शुद्धीकरण और प्रार्थना की प्रक्रिया है । मृत्यु जीवन की चरम सीमा नहीं है । ईश्वर के हित को मानना ही मानव की सफलता और शान्ति का निदान है । इस सिद्धान्त को इस कृति में काव्यरूप दिया गया है ।

---

1. I have measured out my life with Teaspoons.Collected Poems - P.12.

(8) "एरियल पोयम्स" में भी इसी आशा का स्वर है । ए सोङ· आफ सेम्स, "जेर्नी आफ दि मागी" "मरीना" आदि कविताएं - पुनर्जन्म या पुनरुत्थान की अभिव्यक्ति करती हैं ।

(9) "फोर क्वार्टेट्स" इलियट का अन्तिम श्रेष्ठ काव्य संग्रह है । यह एक प्रकार से उनके जीवन का भरत वाक्य है । आत्मान्वेषण-अस्तित्व की तलाश ही इसका विषय है । कवि के मन में उमड़नेवाले आध्यात्मिक विचारों की श्रृंखला है । व्यक्ति और समाज के आध्यात्मिक स्वभाव और आन्तरिक जीवन के बारे में चिंतन इसमें उपलब्ध होता है[1]।"

इलियट का कवि-व्यक्तित्व

काव्य सर्जन सम्बन्धी अपने विचारों को इलियट ने खुलकर प्रकट किया है । ये यत्र तत्र उनकी कविताओं में भी उपलब्ध है । काव्यसर्जन में अनुभूतियों के प्रति कवि की मानसिकता काफी सराहनीय रही है[2]।" सर्जक के दायित्व के बारे में भी उन्हें अपना दृष्टिकोण था । इलियट का अभिमत है कि भूत और वर्तमान को साथ-साथ देखना है साथ ही उसके अन्तर पर भी ज़रूर दृष्टि डालनी चाहिए[3]।"

---

1. The inner freedom from the practical desire. The release from action and suffering, release from the inner. And the outer compulsion. Yet surrounded, By a Grace of sense, a white Light Still morning. Burnt Norton - P.187.
2. The identity of the poem and indeed of the poet is in that sense factitions but in this constant dialogue, between his sensitivity towards experience and his instinct for organization can be discovered the roots of Eliot's Poetry. - T.S.Eliot P.45.
3. We need an eye which can see the past in its place with its definite difference from the present, and yet so lively that it shall be as present to us as the present. This is the creative eye. - The Sacred Wood - P.77.

इलियट के कवि व्यक्तित्व और आलोचक व्यक्तित्व के बीच गहरा सम्बन्ध है । उन्होंने काव्यात्मक मानसिकता से ही अपने आलोचक व्यक्तित्व को विकसित किया है । इसलिए उनकी कविताओं में आलोचना का पक्ष भी परिलक्षित होता है[1]।" इसलिए यह स्पष्ट है कि अच्छे कवि ही श्रेष्ठ आलोचक बन जाते हैं ।

इलियट नाटककार के रूप में

नाटक के सम्बन्ध में इलियट स्पष्ट दृष्टिकोण रखते थे । नाटक को ही वह सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक विधा मानते हैं । अभिव्यक्ति की चरम सीमा उनके अनुसार नाटक है[2]।" इलियट का नाट्य सम्बन्धी दृष्टिकोण उनके काव्य संकल्प से भिन्न है । नाटक के पात्र या तो अपने आत्म निर्वासन को स्वीकार कर लेते हैं या उससे मुक्त होने केलिए संघर्ष करते हैं ।

उनकी प्रसिद्ध नाट्य रचना "मर्डर इन कथीड्रल" सन् 1935 में प्रकाशित हुई । इसमें सन्त थोमस के माध्यम से इसी की ओर संकेत किया गया है । 1937 में प्रकाशित "दि फाम्मिली रीयुनियन" में भी इसी मानव संबन्धों की कथा कही गयी है । "दि कोक्टेल पार्टी" में आपसी समझौता का चित्रण है । इस नाटक में आत्मनिर्वासन की प्रक्रिया है । इस नाटक पर इलियट को बड़ी

---

1. This criticism springs from his poetic sensibility and his poetry is best explained in terms of his criticism. British Writers - P.162.
2. Eliot talked about theatre as a medium for the expression of the conciousness of a People. - T.S.Eliot . P.269.

प्रशंसा मिली[1]।" "दि कोन्फिडन्शल क्लर्क" [The Confidential Clerk] में पात्र अन्तर्लोगत्वा धर्म की ओर वापस आते हैं। "दैनिक जीवन का सुन्दर चित्रण है। दि एल्डर स्टेट्समान [The Elder Statesman] में आकर इस अलगाव के तथ्य का लोप हो जाता है। स्त्री-पुरुष सम्बन्ध को यथार्थ और साधारण धरातल पर चित्रित किया गया है।

समीक्षक इलियट

इलियट के असाधारण व्यक्तित्व का पूर्ण विकास उनके आलोचना साहित्य में हुआ है। इलियट श्रेष्ठ कवि से सफल नाटककार हैं और सशक्त आलोचक भी। अपनी काव्य संबन्धी धारणाओं को, सर्जन प्रक्रिया सम्बन्धी विचारों को उन्होंने अनेक निबन्धों में प्रस्तुत किया है। आलोचना के बारे में इलियट का अपना अभिमत है। सच्चा आलोचक कला की वर्तमान समस्याओं को परंपरा की सहायता से सुलझाने का प्रयास करता है[2]।" हर जाति और हर राष्ट्र का अपना आलोचक मन है, उसका विकास भी होता है।

इलियट आलोचना को अपने काव्यसर्जन की क्षमता को बढ़ाने का साधन मानते हैं। साहित्यिक आलोचना तो निरन्तर अन्वेषण की प्रक्रिया है जो साहित्यिक धरातल का आविष्कार करती है[3]।" इस तथ्य से इलियट भी

---

1. The one great play by contemporary dramatist now to be seen in England - T.S.Eliot - P.47.

2. The important critic is the person who is absorbed in the present problems of art, and who wishes to bring the forces of the past to bear upon the solutions of these problems. - The Sacred Wood - P.32.

काफी सहमत है । क्योंकि सच्चा कवि आलोचक भी होता है यही उनकी धारणा रही । आलोचना उनके अनुसार निरन्तर क्रियाशील कार्य है ।

1920 में प्रकाशित "दि सेक्रडवुड" (The Sacred Wood) में उन्होंने अपने "परंपरा और वैयक्तिक प्रतिभा" नामक महत्वपूर्ण निबन्ध प्रकाशित किया । इसमें परंपरा के अवबोध की महत्ता का उल्लेख किया गया है । उसी प्रकार "हेमलेट एण्ड इट्स प्रोब्लेम्स्" नामक निबन्ध के द्वारा "वस्तुगत सह सम्बन्ध" नामक मौलिक सिद्धान्त का भी प्रतिपादन किया । दान्ते और मिल्टन से सम्बन्धित अपने विचारों को" ओन पोयट्री एण्ड पोयट्स" (On Poe And Poets) में प्रकट किया । इसका प्रकाशन 1957 में हुआ ।

1932 में प्रकाशित "दि यूज़ आफ क्रिटिसिज़्म" (The Use of Poetry and the use of Criticism) आलोचनात्मक ग्रन्थ में काव्य और समीक्षा संबन्धी विभिन्न पहलुओं पर गंभीर चर्चा प्रस्तुत की गई है । "पोयट्री एण्ड ड्रामा", (Poetry and Drama) "थ्री वोइसिज़ आफ पोयट्री" (Three voices of Poetry) आदि पुस्तकों में काव्य संबन्धी विभिन्न विषयों पर इलियट के विचार प्रतिपादित हैं ।

नाटक विशेषतया पद्य नाटक पर उनके विचार महत्वपूर्ण हैं । नोट्स टुवर्ड्स दि डेफिनिशन आफ कल्चर (Notes towards the Definition of Culture) (1948) में संस्कृति और काव्य के सम्बन्ध पर प्रकाश डाला गया है । "टु क्रिटिसाइज दि क्रिटिक्स" (To Criticise the critic) में काव्यास्वादन सम्बन्धी बातों पर विचार किया है । "दि सान्सलट एग्ल्स" में

काव्य शैली पर चर्चा की है । "आफ्टर स्ट्रेन्ज गॉड्स" (1914) तथा सेलक्टेड एसाइज़ (Sellected Essays) भी उनके समीक्षात्मक ग्रन्थ हैं ।

संपादक इलियट

इलियट के सर्जकत्व का एक और पहलु है उनका सम्पादक व्यक्तित्व । संपादक के रूप में इलियट की सफलता निर्विवाद है । हारवार्ड में "एडवोकेट" के संपादक के रूप में उन्होंने इस कार्य की शुरुवात की । बाद में "फेबर एण्ड फेबर" के निदेशक बने । 1922 में उन्होंने क्रेटीरियम" (Criterion) नामक पत्रिका का संपादकत्व निभाया । संपादनकार्य में आकर इलियट ने अपने काव्य-तथा आलोचना संबन्धी दृष्टिकोण को और विकसित किया । अनेक साहित्यकारों को सर्जन के प्रति आकृष्ट करने का प्रयास भी उन्होंने यहाँ से किया । अनेक विश्व विख्यात साहित्यकारों के संपर्क में आने का सुअवसर भी इस संपादक के क्षेत्र में उन्हें मिला ।

वक्ता

वक्ता के रूप में भी इलियट प्रसिद्ध हैं । हारवार्ड में उन्होंने अनेक व्याख्यान दिये हैं । उनके अनेक व्याख्यान पुस्तकाकार प्रकाशित हुए हैं । हवाट इज़ ए क्लासिक (What is a Classic ?) फङ्शन आफ पोयट्री (Function of Poetry) आदि उनके महत्वपूर्ण भाषणों का संग्रह है । उन भाषणों में इलियट की वक्तृत्व कला की प्रभाविष्णुता स्वयं प्रकट होती है । काव्य सिद्धान्तों के विवेचन केलिए इलियट अपने भाषणों का उपयोग करते थे ।

कलिज तथा विश्व विद्यालय में उन्होंने धर्म, संस्कृति, मानव तथा साहित्य सम्बन्धी अनेक पहलुओं पर काफी विस्तृत भाषण दिये हैं । इसके द्वारा वे अनेक लोगों को अपनी ओर-अपने काव्य एवं आलोचना साहित्य की ओर आकर्षित करते थे ।

क्लासिकीय मानसिकता

इलियट की क्लासिकीय मानसिकता काफी महत्त्वपूर्ण है । अपने को क्लासिक घोषित करने के पीछे परंपरा और साहित्यिक मूल्यों के प्रति उनका अटूट विश्वास ही निहित है । बीसवीं शती के प्रमुख समीक्षक तथा नव समीक्षा (New Criticism) के वक्ता के रूप में वे मशहुर हुए । साहित्य में परंपरा का महत्व और सनातन मानदण्डों की प्रधानता को इलियट ने रेखांकित किया । विघटित संवेदनशक्ति (Dissociation of Sensibility) और वस्तुगत सह सम्बन्ध (Objective-Co-relative) का निरूपण भी उनको क्लासिक बनाते हैं ।

कवि से कविता की ओर, कविता के तथ्य से अभिव्यक्ति की ओर, रोमांगत स्थूल दृष्टिकोण से सूक्ष्म दृष्टिकोण की ओर सर्जन प्रक्रिया का प्रसारण इलियट के काव्य चिंतन के तीन मोड हैं । वे काल्पनिक और अन्तर्निष्ठ कविता का विरोध करते थे । परंपरा के ठोस हिमायती इलियट ने व्यक्ति निरपेक्ष कविता पर बल दिया ।

इलियट के मन में क्लासिक कवि के बारे में गंभीर विचार रहे हैं । परंपरा की पृष्ठभूमि में ही एक कवि क्लासिक हो सकता है । काव्य की

प्रौढता भी इसी परंपरा के अवबोध पर निर्भर करती है । क्लासिक के विकास के लिए प्रौढ सभ्यता की आवश्यकता है । उसी प्रकार प्रौढ भाषा और प्रौढ साहित्य प्रौढ मन से होता है[1]।" साहित्य प्रौढ मन की उपलब्धि है । मन की प्रौढता, भाषा की प्रौढ़ता, प्रौढ स्वभाव, प्रौढ शैली आदि एक क्लासिक को निर्धारित करते हैं ।

क्लासिक कवि साहित्य को रूप ही नहीं देता बल्कि समयानुकूल भाषा का निर्माण भी करता है[2]।" क्योंकि उसके समय की भाषा वास्तव में अपने में पूर्ण होती है । अर्थात् एक क्लासिक को युग की भाषा का आविष्कार करना चाहिए । युग की भाषा पूर्ण होती है । सृष्टि की सफलता केलिए यह अनिवार्य होती है ।

इलियट के आलोचक व्यक्तित्व ने संपूर्ण पश्चिमी काव्य चिंतन को परिवर्तित कर डाला । कवि और आलोचक के बीच सुदृढ़ सम्बन्ध बतानेवाले इलियट ने अपने कवि व्यक्तित्व के विकास में आलोचक व्यक्तित्व के महत्त्वपूर्ण योगदान की मुक्तकण्ठ से स्वीकृति दी है । वाल्टर अलन लिखते हैं कि इलियट एक महान समीक्षक है । उनकी समीक्षा कवि के रूप में उनकी प्रगति पर प्रकाश

1.A classic can only occur when a civilization is mature, when a language and literature are mature, and it must be the work of a mture mind. It is the importance of that civilization and ofthat language, as well as the comprehensiveners of the mind of the individual poet, which gives the universality.- What is Classic- P.10.

2.But there is no doubt that he changed the language of philosophy and he who changes a language changes what the language can say.

डालती है । उनके कवि कर्म की उपनिर्मिति के रूप में ही उनकी समीक्षा वर्तमान है । उनकी कविता को ध्यान में रखकर ही समीक्षा का अध्ययन होना चाहिए[1]।"

काव्य के बारे में इलियट का अपना मत है । उनके अनुसार कला में कलात्मक भाव की अभिव्यक्ति होती है । काव्यमें बिंबों का अनन्य स्थान है । बिंबों के माध्यम से अपने भाव का उचित प्रेषण संभव होता है । उनकी तीव्रता और अर्थ सन्दर्भ काव्य को सशक्त बनाते हैं । और उसके सौन्दर्य को बढ़ाते हैं । असंख्य अनुभवों का सम्मिश्रित गुंजन इलियट की कविता में उपलब्ध होता है । अनुभव साकल्य से उनका काव्य अत्यन्त परिचित हो जाता है ।

बीसवीं शती के समूचे कवियों में इलियट ने सम्य की सनातनता को अनुभव साकल्य की महत्ता को विशेष महत्व दिया है । इलियट के कवि व्यक्तित्व और आलोचक व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों के व्यापक अध्ययन के बाद रोबर्ट सेनरस्ट मे लिखा आधुनिक कवियों पर इलियट का गहरा प्रभाव है । बीसवीं शती में इलियट के समान कोई कवि नहीं जिसने काव्य के प्रति पाठकों को इतना जागृत किया है[2]।"

1.Mr.Eliot is often a great critic, his criticism gains its especial value from the light it throws on his progress as a poet, his criticism exists as by product of his work as a poet and must always be read with his own poetry kept firmly in mind. - Writers on Writing - P.3.

2.Eliot was the originater of vigourous poetic style as far reaching, in its influence upon the poets of today. No Poet of the twenteeth century has more successfully awakened men to the sublime tritense of their condition. -T.S.Eliot- A Memoir - P.12.

इलियट के व्यक्तित्व और कृतित्व का विस्तृत अध्ययन के पश्चात् हम इस निर्णय पर पहुंचते हैं कि जीवन के प्रथम चरण से वे अत्यन्त उत्साही और परिश्रमी व्यक्ति रहे । पुश्तैनी से उपलब्ध काव्य चेतना को उन्होंने परिपुष्ट किया । विद्यमान साहित्य क्रे का अध्ययन के बाद अपने काव्य सिद्धान्त का प्रतिपादन किया । महान साहित्यकारों के संपर्क से उन्होंने अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा को निरन्तर विकास किया । और अंग्रेज़ी साहित्य को आधुनिकता के सोपान पर पहुंचा दिया । कवि व्यक्तित्व विभिन्न घटनाओं-प्रतिघटनाओं के घात-प्रतिघातों से स्थायित होता है । इलियट का व्यक्तित्व इसका सशक्त उदाहरण है ।

काव्य धर्म के संबंध में टी॰ एस॰ इलियट के विचार

टी एस इलियट अभिव्यक्ति की तलाश में

मानव की काव्य संवेदना उसका अपना इतिहास है । काव्य की अन्तर्धारा सनातन काल से बहती आ रही है । उसमें अनेक निर्झरियां सम्मिलित होती है । जिससे वह धारा और बढ़ती जाती है तेज़ बहती रहती है । काव्यधारा के विश्लेषण-विवेचन में कालाकाल में अनेक सार्थक प्रयत्न हुए हैं । इनसे उसके स्वरूप एवं सार्थकता पर काफी कुछ प्रकाश भी डाला गया है । पाश्चात्य एवं पौरस्त्य दिशा से बहनेवाली इस काव्य-धारा की अन्तश्चेतना को विभिन्न विचारकों ने पहचानने का सफल प्रयास किया है । काव्यधर्म, स्वरूप, सर्जन-प्रक्रिया, कविधर्म आदि अनेक महत्वपूर्ण उपलब्धियों को उन्होंने सहृदय समक्ष प्रस्तुत किया है । अपनी-अपनी मौलिक परिकल्पना के साथ इन मनीषियों ने उस क्षेत्र में कार्य किया, विचार किया अपने चिंतन को प्रस्तुत किया । टी॰एस॰इलियट इनमें एक वरन्तु महत्वपूर्ण रहे ।

काव्य-धर्म, स्वरूप, सर्जन-प्रक्रिया काव्यास्वादन एवं कवि-धर्म पर इलियट की अपनी परिकल्पनाएं है । वे महान कवि थे और प्रखर आलोचक भी । इसलिए काव्य चिंतन के क्षेत्र पर स्वच्छन्द विचार करने की अपूर्व क्षमता उनमें थी ।

काव्य के स्वरूप पर विचार करते हुए उन्होंने काव्य को आनंद की उपलब्धि का साधन माना है[1]।[*] उनके पहले और पश्चात् यही विचारधारा काफी हद तक रही है । इस आनंद का अनुभव सहृदय करता है । इस आनंद की

1.Poetry is a superior amusement. I do not mean an amusement for superior people. I call it an amusement, an amusement 'Pour distrane us honnetes gens' -The Sacred Wood - P.VIII

उपलब्धि केलिए सर्जक को उसके प्रति समर्पित होना चाहिए । यह एक सरल कार्य नहीं है । यह पूर्ण समर्पण काव्य-सर्जन की सफलता की पहली शर्त है[1]।"

सर्जन प्रक्रिया

काव्य-सर्जन की मूल प्रेरणा के सम्बन्ध में इलियट ने काफी विचार किया है । प्रेरणा की सार्थकता और सफलता काव्य सर्जन के मूल कारण है । इलियट ने "वर्जिल और क्रिश्चियन वर्ल्ड" [Virgil and Christian World] विषय पर आकाशवाणी से किये गये भाषण में काव्य प्रेरण सम्बन्धी मूल चेतना के बारे में अपना मन्तव्य प्रकट किया है । सर्जन प्रक्रिया का अभिन्न अंग है काव्य प्रेरणा । कवि को सर्जन की ओर यह प्रेरणा ले जाती है । कवि की महत्ता भी एक हद तक इस प्रेरणा पर निहित है[2]।"

सर्जन में कवि के मन को निरपेक्ष होना चाहिए । विषय के प्रति उसे गहरा अवगाह होना चाहिए । कवि को अनुभव और अभिव्यक्ति के बीच एक प्रकार से समदूरता बर्तनी चाहिए।यही इलियट का विचार है[3]।" अनुभवों के प्रति तटस्थ रहना चाहिए । और कवि मन का व्यापार अनुभवों के प्रति किसी भी प्रकार जुड़कर नहीं रहे । यहां इलियट सर्जन प्रक्रिया में अनुभवों और अनुभूतियों के प्रति कवि के दृष्टिकोण को व्यक्त करते हैं ।

---

1. The creation of a work of art is like some other form of creation, a painful and unpleasant business, it is a sacrifice of the man to the work, it is a kind of death.
2. If the word inspiration is to have any meaning it must mean just this that the speaker or writer is uttering something which he does not wholly understand or which he may even misinterpret when the inspiration has departed him. This is certainly true of poetic inspiration; and there is more obvious reason for admiring Isaiah as a poet than for claiming Virgil as a poet.
3. He argues that a poet's mind should remain inert and neutral towards his subject matters keep a gulf between the man who suffer and the mind which creates- The Pelican Guide to English Literature - P.337.

रचना प्रक्रिया एक व्यापक कार्य है । कवि अपनी अनुभूतियों को मन में रखकर अपने व्यापक अनुभवों के धरातल पर, अपने बाह्य और आन्तरिक संवेदनाओं के साथ उस कार्य में लीन हो जाता है । तब उसे अपने कार्य के प्रति पूर्णविबोध होना चाहिए । वह अनुभूतियों को अभिव्यक्त करनेवाला नहीं होता । वह अपने सम्मुख विद्यमान काव्य-धारा के प्रति सचेत होता है । इस काव्य-धारा में होमर से लेकर शेक्सपीयर, मिल्टन, दान्ते आदि कवियों ने अपना भाग अदा कर दिया है । सर्जन-प्रक्रिया में यह निरंतर होता रहता है ।

कवि-कर्म

काव्य-सर्जन में कवि धर्म क्या है ? इस विषय पर इलियट ने गहराई से विचार किया है । काव्य और काव्य सर्जक ये दो विषय है । दोनों के बीच सम्बन्ध भी है । परन्तु दोनों की मौलिक विशेषताएं भी है । रचना प्रक्रिया में कवि का योगदान क्या होता है । वह अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देनेवाला एक यन्त्र नहीं है । इलियट के काव्य इसके उदाहरण है[1]।"

कवि का चित या मन सर्जन-प्रक्रिया में एक माध्यम का काम करता है । "अपने व्यक्तित्व को अभिव्यक्ति के योग्य व्यक्तित्व के रूप में वह नहीं देखता है।[2]" बल्कि उसे एक विशिष्ट माध्यम के रूप में देखता है । व्यक्तित्व का सर्जक रूप कवि का चित है । विविध भावनाओं के संयोजक के रूप में चित का महत्व है । माध्यम अथवा साधन के रूप में व्यवहृत परंपरा के सन्दर्भ में कलाकृति के निर्माण में सहायक होता है ।

---

1. The identity of the person, and indeed of the poet, is in that sense factitious but is this constant dialogue, between his sensibility towards experience and his instinct organization can be discovered the roots of Eliot's poetry-T.S.Eliot - P.45.
2. टी॰एस्॰इलियट के आलोचना सिद्धान्त - पृ॰94॰

चित की रचना प्रक्रिया उस क्रिया के समान है जो उस समय होने लगती है जब प्लेटिनम का बारीक तार आक्सीजन और सल्फर डाई आक्साइड से भरे प्रकोष्ट में डाल दिया जाता है । प्लेटिनम का बारीक तार उत्प्रेरक का काम करता है । उसकी उपस्थिति में आक्सीजन और सल्फर डाइआक्साइड संयोजित होकर एक तीसरी वस्तु को जन्म देती है, और वह तीसरी वस्तु है सल्फ्यूरिक एसिड । यह तीसरी वस्तु तब तक जन्म नहीं लेती जब तक कि इस संयोजन का उत्प्रेरक वहां उपस्थित नहीं हो, फिर भी इस नव्य निर्मित अम्ल में प्लेटिनम का अंश कतई नहीं होता, और देखने में प्लेटिनम के स्वयं के ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता वह निष्क्रिय, तटस्थ और अपरिवर्तित रहता है[1]।"

यहां इलियट का विचार है कि कवि का मन एक प्लेटिनम का तार है जो न तो परिवर्तित होता है न उसका अंश नयी वस्तु में होता । बल्कि उसके बिना सर्जन होता भी नहीं । अनुभूतियों को काव्य के रूप में अभिव्यक्ति देने में कवि-मन का व्यापार यहां स्पष्ट है । अनुभूतियां कवि मन से होकर अभिव्यक्ति के धरातल पर आ जाती है और काव्य का रूप धारण कर लेती है । यहां कवि मन अपनी ओर से उनमें कुछ नहीं जोड़ता कुछ न छोड़ता । वह उस रूपान्तरण में या संयोजन में निर्लिप्त रहने पर भी उत्तेजक का कार्य करता है । अनुभूतियां सीधे काव्य नहीं होती बल्कि उसे सर्जक के मन से होकर जाना है । तब वह काव्य के रूप में बदल जाती है । भिन्न-भिन्न अनुभूतियों को काव्य के रूप में परिवर्तित करने का माध्यम मात्र है कवि-मन । कवि-मन के बिना यह होता भी नहीं । सर्जक-मन की महत्ता इससे प्रकट होती है ।

---

1. Selected Prose - P.26.

वैयक्तिक अनुभूतियों की बोझ से अपने को बचाने का एक कवि की अभिलाषा के बारे में भी इलियट के विचार महत्वपूर्ण है । वैयक्तिक अनुभूतियों की बोझ से कवि बचना चाहता है । इससे आत्मसंयम बर्तने की क्षमता उसे मिल जाती है[1]।" तब उसे एक प्रकार की मुक्ति मिल जाती है । ऐसी अवस्था में वह अपने संकुचित क्षेत्र से बाहर आकर व्यापक क्षेत्र में आ जाता है । अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के धरातल से बाहर आकर व्यापक कर्त्तव्य के प्रति सचेत हो जाता है, समर्पित हो जाता है । यही कवि का सर्जनात्मक व्यक्तित्व है । एक दु:ख भोगी मनुष्य से सर्जक कवि अलग होता है । व्यक्ति के रूप में कवि की यातना कवि केलिए बिल्कुल अप्रासंगिक है ।

काव्यसर्जन में वैयक्तिक दु:खों का रूपान्तरण होता है । परन्तु इन अनुभवों और दु:खों के द्वारा ही वह सार्वजनीकिक सार्थकता को पा सकता है । शेक्सपीयर में भी यही संघर्ष था - केवल यही कवि को जन्म देता है । कवि अपने वैयक्तिक और निजि दु:खों को कुछ महत्वपूर्ण अपरिचित, कुछ सार्वजनीकिक और निर्वैयक्तिक रूप में परिवर्तित कर देता है । विंसेन्ट बकली ‖ Vincent Backely ‖ लिखते हैं "कविता एक ऐसा रूप है जिससे हम अपनी अनुभूतियों के दबाव और वास्तविकता से मुक्त हो सकते हैं[2]।"

1.Eliot speaks of a poet's desire to escape from the burden of private emotion, and he came to recognize that the manner of impersonality may cover a variety of attitudes to life, from self description to indifference or revulsion. The Pelican Guide to English Literature - P.334-35.

2.Poetry and Morality - P.183.

कवि के प्रत्येक अनुभव का एक सामान्य सत्य के साथ तादात्म्य होता है । इलियट मानते हैं कि सच्चा कवि अनुकरण नहीं करता वह उपलब्ध साधन को उच्च तथा नया रूप प्रदान करता है[1]।" एतदर्थ अनुभवों को वैयक्तिक बोध से अलग कर देना चाहिए ।

कवि-धर्म में अनुभूतियों का अनुकरण उचित नहीं है । या कवि को उपलब्ध सत्य की मात्र अभिव्यक्ति भी नहीं देनी चाहिए । उस सत्य को व्यापक और अच्छा रूपक देकर उसे सार्वलौकिक बनाना चाहिए । इसलिए कवि की भावना-जगत भी व्यापक हो जाती है । उसे भव्य और दृश्य भावनाएं होती हैं । इन भावनाओं को अभिव्यक्त करते समय कवि को तटस्थ निर्वैयक्तिक रहना अनिवार्य होता।कवि मन से होकर ये सारी भावनाएं एक उच्च रूप धारण करती हैं

मात्र उपलब्ध साधन को लेकर काव्यसर्जन में निरत होना कवि कर्म नहीं । उसे अनुपलब्ध साधन का आविष्कार करना चाहिए । क्लीन्थ ब्रुक्स (Cleanth Brooks) ने स्पष्ट कहा है कि कवि को काव्य के अनुपयुक्त साधन को काव्य का रूप देना चाहिए । अनुपलब्ध संसाधनों को उपलब्ध कराके उन्हें काव्यानुकूल बनाना कवि-कर्म होता है[2]।"

कवि-कर्म की सफलता यह नहीं कि जो कुछ उपलब्ध हो उसे किसी रूप में

---

1. Immature poets imitate, mature poets steal bad poets deface what they take and good poets make it into something better or atleast something different. -The Sacred Wood - P.125.

2. I think that from Baudelair I learned first a precedent for the poetical possibilities. That infact the business of the poet was to make poetry out of the unexplored resources of the unpoetical that the poet infact, was committed by his profession to turn the unpoetical in to poetry.

T.S. Eliot The Man and his work P. 317

प्रकट करे । बल्कि उसे सारी उपलब्ध या अनुपलब्ध वस्तुओं और भावनाओं को लेकर काव्य-सर्जन करना है। उसके सामने सुन्दर वस्तु ही नहीं होती, कुरूप भी मिलती है । इलियट ने इस सन्दर्भ में लिखा कि कवि को विभीषिकाओं में या महानता में, कुरूपता में या सुन्दरता में समान रूप से जीने की, अभिव्यक्ति देने की क्षमता होनी चाहिए[1]।"

निवैयक्तिकता - रचना के स्तर पर

फ्रेन्च कवि और आलोचक एज़रा पाउण्ड ने कवि को एक वैज्ञानिक के समान निवैयक्तिक माना है । विश्व को कविता में उच्च स्थान देनेवाले । एज़रा पाउण्ड के इस कथन में कवि और कवि व्यक्तित्व के बीच का सम्बन्ध स्पष्ट हो चुका है । एक वैज्ञानिक निवैयक्तिक होकर अपने कार्य में तल्लीन रहता है । उसी प्रकार कवि भी अपने व्यक्तित्व से मुक्त रहकर एक प्रकार की अनुभूति जगत में विचरण करता है । 1910 में एज़रा पाउण्ड ने लिखा कविता एक प्रकार से प्रेरणाजनक गणित है जिसमें कुछ फोरमुला है जो कि मानवीय अनुभूतियों केलिए है[2]।"

इलियट ने भी अपने काव्य-सिद्धान्तों में इस निवैयक्तिकता सम्बन्धी विचारों को स्थान दिया है । उन्होंने काव्य में इसका अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया । काव्य में कवि अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति नहीं करता, परन्तु

---

1. The essential advantage for a poet is not that of having a beautiful world with which to dead, but rather to be able to see beneath both beauty and ugliness, to see the boredum, and the horror, and the glory, The vision of the glory and horror was denied to Arnold but he knew something of the boredum.
2. Poetry is a sort of inspired mathematics which gives us equations, not for abstract figures, triangles, sphere, and the like but equalities for the human emotions- The Spirit of Romance. P.5.

वह एक माध्यम बना रहता है । उस माध्यम के द्वारा सभी प्रकार की अनुभूतियां और अनुभवों का एक विशेष और अप्रत्याशित रूप में संयोजन होता है[1]।"

कला की अनुभूति निवैयक्तिक है । इस निवैयक्तिक अनुभूति के धरातल पर पहुंचने केलिए कवि को अपने आप उसके प्रति समर्पण करना पड़ता है । यही आत्मसमर्पण कवि को अपने व्यक्तित्व से मुक्ति प्रदान करके उसे निवैयक्तिक बना देता है । इसके सम्बन्ध इलियट का कथन महत्वपूर्ण है । "वह [काव्य] समाधिस्थ्य एकाग्रता है और एकाग्रता से उत्पन्न एक नयी वस्तु है । काव्य संवेग की अन्धाधुन्ध उच्छृंखल अभिव्यक्ति नहीं है । अपितु संवेग से मुक्ति है, वह व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति नहीं, अपितु व्यक्तित्व से मुक्ति है । किन्तु तथ्य तो यह है कि जिनके पास व्यक्तित्व और संवेग हैं वे ही इस बात को जानते हैं[2]।"

यह विचार स्वच्छन्दतावाद के विरुद्ध जाता है । स्वच्छंदतावाद में कवि पर अधिक ध्यान दिया जाता है । जबकि आभिजात्यवाद में कविता पर महत्व दिया जाता है । इलियट ने कवि को नहीं बल्कि कविता को देखने का आह्वान किया है । यदि कविता में कवि के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति नहीं होती तो उसमें किसकी अभिव्यक्ति होती है ? कवि और कविता के बीच जो सम्बन्ध रहता है उसी की ओर संकेत करके इलियट ने लिखा "हम कह सकते हैं कि काव्य का, एक सीमा तक अपना जीवन होता है । काव्य से जो अनुभूति या दर्शन प्राप्त

---

1. The Poet has not a personality to express, but a particular medium, which is only a medium and not a personality in which impressions and experience combine in peculiar and unexpected ways. Impressions and experiences which are important for the man may take no place in the poetry and those which become important in the poetry may play quite a negligible part in the personality. -Selected Prose - P.8.

2. Selected Prose - P.29.

होता है वह कवि की अनुभूति या दर्शन से भिन्न होता है[1]।" यह बात कवि को अभिजातवर्ग की कोटि में बहुधा देती है ।

काव्य में निर्वैयक्तिकता की प्रक्रिया कैसे होती है ? यहाँ इलियट परंपरा को इस सन्दर्भ में जोड़ देते हैं । परंपरा के प्रति समर्पित रहने पर कवि अपने व्यक्तित्व से मुक्त हो सकता है । इस प्रकार एक प्रकार से आत्मोत्सर्ग या आत्म विलयन कवि केलिए अनिवार्य हो जाता है[2]।" अतः आत्मसमर्पण के द्वारा कवि तटस्थ और एकाग्र हो सकता है । इसी एकाग्रता और तटस्थता केलिए अतीत या परंपरा का अध्ययन उसे आवश्यक है ।

किसी भी कलाकार का यह परम कर्त्तव्य है कि वह परंपरा का अवबोध प्राप्त करे । इसी परंपरा के अवबोध के द्वारा कवि परिपक्व हो जाता है । उसके बिना वह अपरिपक्व रह जाता है । अतीत का बोध कवि कठिन परिश्रम से ही प्राप्त कर सकता है । "स्वच्छ-जीवन से अतीत का बोध प्राप्त हो जाता है । इसका सम्बन्ध रक्त से है न कि मस्तिष्क से[3]." तो इस परंपरा के सामने अपने व्यक्तित्व को समर्पित कर देने पर कवि के सामने एक व्यापक सत्य प्रकट

---

1. We can only say that a poem in some sense has its own life, that its parts form something quite different from a body of reality ordered biographical data that the feeling or emotion or vision, resulting from the poem is something different from the feeling or emotion or vision in the mind of poet. -The Sacred Wood - P.X.
2. The Progress of an artist is a continual self sacrifice, a Continual extinction of personality. -Selected Essays -P.17.
3. Tradition may be concieved as a by - product of right-living, not to be aimed at directly. It is of the blood, so to speak, rather than of the brain. -After strange Gods. -P.26.

हो जाता है । इस व्यापक सत्य को पकड़ने केलिए उसे अपने व्यक्तित्व के दायरे से मुक्त होना अनिवार्य है । इसलिए कवि को जीवन भर अपने परंपरा संबन्धी ज्ञान को निरन्तर विकसित करते रहना चाहिए । शेक्सपीयर तक ने प्लुटार्क से आवश्यक ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त की थी ।

वैयक्तिक अनुभूतियों का जब किसी उच्चतर मूल्य से तालमेल होता है तो उनका निर्वैयक्तिकरण होता है । भगवान अथवा परंपरा वैयक्तिक भावनाओं को निर्वैयक्तिक स्तर पर अभिव्यक्त करने में सहायक होती है । निर्वैयक्तिकरण केलिए आवश्यक है "किसी ऐसी वस्तु के प्रति आत्मसमर्पण जो अपने से अधिक मूल्यवान हो[1]।"

भक्ति एवं प्रगीत काव्य में व्यक्तित्व का सीधे भगवान के प्रति समर्पण हो जाता है । किन्तु नाटकों और कथा साहित्यों में लेखक का व्यक्तित्व रूपान्तरित होकर पात्रों में मिल जाता है । इलियट ने इसकी पुष्टि की है । "किसी कलाकृति की सृष्टि नाटक में किसी पात्र का निर्माण, कवि के व्यक्तित्व के रूपान्तरण की प्रक्रिया निहित है, अथवा एक व्यापक अर्थ में लेखक के जीवन का पात्र में रूपान्तरित होने में यह प्रक्रिया पात्र को अपने रूप में ढालने से भिन्न कुछ और ही वस्तु है[2]।"

परंपराबोध के द्वारा निर्देशित कर्त्तव्य व्यक्तित्व से उच्चतर है । कवि का व्यक्तित्व और उसके संवेग इस कर्त्तव्य के प्रति समर्पित होते हैं । निर्वैयक्तिक

---

1. What happens is a continual surrender of himself as he is at the moment to something which is more valuable.- The Sacred Wood - P.53.
2. The Sacred Wood - P.118.

कलाकृति के निर्माण करने केलिए कवि को अपने सचेतन व्यक्तित्व से जो उच्चतर बाह्य तत्व है, उसके प्रति वफादार होना चाहिए । परंपरा के प्रति और अपने अचेतन मन में स्थित उसके ओज के प्रति । कवि का सचेतन जिसको महत्व देता है वह शायद उसका अपना व्यक्तित्व होगा । तब उसे अपने सचेतन व्यक्तित्व से बाहर आकर निरपेक्ष ढंग से अपने व्यक्तित्व को स्वरूप देनेवाले उन अचेतन ओजों पर विचार करना चाहिए जो परंपरा से उपलब्ध है । एतर्थ व्यक्तित्व के संपूर्ण विलयन की आवश्यकता है ।

निर्वैयक्तिक काव्य सिद्धान्त का निरूपण करते हुए इलियट लिखते है "बहुत कम लोग यह बात जानते है कि महत्वपूर्ण संवेग की अभिव्यक्ति कब होती है । ऐसे संवेग जिसका जीवन कविता में होता है, कवि के वैयक्तिक इतिहास में नहीं होते है । कला का भाव निर्वैयक्तिक होता है । और जिस को करना है उसके प्रति अपने को पूर्णरूप से समर्पण किए बिना, कवि इस निर्वैयक्तिकता को उपलब्ध नहीं कर सकता । और जो कार्य उसे करना है, यह वह तब तक नहीं जान सकता, जब तक कि वह उस क्षण में नहीं जीता जो मात्र वर्तमान नहीं, अपितु अतीत का वर्तमान क्षण है, जब तक कि उसे मृत का नहीं, अपितु जीवन्त का बोध नहीं होता[1]।"

1.Eliot Deleberately and Programmatically cultivated impersonality in his poetry. His criticism as well as his poetry is that of escaping from the subjective self into a world of objective values. In all hiswork there is the search for the merging of individual consciousness with in same wider objective truth, at first the tradition next the idea of the supernatural and finally the dogmas of the catholic church. Eliot - P.12-13.

यहां इलियट ने निर्वैयक्तिकता के और उसे उपलब्ध करने के मार्ग का प्रतिपादन किया है । इस निर्वैयक्तिकता की सिद्धि केलिए मार्ग है कि परंपरा के अवबोध द्वारा कवि यह जाने कि उसे क्या करना है और उस उच्च कर्त्तव्य के प्रति अपने को समर्पित कर दे । परंपरा द्वारा निर्देशित कर्त्तव्य उसका रचना संबन्धी कर्त्तव्य है, जिसमें डूबकर वह अपने अहं को भूल जाता है ।

कवि को अपनी कविता को अपने दर्शन को सीधित करने का वाहन नहीं बनाना चाहिए । कविता का अपना स्वरूप होता है । इसका अर्थ यह नहीं कि कविता का कोई मूल्य नहीं । वह परम आनन्ददायक है । उस आनन्द की उपलब्धि में वैयक्तिकता बाधा डाल सकती है । इसलिए इलियट ने कविता में निर्वैयक्तिकता को प्रोत्साहन दिया । स्टीफन स्पन्सर ने इसकी पुष्टि भी की है । "इलियट की रचनाओं में आत्म तत्व से मुक्त होकर व्यापक तत्व की ओर जाने की निरन्तर प्रक्रिया है[1]।"

इस व्यापक वस्तु तत्व की प्राप्ति में कवि के व्यक्तित्व का विलयन या समर्पण हो जाता है । व्यक्तित्व का उसे कोई महत्व नहीं रहता, जिस अनुभूति का साक्षात्कार उसने किया उसे निवैयक्तिक धरातल पर प्रस्तुत करना उसका ध्येय बन जाता है । इलियट के गद्य और पद्य दोनों इसकेलिए उदाहरण हैं । उनमें वैयक्तिकता से निर्वैयक्तिकता की ओर, वैयक्तिक भावनाओं से कलात्मक भावनाओं की ओर जाने का प्रयास है[2]।"

---

2. His charactristic stance in his prose, is found in his attempt to raise everything to a higher and more organized level of consciousness from the despired inner voice to spiritual authority from personality to impersonality from indicidual feelings to the emotion of art. -T.S.Eliot - P.198.

कवि और परंपरा का बोध

कवि के परंपरा-बोध पर इलियट ने विशेष बल दिया है । परंपरा और वैयक्तिक प्रतिभा संबन्धी उनके दृष्टिकोण ने उन्हें "क्लासिक" कोटि में पहुँचा दिया है । परंपरा के सम्बन्ध में इलियट के विचार बड़े गंभीर हैं । उनका कहना है कि साहित्य के इतिहास से हम किसी भी कवि को हटा नहीं सकते । उसमें सबका अपना-अपना योगदान है ।

परंपरा कवि को अपने समय के साथ न्याय करने केलिए सहायक होती है । परंपरा का सम्यक ज्ञान कवि की भावनाओं का परिष्कार करता है । जीवित भाषा में आधुनिकता के साथ अतीत की संगति होती है । अपने समय की उपयुक्त भाषा का, उपयुक्त शब्दों का व्यवहार करने केलिए उसे अतीत में उपलब्ध कवियों की भाषाओं एवं शब्दों का अध्ययन करना चाहिए । इलियट इसकी आवश्यकता पर बल देते हैं "उन लेखकों का गंभीर अध्ययन करना चाहिए जिन्होंने अपने समय में भाषा का उत्कृष्ट व्यवहार किया हो, जिन्होंने अपने ढंग से भाषा को नये रूपों में ढाला है[1]।"

जो कवि अपनी भाषा के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह करना चाहता है । उसकेलिए उस भाषा में उपलब्ध अतीत के साहित्य ही परंपरा है । उसके गहराई से अध्ययन करने पर उसमें विद्यमान काव्यत्व का बोध उसे प्राप्त होता है । कवि को

अत्यन्त निष्ठा के साथ इसे करना चाहिए । उसके कवि-व्यक्तित्व का विकास तब संभव होता है । ईस्ट कोकर में इलियट ने लिखा "और शक्ति एवं श्रद्धा से जिसे जितना चाहिए उसका अन्वेषण एक या दो अथवा अनेकों बार ऐसे लोगों द्वारा किया जा चुका है जिनका अनुकरण करने की तो आशा ही नहीं की जा सकती ; कि इस कार्य में प्रतिस्पर्धा नहीं है । जो लुप्त हो जाता है, अन्वेषित होता है, और पुन: बारंबार खो जाता है उसे ही पुन: प्राप्त करने केलिए संघर्ष करना पड़ता है । और आज की स्थिति में यह बहुत शुभ नहीं है । किन्तु इस संघर्ष में न तो लाभ ही है और न हानि ही[1]।"

काव्य कला में हमेशा परंपरा का महत्व रहता है ।"और काव्य में पूर्ण मौलिकता नाम की ऐसी कोई वस्तु है ही नहीं, जिसमें अतीत के प्रति आभार न हो । जब भी कोई वर्जिल, दांते, शेक्सपीयर या गेटे पैदा होता है तब युरोपिय काव्य का सारा भविष्य ही बदल जाता है । प्रत्येक महान कवि उस जटिल सामग्री में कुछ न कुछ भोग देता है । जिसके कारण भविष्य का काव्य लिखा होगा[2]।"

इलियट ने अपने काव्य में परंपरा का पुट भर दिया है । परंपरा से प्राप्त दृष्टिकोण को बनाए रखने का प्रयास उन्होंने निरंतर किया है ।

1.By strength and submission, has already been discovered
Once or twice, or several times, by men whom one cannot hope
To emulate - but there is no competition
There is only the fight to recover what has been lost
And found and lost again and again ; and now under conditions
That seem unpropilious. But perhaps neither gain nor loss
East Cocker - P.31.

2.Notes Towards the Definition of Culture. P.114.

स्टीफन स्पेन्सर ने लिखा "इलियट की वस्तु जगत का सम्बन्ध सबसे पहले परंपरा से होता है, बाद में किसी अतिरिक्त से[1]।"

इलियट सभी भावनाओं को परंपरा से प्राप्त साधन मानते हैं। परंपरा से जो धारा बहती रहती है उसी में प्रत्येक नया कवि कुछ जोड़ देता है, उसका स्वरूप भले ही अपनी तरफ से नया हो, लेकिन उसमें परंपरा का ही अंश है। डेविड वार्ड ने भी अपनी ओर से इसका समर्थन किया है[2]।" उन्होंने स्पष्ट किया है कि अतीत की अनुभूतियों से मिलकर सभी अनुभूतियां सन्तोषजनक और सार्थक होती है[3]।"

आलोचक जब किसी रचना की समीक्षा कर डालता है तब यह उसका कर्त्तव्य बन जाता है कि वह अपनी परंपरा के साथ अपना सुदृढ़ सम्बंध स्थापित करे। अतीत ने जो कुछ प्राप्त किया है उसमें से सामग्री चुन लेने का अधिकार आलोचक को है। इसलिए इलियट का अभिप्राय है कि "यदि एक अच्छी परंपरा

1.Eliot - P.118.

2.He aspired at most to be the channel through which the moral experience of his race that had accumulated through long centuries and found living embodiment in these sages should be conveyed to the present and the future in his own words, he has not a creater but a transmitter. A man who looks upto the great traditional models and initials them, becomes worthy of imitation in his turn.- T.S.Eliot - Between Two Worlds - P.44.

3.Emotion grows intoxicating and delightful after it has been enriched with the memory of old emotions with all the uncounted flowers of old experience and it is necessarly same antiquity of thought, emotions that have been deepened by the experience of many men of genius, that distingushes the cultivated man. T.S.Eliot-Between Two World - P.45.

हमारे सामने है तो आलोचक को उसे सुरक्षित रखना चाहिए[1]।"

यही परंपरा और उससे प्राप्त सामग्री ही किसी कवि की रचना का वैयक्तिक भाग हुआ करती है। "कवि की रचना के श्रेष्ठ ही नहीं, बल्कि अत्यधिक वैयक्तिक भाग वे हैं जिन में मृत कवि और उसके पूर्वज अपनी अनश्वरता का प्रबल दावा करते हैं[2]।"

इलियट के अनुसार किसी भी कवि को समझने केलिए यह जान लेना आवश्यक है कि उसका अतीत के साथ कैसा सम्बन्ध रहा है। उसका मूल्यांकन तभी सार्थक हो सकता है। अतीत को प्राप्त अनुभवों के द्वारा ही वह काव्य सर्जन में सक्षम हो सकता है। स्वस्थ परंपरा कवि केलिए प्रेरणाजनक होती है। इसलिए इलियट लिखते हैं कि अतीत के मानदण्डों से किसी रचना का मूल्यांकन किया जाना चाहिए[3]।"

अपने व्यक्तित्व को परंपरा के प्रति समर्पित करने का आह्वान वे निरंतर करते हैं। तभी हम सच्चे साहित्यिक मूल्य को प्राप्त कर सकते हैं। यह उनका

---

1. It is a part of the business of the critic to preserve tradition when a good tradition exists. It is a part of his business to see literature steadily and to see it whole, and this is eminently to see it not as conserted by time, but to see it beyond time, to see the best work of our time and the best work of twenty five hundreds years ago with the same eyes. The Sacred Wood - Introduction.
2. Eliot requested that for the understanding of any living artist he be set for contrast who preceeded him. The Poet's contribution is not that in which he differs from tradition but that part of his work most in harmony with the dead poet's also preceded him. - Criticism in America - P.233.
3. The poet's work must be judged by standards from the past. Criticism is directed upon Poetry not upon the poet.- Criticism in America - P.234.

दृढ़ विश्वास रहा । साहित्यिक क्षेत्र में कोई भी चीज़ नवीन नहीं है । सब कुछ इसी अतीत की विरासत रूप में हस्तगत हुआ है । अतीत के प्रति वफादार रहने केलिए रचनाकार को इतिहास का ज्ञान आवश्यक है । इतिहास की जानकारी से कवि का सम्बन्ध अतीत के साथ जुड़ जाता है । काव्य के प्रतिमानों को वह उसी अतीत के भण्डारों से चुन लेते है[1]।" परन्तु उसे ज्यों का त्यों लेना नहीं बल्कि समय के अनुसार उसमें परिवर्तन आवश्यक है । इसी समय बोध पर इलियट का साहित्य निर्भर है[2]।"

परंपरा इलियट के मत में निरीक्षण का विषय है किसी भी परंपरा में जितनी भी बातें रहती है सभी वांछनीय नहीं । वही परंपरा सच्ची है या काव्योपकारी है जो आस्थाओं को जीवन्तता प्रदान करती है । वे लिखते है "ये आस्थाएं परंपरा के निर्माण की प्रक्रिया में ही अपना जीवन्त रूप धारण कर सकती है[3]।"

परंपरा के अवबोध के द्वारा वैयक्तिक प्रतिभा अपने समय और स्थान के बन्धनों से मुक्त हो जाती है । परंपरा उसे उन तत्वों का बोध कराती है जो शाश्वत और मूल्यवान है, क्योंकि परंपरा जाति-मानस है जो अपने विकास

---

1. Eliot insists on a poet's obligation to transcend his private self by loyalty to the tradition of European Literature as a whole for which he needs the historical sense.-The Pelican Guide to English Literature - P.335.
2. Eliot's sense of history and his search for a metaphysical reality beyond the self came a serious of meditation in his poetry on the idea of TTimt - Timt as an aspect of individual lives or the succession of generation time in relation to the discredited idea of progress time in relation to enternity.- The Pelican Guide to English Literature - P.335.

3. सेलक्टड प्रोस - पृ.20.

मार्ग की किसी भी मूल्यवान वस्तु का परित्याग नहीं करती । वह व्यक्ति और उसके युग के मानस से उच्चतर है । लेखक और उसका युग ये दोनों ही उस सातत्य के अंग है जिसे इलियट परंपरा कहते है । इस प्रकार उनका विचार है कि कवि अपने में अतीत का बोध विकसित करे, अथवा उसे उपलब्ध करे, और उस चेतना को जीवन भर विकसित करते रहे[1]।"

अतीत का बोध ही लेखक की कृतियों को मूल्य प्रदान करता है । परंपरा और उसके शाश्वत मूल्यों का बारंबार अन्वेषण करना पड़ता है । "परंपरा अधिक व्यापक महत्व की वस्तु है । वह विरासत में नहीं मिलती, यदि आप चाहते है तो आप बड़े परिश्रम से उसे प्राप्त कर सकते है । इसकेलिए प्रथमत: ऐतिहासिक अवबोध की आवश्यकता होती है, जो किसी भी ऐसे व्यक्ति केलिए अपरिहार्य है जो पच्चीस वर्ष की उम्र के बाद में भी कवि बना रहना चाहता है । ऐतिहासिक अवबोध अपनी पीढ़ी को ही हड्डियों में समेटकर लिखने के लिए प्रेरित नहीं करता, वरन् इस भाव के साथ प्रेरित करता है कि होमर से लेकर अब तक के सारे युरोपिय साहित्य का और उसके अन्तर्गत अपने देश के समूचा साहित्य का, युगवत् अस्तित्व है । उसकी युगवत् व्यवस्था है । यह ऐतिहासिक अवबोध कालमुक्त एवं कालबद्ध का अलग-अलग एवं कालमुक्त एवं कालबद्ध का एक ही साथ अवबोध है । यही वह वस्तु है जो किसी लेखक को परंपरावादी बनाती है । और यही वह वस्तु भी है जो किसी लेखक को कालप्रवाह में अपने स्थान, अपनी समसामयिकता के प्रति, सर्वाधिक तीव्रता के साथ जागरूक बनाती है[2]।"

---

1. दि सेक्रड वुड - पृ. 52.
2. वही - पृ. 49.

जो लेखक परंपरा के बोध से भली-भान्ति अवगत है वही सच्चे अर्थ में आधुनिक होता है । परंपरा को वह अपने अन्दर कठिन परिश्रम द्वारा, ऐतिहासिक अवबोध को विकसित करके ही प्राप्त कर सकता है । जीवंत परंपरा में अतीत ही नहीं वरन् वर्तमान भी निहित है । जीवन्त परंपरा द्वारा लेखक को उस देश-काल - सातत्य का भी बोध होता है जिस में वह रहता है । परंपरा द्वारा समग्र साहित्य की युगवत् व्यवस्था का ज्ञान होता है । इस व्यवस्था में कालमुक्त तत्व है, उनके प्रति लेखक को आत्मसमर्पण करना चाहिए ।

नार्थ्रप फ्राई (Fry) ने अपनी पुस्तक "अनाटमी आफ क्रिटिसिज़म" (Anatomy of Criticism) में लिखा है "मौलिकता संपन्न होने से कोई भी कलाकार परंपरा से विलग नहीं होता, मौलिकता उसे और अधिक परंपरा के अन्दर ले जाती है[1]।" परंपरा के साथ दृढ़ संबन्ध से कवि वर्तमान में भी जी सकता है । वर्तमान के क्षण को वह अतीत में जाकर अतीत के वर्तमान के साथ जोड़कर प्राप्त करता है । कवि-धर्म के इस चरण में कवि अपने कर्त्तव्य या दायित्व को पूर्ण करने में इससे समर्थ हो जाता है । इलियट के अनुसार "यदि हम परंपरा को खो देंगे तो वर्तमान भी हमारे हाथ से निकल जाएगा[2]।"

काव्य सर्जन में परंपरा या ऐतिहासिक अवबोध का महत्व है । कवि या कलाकार की सार्थकता, मृत कवियों और कलाकारों के साथ उसके सम्बन्ध पर आधारित है । इलियटने लिखा "किसी भी कलाकार के कलाकार और कवि की

---

1. टी. एस. इलियट के आलोचना सिद्धान्त - पृ. 63.

2. By loosing tradition, we lose our hold on the present - Sacred Wood - P.62.

सिर्फ अपनी सार्थकता नहीं है, उसकी सार्थकता मृत कवियों और कलाकारों के सम्बन्ध पर निर्भर है[1]।"

मृत कवियों और कलाकारों के दिये धरोहर में अपना भाग जोड देना ही प्रत्येक कवि का कार्य होता है। यह कवि केलिए भलेहि नया या मौलिक हो। परन्तु, परंपरा का ही अंग है। और कवि की सार्थकता भी इस कार्य में है।

अतीत के अवबोध में वर्तमान को पहचानने के साथ भविष्य के प्रति भी कवि में आस्था होनी चाहिए। सार्थक परंपरा में वर्तमान और भविष्य की किरणें उपलब्ध होती हैं। आस्था कवि को सर्जन की ओर प्रेरित करती है। इलियट के अनुसार भविष्य की आस्था को खो देने से हमारा अतीत मात्र मृत परंपरा रह जायेगा[2]।"

कवि की सर्जनात्मकता की सफलता की कसोटी यह परंपरा बोध है। व्यापक अर्थ में परंपरा का अवबोध कवि को अपने कर्त्तव्य के प्रति सचेत करता है[3]।"

---

1. No poet, No artist of any art has his complete meaning alone. His significance his appreciation is the appreciation of his relation to the dead Poets and artists. - Selected Essays - P.15.

2. We want to maintain two thins, a pride in what our literature has already accomplished and a belief in what it may still accomplish in the future. If we cease to believe in the future, the past would ease to be fully our past, it would become the past of a dead civiliztion. - What is Classic - P.25.

3. The persistence of literary creativeness in any people, accordingly, consists in the maintenance of an unconsious balance between tradition in the larger sense the collective personality, so the speak realised in the literature of the past and the originality of the living generation. - What is Classic - P.15.

कवि और संवेदनशीलता

संवेदनशीलता मस्तिष्क की शक्ति है जो संस्कारों को ग्रहण एवं संप्रेषित करती है । संस्कारों को परिष्कृत ढंग दृष्टि से ग्रहण करना और उसको अभिव्यक्त करना उसका कार्य होता है । इसका विकास सतत शिक्षा और परिष्कार द्वारा होता है । यहाँ स्पष्ट हो चुका है कि संवेदनशीलता का व्यापार संस्कारों के ग्रहण और संप्रेषण दोनों में होता है । अर्थात् संस्कारों को आत्मसात् करना और उनको संप्रेषित करना ।

संवेदनशक्ति को परंपरा का बोध निरन्तर परिष्कृत करता रहता है । संवेदनशीलता के अभाव में कवि कवि नहीं होता और आलोचक आलोचक भी । संवेदनशीलता निरंतर परिवर्तनशील है । इसलिए कवि के भाव-बोध में भी परिवर्तन अनिवार्य है । भाव-बोध इस संवेदनशक्ति का अभिन्न अंग है ।

इलियट ने संवेद-शक्ति के ग्राहक एवं संप्रेषक दोनों पक्षों की ओर संकेत किया है । संस्कारों के ग्राहक के रूप में संवेद-शक्ति विचार का सीधा भावाभिभूत अवबोध करती है, और विचार के संप्रेषक के रूप में वह उसे भावना में परिवर्तित कर देती है[1]।"

अनुभूति भावबोध की वस्तु होती है । अतः कोई विचार अनुभूति में तभी परिणत होता है जब भावाभिभूत रूप में उसका ग्रहण किया जाए । यदि किसी विचार का भावाभिभूत बोध नहीं होता, तो वह व्यक्ति की संवेद-शक्ति में केवल वियोजित बौद्धिक इकाई बनकर रह जाता है । किन्तु यदि किसी विचार का भावात्मक अवबोध का ग्रहण किया जाए, तो संवेद शक्ति में उसका सायुज्य

---

1. टी. एस. इलियट के आलोचना सिद्धांत - पृ. 66.

होता है : क्योंकि संवेद-शक्ति में अंतर्वेशित होने पर वह भावबोध को परिशोधित कर देता है । ऐसी संवेद-शक्ति ही कवि मन की विशिष्टता होती है जिससे कवित्व-बीज का उद्भव होता है ।

इलियट के विचार में संस्कृत संवेदनशील मानस ऐसा उत्कृष्ट परिपक्वतापूर्ण माध्यम है जिसमें विशिष्ट, अथवा अतिवैविध्यपूर्ण भावनाएं स्वतन्त्रता पूर्वक नये संयोजनों में ढलती हैं[1]।" अपक्व और असंस्कृत संवेदनशील मानस में विविध भावनाएं संयोजित नहीं होती ; वे वियोजित रह जाती हैं । इसके बदले श्रेष्ठ एवं सुसंस्कृत संवेदनशीलता ऐसे प्रभाव अथवा अनुभूति को उत्पन्न करने में सक्षम होती है जो एक संवेग से निर्मित हुई हो, अथवा अनेकों का संयोजन और विशिष्ट शब्दों या पदों या बिंबों में, लेखक केलिए निहित, विविध भावनाओं को संयोजित कर अन्तिम प्रभाव उत्पन्न किया जा सकता है[2]।"

इलियट की दृष्टि में श्रेष्ठ काव्य केलिए व्युत्पत्ति-विवेक एवं प्रतिभा का सायुज्य आवश्यक है । और इन दोनों के मूल में कवि की संवेदशक्ति है जो संस्कारों को ग्रहण करने के अतिरिक्त उन्हें अभिव्यक्त अथवा सृष्टित भी करती है । इलियट इस प्रक्रिया को सभी उत्कृष्ट काव्यों में पाते हैं, विशेषतया ग्रीक के तत्त्ववादी और फ्रेन्च के प्रतीकवादी काव्यों में प्रतिभा एवं व्युत्पत्ति-विवेक क्रमशः संवेद-शक्ति के ही उत्पादक एवं ग्राहक रूप हैं ।

वस्तुगत सहसम्बन्ध

कला संबन्धी एक मुख्य समस्या यह है कि उसमें अभिव्यक्त भावों का सही संप्रेषण होता है या नहीं । कलाकृति की सफलता भी इसी संप्रेषण पर निर्भर है[3]।"

---

1. दि सेक्रड वुड - पृ. 53.
2. टी.एस.इलियट के आलोचना सिद्धान्त - पृ. 75.
3. The art consists in the communication established between author and reader. Principles of Literary Criticism - P.24.

संप्रेषण के बिना कला कला नहीं, साहित्य साहित्य नहीं[1]।" साहित्य की सफलता की कसौटी यही संप्रेषण है । पाठक के मन तक काव्य-भावनाओं को पहुंचाना चाहिए । कवि जो भाव अभिव्यक्त करता है उसका सही आस्वादन तभी संभव होगा जब उसका पूर्ण संप्रेषण होता है । अनुभवों का एक प्रकार से हस्तान्तरण होता है । कवि के मन से पाठक के मन में यह संप्रेषित होता है ।

अनुभव अभिव्यक्ति चाहता है । लेकिन सारे अनुभवों को अभिव्यक्त नहीं कर पाते । सार्थक और सचेतन अनुभूतियाँ ही अभिव्यक्त होकर संप्रेषण का विषय बन जाती हैं । यदि काव्य संप्रेषण का एक रूप है तो, कविता संप्रेषित रूप है । सच्चा कवि सही संप्रेषण चाहता है । उसकेलिए विवशता होता है । यह विवशता सर्जन की ओर कवि को प्रेरित करती है । इसलिए वह भाषिक शक्तियों के द्वारा पूर्णाभिव्यक्ति करने का प्रयास करता है ।

काव्य के प्रधान भावों के सही संप्रेषण पर इलियट ने बल दिया । एतर्थ उन्होंने अपनी ओर से एक नये सिद्धान्त का निरूपण किया । उन्होंने लिखा कि "कला के रूप में भाव को अभिव्यक्त करने की एक मात्र विधि है ✗ "वस्तुगत सहसंबन्ध" की व्यवस्था द्वारा, दूसरे शब्दों में, वस्तुओं के ऐसे समूह, ऐसी स्थिति, घटनाओं की ऐसी शृंखला द्वारा जो जो विशिष्ट भाव का सूत्र होगी ; ऐसा कि जब ऐन्द्रिय अनुभूति में समाप्त होनेवाले बाह्य तथ्य प्रस्तुत किये जाते हैं,

---

1. For evidently, whatever else literature may be, communication it must be ; no communication, no literature. - Principles of Literary Criticism - P.24.

तब उस भाव की त्वरित निष्पत्ति हो जाती है।[1]"

सर्जक कलाकार अपनी अनुभूतियों को सीधे पाठकों को सम्प्रेषित नहीं कर सकता, इसलिए उसे वस्तुओं के ऐसे समूह, ऐसी स्थिति, घटनाओं की ऐसी शृंखला के माध्यम से प्रस्तुत करना पड़ता है जो उन भावों को पूर्णत: अभिव्यक्त कर सके। तब पाठक और कवि के बीच भावों का हस्तान्तरण होता है। यहां सही सम्प्रेषण भी होता है। जो कुछ कवि अभिव्यक्त करना चाहता है वह वस्तुगत सह संबन्ध के द्वारा पाठक तक पहुंच जाता है।

बिंबवादी कवि भी जिनमें ह्यूम तथा पाउन्ड मुख्य हैं इसी प्रकार भाव के सीधे सम्प्रेषण को नहीं मानते हैं ; उसकेलिए उचित साधन की अनिवार्यता को वे स्वीकार करते हैं। इसलिए वे सशक्त बिंबों का प्रयोग करते हैं जिनसे भावों का ठीक सम्प्रेषण हो जाय।

शेक्सपीयर के नाटक "हेमलट" पर इलियट ने विचार किया और उनके अनुसार उसकी रचनात्मक समस्याओं में उसके सम्प्रेषण की असफलता मुख्य रही। इसके विश्लेषण में इलियट ने "वस्तुगत सह सम्बन्ध" का प्रतिपादन किया। काव्यगत भाव के तीन रूप हैं (1) कवि का प्रधान भाव के साथ सम्बन्ध (2) मुख्य पात्र का प्रधान भाव के साथ सम्बन्ध (3) पाठक का प्रधान भाव के साथ संबन्ध। इन तीनों के लिए वस्तुगत सह संबंध लागू होता है।

इलियट के अनुसार शेक्सपीयर के नाटक "हेमलट" में प्रधानभाव का सम्प्रेषण नहीं हुआ है। प्रधानभाव है मां के पाप का बेटे के मन पर पड़ा प्रभाव। इसमें हेमलेट की मां अपने पति के हत्यारे से शादी कर लेती है। तो हेमलेट में उपजी

---

1. The only way of expressing emotion in the form of art is by finding an 'objective correlative' in other words, a set of objects, a situation, a chain of events which shall be the formula of that particular emotion, such that when the external facts, which must terminate is sensory experience, are given, the emotions is immediately evoked-The Sacred Wood.- P-100.

घृणा या जुगुप्सा की भावना नाटक में सृष्टि नहीं होती है । शेक्सपीयर ने अपने नाटक में जिस जुगुप्सा का चित्रण करना चाहा उसमें वे सफल नहीं हुए । क्योंकि नाटक में भाव के सृष्टि के लिए या अभिव्यक्ति के लिए उचित साधन नहीं है । प्रधान भाव जुगुप्सा को पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं मिली है । क्योंकि नायक की भावना की पर्याप्त और उचित ढंग से अभिव्यक्ति नहीं होती, और नाटक में इस भाव का पर्याप्त हेतु भी नहीं है ।

नाटकों में पात्रों के बीच की स्थिति ही प्रधान भाव का प्रधान हेतु होती है । इस हेतु की उपकारक घटना, कार्य आदि होते हैं । नायक और इस स्थिति के संबन्ध द्वारा नायक में प्रधान भाव जन्मता है । प्रधान भाव को उचित ऐन्द्रिय संवेदनों एवं भावनाओं से पुष्ट एवं परिचक्व करना चाहिए था । "हेमलेट को यह समस्या परेशान करती है कि उसके मन की जुगुप्सा का कारण उसकी मां है किन्तु उसकी मां इस जुगुप्सा का उपयुक्त हेतु नहीं है[1]।"

प्रधान भाव को नायक के "वक्तव्य" स्वगत कथन" एवं "क्रिया कलाप" के द्वारा अभिव्यक्त करना चाहिए था । इस दृष्टि से "मैकबथ" सफल कृति है । अपनी पत्नी की मृत्यु की खबर पाकर जो मनःस्थिति मैकबेथ की होती है उसकी अभिव्यक्ति मैकबेथ के शब्दों द्वारा होती है ।

इलियट ने कला में भाव को अभिव्यक्त करने का एक ही साधन माना है वह है वस्तुगत सहसंबंध का अन्वेषण । वस्तुगत सहसंबंध का भाव के साथ गहरा संबंध है । कवि इसलिए ऐसे बिंबों की तलाश करता है जो पात्र द्वारा अनुभूत

1.

भाव को अभिव्यक्त करते हैं । बिंबों से सही अभिव्यक्ति भी होती है । इलियट के "वेस्टलेंड" में ऐसे अनेक बिंब उपलब्ध होते हैं जो उस काव्य को समृद्ध करते हैं ।

एफ॰ ओ॰ मार्थिसन (F.O.Matthiessen) ने इलियट के इस वस्तुगत सहसंबन्धी सिद्धान्त का विस्तृत अध्ययन के बाद कहा कि इलियट ने इस सिद्धान्त को पूर्णत: अपने काव्यों में प्रयोग किया है जिससे उन काव्यों में नाटकीयता परिलक्षित होती है[1]।" इलियट का काव्य "अरोन्ष्यन" से कुछ पंक्तियां इसका सशक्त उदाहरण है जिसमें ईसा के आगमन का परिवेश दिखाया गया है[2]।"

इलियट के भावसूत्र के अनुसार पात्रों और स्थिति के समुचित निरूपण के कारण ही कला में भाव की अभिव्यक्ति होती है । शब्द, लय और बिंब भाव के उत्कर्ष एवं उसकी परिपक्वता में सहायक होते हैं । क्रिया कलापों में भाव की अभिव्यक्ति होती है । इसलिए वस्तुगत सह संबंध ही भाव को अभिव्यक्ति देता है और श्रोताओं और पाठकों एवं दर्शकों को उसकी अनुभूति कराता है ।

काव्यभाषा

काव्यास्वादन में काव्यभाषा का अपना योगदान है । साहित्यिक भाषा के बदलते स्वरूप में काव्य स्वरूप का व्यापक प्रतिबिंबन होता है । शिल्प पक्ष का समूचा रूप भाषिक सन्दर्भ पर आधारित होता है । भाषिक सन्दर्भ के विभिन्न आयामों पर अनेकों विचार प्रस्तुत हुए हैं । बिंबवाद के संस्थापक

1.The Achievement of T.S.Eliot - P.67.

2.I am old man,
A dull head among windy spaces
Signs are taken for wonders. We would seen a sign !
The word within a word, unable to speak a word,
Swaddled with darkness. In the juvescene of the year
came Christ the tiger.

एज़रा पाउण्ड से लेकर भाषा के क्षेत्र में बहुत बड़ा आन्दोलन चल पड़ा । बिंबों को सब कुछ माननेवाले एज़रा पाउण्ड ने लिखा कि महान साहित्य वही है जिसमें केवल भाषा में यथायोग्य अर्थ भर दिया हो[1]।"

पाउण्ड ने भाषा की सार्थकता पर बल देकर उसके विभिन्न आयामों के प्रयोग करने को कविधर्म कहा । पाउण्ड से प्रभावित इलियट ने भी अपनी ओर से भाषा संबन्धी दृष्टिकोण बनाया । काव्यभाषा की चर्चा करते हुए उन्होंने लिखा "शब्द ध्वनि पर अथवा अर्थ पर बल देने की समस्या है । सर्जन-प्रक्रिया में कवि को प्रत्येक शब्द को काव्यानुकूल बनाना चाहिए[2]।"

इससे स्पष्ट है कि काव्य की महानताकीकसौटी उसमें प्रयुक्त शब्द और उसके अर्थ हैं । शब्दार्थ के बीच इस संबंध को इलियट ने नया भाषिक स्वरूप प्रदान किया है ।

काव्य भाषा की अधिकतम उपलब्धि है । किसी भी भाषा से जितना संभव है उसका समूचा रूप काव्य या साहित्य होता है । अनुभूति और अनुभवों को जाग्रत करने से भी बढ़कर काम है भाषा में उसकी अभिव्यक्ति । इसलिए भाषा का रूप निर्धारित करने में कवि को अत्यन्त सतर्क रहना पड़ता है । शब्द में अर्थ भरना, नया अर्थ भरना यह आधुनिक कवियों केलिए एक चुनौती रही है ।

भाषा का कार्य विचारों और भावनाओं को सीधे व्यक्त करना नहीं ; बल्कि उन्हें घटनाओं अथवा वस्तुओं के माध्यम से प्रस्तुत करना है । स्थायी

1.Great literature is simply language charged with meaning to the utmost possible degree- History of Criticism - P.663.

2.If a poet is to give new life to a legend if indeed he is to write good poetry at all, he must charge each words to its maximum poetic value. - Modern Verse - P.23.

साहित्य सदैव निरूपण ही होता है । शाब्दिक शक्ति के द्वारा मानवीय घटनाओं के अथवा बाह्य जगत् की वस्तुओं के रूप में या तो विचार का निरूपण होता है या भावना का । काव्यभाषा में वह शक्ति होनी चाहिए जिससे वह मानवीय अनुभूतियों और संवेगों को उचित ढंग से अभिव्यक्त करे तभी काव्य भाषा की सार्थकता होती है । अनुभूतियों के विभिन्न पक्षों को व्यक्त करने में भाषा सक्षम हो । इसलिए इलियट लिखते हैं " जो भाषा हमारे लिए महत्व रखती है वह ऐसी है जो नयी वस्तुओं, नये-नये वस्तु समूहों, नयी भावनाओं नये पक्षों को आत्मसात करने एवं अभिव्यक्त करने का प्रयास कर रही है[1]।"

भाषा और वस्तु के बीच घनिष्ठ संबंध होता है । भाषा वस्तु को प्रस्तुत करती है । और वह वस्तु के इतने निकट आ जाती है कि दोनों का तादात्म्य हो जाता है । यही अवस्था काव्य में होती है । तब काव्य भाषा पूर्ण अभिव्यक्ति केलिए सक्षम हो जाती है ।

Burnt Norton (बर्न्ट नोर्टन) के अन्तिम भाग पर इलियट ने भाषा के स्वरूप की चर्चा की है । "भाषा का रूप स्थिर नहीं रहता है, संवेग और अनुभूति के संघर्ष में, उनकी बोझ में पड़कर भाषा टूट जाती है और वह कभी एक स्थान में स्थिर नहीं रहती अर्थात् इसका अर्थ परिवर्तन होता ही रहता है[2]।"

---

1. The Language which is more important to us is that which is struggling to digest and express new objects, new groups of objects, new feelings, new aspects, as for instance, the prose of Mr.James Joyce or the earlier Conard. - Seven American Poets - P.206.

2. Words Strain
Crack and sometimes break under the burden
under the tension, slip slide, perish,
Decay with impression, will not stay in place
will not stay in still. - Four Quartets - P.19.

बदलते सन्दर्भ में भाषिक सन्दर्भ भी बदल जाता है । पुरानी अनुभूतियों और भावनाओं को अभिव्यक्त करने में जो भाषा उपयुक्त थी वह असमर्थ हो गयी है । आज की अनुभूति को अभिव्यक्त करने केलिए आज की भाषा चाहिए । "लिट्टिल गिडिंग्स (Little Giddings) में इलियट ने इसकी ओर संकेत किया है[1]।"

प्रतीक और बिंब के माध्यम से एक प्रकार के परोक्ष संप्रेषण इलियट में परिलक्षित होती है । अनेक बिंब और रूपक केवल वैयक्तिक नहीं है । वे अतीत के साथ जुडे हुए हैं । टी॰एस॰मेकसवेल ने भी इसकी पुष्टि करते हुए कहा है "इलियट ने प्रतीक और बिंबों के द्वारा सीधे संप्रेषण किया है । उनके प्रतीक और बिंब वैयक्तिक न होकर सामान्य होते हैं[2]।"

इलियट के परोक्ष ढंग की संप्रेषण प्रक्रिया खास महत्वपूर्ण है । भाषा की इकाई अर्थात् शब्द के द्वारा सीधा संप्रेषण उन केलिए मान्य नहीं है । इसकेलिए बिंबों और प्रतीकों को वे चुनते हैं जिनके माध्यम से अनुभूतियों और भावनाओं की अभिव्यक्ति और संप्रेषण हो ।

कला में अनुभूतियों और भावनाओं का संयोजन होता है । परन्तु यह संयोजन किस प्रकार हो, इस पर कला का स्वरूप निर्धारित होता है । गुरी ने लिखा है कि कला में जीवन के मौलिक अनुभवों की नयी और सार्थक अभिव्यक्ति

---

1. The Last year words belong to last years language
And next years words await another voice - Four Quartets - P.

2. Eliot too communicates indirectly by means of metapher and symbol, by a suggestive association of ideas. On the other hand his symbols and metaphor are not private and beyond the complete understanding of the outsider. It is association are with traditional literature and past eras and it is by allusion to their that his symbolism is defined. The Poetry of T.S.Eliot - P.65.

होती है[1]।" इलियट पाउण्ड से प्रभावित होकर नये नये प्रतीक और बिंबों के द्वारा अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति और स्वीकार करते हैं "दि वेस्ट लैंड" में टूटे बिंबों के द्वारा मानवीय अनुभूतियों का सहज स्वीकार इलियट केलिए सहज संभाव्य हो गया है ।

भाषिक सन्दर्भ पर इलियट की धारणा यह रही कि काव्य भाषा आम जनता की भाषा हो । और भाषा के परिवर्तित रूप को ही अपनाना चाहिए जिससे वह भाषा अभिव्यक्ति अनुकूल बन जाती है[2]।" यहाँ भाषा के प्रति आधुनिक कवि वर्ग भाषा के जनतन्त्रीकरण पर विश्वास करते हैं, ज़ोर देते हैं । साधारण जनता की भाषा की अभिव्यक्ति काव्य के सफल स्वीकार केलिए अनिवार्य अंग मान लिया गया ।

भाषा की प्रौढता या प्रौढ भाषा के प्रयोग पर इलियट जैसे अभिजात कवियों ने विशेष बल दिया है[3]।" भाषा प्रौढता प्राप्त करने के साथ अतीत के साथ सम्बन्ध भी जोडती है । अतीत की सम्पदा भरी भाषा में परंपरा बोध भी विद्यमान होगा । इस प्रकार परंपरा बोध भरी भाषा ही प्रौढ़ भाषा है । जो

---

1. Art demands the participation of powerful Seelings in the experience it provides, but these power feelings are entered, or fundamental experience of life, presented in new and signified ways. - The Appreciation of Poetry - P.56.

2. Again and again in his war time lectures he stressed the need in poetry for a common style a common language of the people the attempt reflect the changing language of common inter course - T.S.Eliot - P.269.

3. Maturity of language may naturally be expected to accompany, maturity of mind and manners; we may expect the language to approach maturity at the moment when it has a critical sense of the past, a confidence in the present and not conscious doubt of the future. - What is classic - P.14.

काव्य केलिए अनिवार्य है । अतीत, वर्तमान और भविष्य के प्रति विश्वास होना चाहिए । प्रत्येक अंग्रेज़ी कवि की अपनी भाषा रही है । परन्तु दान्ते की भाषा पूर्णत: आम भाषा रही[1]।"

काव्य की सफलता उसमें प्रयुक्त भाषा की सफलता है । काव्य की महत्ता पर चर्चा करते समय उसकी भाषा पर भी दृष्टि डालनी चाहिए । प्रत्येक कवि का यह दायित्व होता है कि उसे कालानुसार भाषा का विकास करना चाहिए । भाषा को नये अर्थों से भरना अनिवार्य है । भाषा में ही भावना, विचार और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति होती है । भाषा ही कवि और पाठक को परस्पर जोड़ती है ।

भाषा ही कला का माध्यम है । इसके द्वारा ही पाठक और लेखक के बीच संपर्क संभव होता है । अनुभूति जितनी सशक्त होती है, अभिव्यक्ति भी उतनी सशक्त होनी चाहिए । इसलिए भाषा भी सशक्त होती है । भाषा की शक्ति को बढ़ाने केलिए उसे बिंबों और प्रतीकों से भरकर अभिव्यक्ति केलिए सक्षम बनाना चाहिए । क्योंकि भाषा के आधार पर साहित्य का मूल्य निर्धारित होता है[2]।"

काव्य धर्म

साहित्य के तीन शक्तियां होती हैं । सर्जन की क्षमता, आस्वादन की

1.The language of each great English poet is his own language; the language of Dante is the perfection of a common language.- T.S.Eliot - The Man And His Work. P.275.

2.The literature must be judged by language it is the duty of the poet to develop language to preserve, and even to restore, the health of languags. - T.S.Eliot- The Man And His Work -P.275.

क्षमता एवं आलोचना की शक्ति । अर्थात् साहित्य के द्वारा तीन कार्य होते हैं - रचना, आस्वादन एवं आलोचना । इन तीनों की अपनी अपनी महत्ता है ।

काव्य एक ऐसी कला है जिसमें भाषा के माध्यम से विचारों की अभिव्यक्ति होती है । यहां काव्यधर्म विचारों की अभिव्यक्ति होता है । किसी भी वस्तु को काव्यानुकूल बनाकर उसे अभिव्यक्त करना साहित्य है । उसी प्रकार सौंदर्य ही साहित्य का मौलिक धर्म माना जाता है ।

भाषा एवं संस्कृति का विकास काव्य का धर्म होता है । कवि के मन में उत्पन्न अनुभूतियों के सांस्कृतिक परिवेश का, और उसको उचित भाषिक सन्दर्भ देकर अभिव्यक्त करना कवि धर्म है । काव्य में इसका उचित समावेश होना चाहिए ।

इलियट जब काव्य के धर्म के बारे में लिखते हैं तो उन्हें भाषा के साथ मिलाकर प्रस्तुत करने का प्रयास करते थे । उन्होंने काव्य के द्वारा भाषा एवं सभ्यता के विकास पर विशेष बल दिया है[1]।"

कवि को जीवन के सम्बन्ध में एक व्यापक दृष्टिकोण बना लेना चाहिए[2]।" वह स्वस्थ जीवन दृष्टिकोण के साथ ही अपना सर्जन कार्य कर सकता है । तब वह अपने उद्देश्य में सफल हो जाता है । उसके सामने समाज, व्यक्ति, सभी समुचित हैं । उनका सम्यक् विकास कवि का लक्ष्य होता है ।

कवि के सामने एक पाठक वर्ग होता है । उसका दायित्व उसके प्रति

---

1. When Eliot says The Social Function of Poetry in both developing the language and enriching the sensibility of the culture. - T.S.Eliot - P.270.

2. The aim of the poet is to state a vision and no vision of life can be complete which does not include the articulate formulatio of life which human minds make. - The Sacred Wood. P.170.

परोक्ष होता है । उसका प्रत्यक्ष दायित्व अपनी भाषा के प्रति होता है । उस भाषा को संचित करने और विकास करने की क्षमता को उसमें होना अनिवार्य है । यहां कवि-धर्म में भाषा संबंधी मान्यताओं को हम देख सकते है । काव्य का संबंध भाषा से है और अधिकाधिक अभिव्यक्ति ही उसका लक्ष्य बन जाती है ।

अतीत का आविष्कार भी काव्यधर्म के अन्तर्गत आ जाता है । अतीत के भण्डार में उपलब्ध बातों को वर्तमान के साथ संयोजित कराकर प्रस्तुत करना काव्य-धर्म का अंग है । कवि परंपरा का एक अंग होता है । इसलिए वह जो कुछ रचता है वह परंपरा की उपलब्धि होती है ।

काव्य का चरम लक्ष्य सीक्षा है । सफल सीक्षा ही काव्य धर्म है । काव्य-धर्म की सफलता इस सीक्षा पर निर्भर रहती है । सीक्षा की कठिनाई जहां होती है वह कवि नये नये ढंग से सीक्षा का प्रयत्न करता है । सीक्षा के बिना काव्य होता ही नहीं । उसका सामूहिक उद्देश्य भी यही सीक्षा है ।

यह सीक्षा की वस्तु क्या है । अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को प्रस्तुत करना या सीक्षित करना कवि-कर्म है?। कवि को अपनी वैयक्तिक अनुभूति को काव्यानुभूति बनाना होगा। । काव्यानुभूति के रूप में परिवर्तित करने के लिए उसे और अधिक सामूहिक बनाना है । उसी प्रकार उस अनुभूति को व्यापक धरातल पर और सार्वलौकिक बनाकर कवि को प्रस्तुत करना चाहिए । विश्व के महान साहित्यकार ने भी इस संघर्ष का अनुभव किया था[1]।* सार्वलौकिक बनाने की प्रक्रिया में कवि अपनी वैयक्तिकता का तिरस्कार करके सामान्य होता जाता है । सीक्षा का

---

1. Shakespear too was occupied with the struggle which alone constituted life for a poet to transmute his personal and private agonies into something rich and strange, someting universal and impersonal. - Selected Essays - P.117.

व्यापक मान्य भिन्न जाता है ।

कविता एक व्यक्ति द्वारा दूसरे के नाम भेजा जानेवाला खत नहीं है । कविता में अनुभूतियां अनिवार्य है । अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का यह एक ऐसा माध्यम है जिससे अनुभूतियां सब केलिए ग्राह्य और आस्वाद्य हों । तब अनुभूतियों को अपना वैयक्तिक भाव नष्ट हो जाता है । वे सब के लिए स्वायत्त हो जाती है । कवि-मन से होते हुए उनमें यह विकास हो जाता है ।

कवि भी मनुष्य होता है । इसलिए वह भी साधारण अनुभूतियों का अनुभव करता है । परन्तु एक साधारण मनुष्य उसका विकास नहीं कर पाता । कवि उसका निरंतर विकास करता रहता है । वह सहस्फुरित अनुभूतियों के द्वारा यह विकास नहीं करता, बल्कि अपने मन में निक्षिप्त अनुभूतियों की सहायता से इस विकास की ओर निर्वैयक्तिकता की ओर पहुंचता है । कवि-मन में ये अनुभूतियां विभिन्न रूप धारण कर लेती है । जब उनकी अभिव्यक्ति होती है तब वे प्रकाशित होकर नये रूप में प्रस्तुत होती है । तब यह आस्वादन के योग्य बन जाती है ।

इस रूपान्तरण में कवि को उसका ऐतिहासिक अवबोध सहायक होता है । क्योंकि सच्चे कवि में भूत-वर्तमान-भविष्य का एक सूक्ष्म अवबोध होता है ।

---

1. The materials lead Eliot to regard the poet's mind as ' a receptacle for seezing and storing up numberless feelings, phrases, images which remain there until all the particles which can unite to form a new compound and present togehher.- The Use of Poetry and Use of Criticism - P.140-41.

ऐतिहासिक बोध जिसमें होता है वही कवि होता है । इलियट ने कवि को एक व्यक्ति न कहकर माध्यम कहा है[1]।* तब उनके मन में यही विचार रहा है । इस माध्यम वह परंपरा से उपलब्ध अवबोध को अपनी ओर से अभिव्यक्त करता है ।

काव्य इतिहास को दुहराता नहीं, वह इतिहास के अवबोध से वर्तमान को सार्थक प्रस्तुत करता है । यहीं समय की सार्थकता प्रकट हो जाती है । इलियट का उद्देश्य भी यही था । उन्हें इतिहास के प्रति जो अवधारणा रही वह स्थिर थी, साथ ही परिवर्तनशील भी । ये दोनों ही कवि को सार्थकता देते हैं । कवि व्यक्तित्व से महत्त्वपूर्ण है परंपरा या संस्कृति के प्रति उसका दृष्टिकोण । इसलिए काव्य में सर्जक के वैयक्तिक मन को इतिहास के प्रति हमेशा जागरूक रहना चाहिए ।

काव्य, काव्यसर्जन तथा काव्यधर्म के सम्बन्ध में इलियट को गहरा ज्ञान था । इन विषयों का उन्होंने गहराई से अध्ययन किया । तत्संबंधी सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया । उन्होंने परंपरा-बोध को कवि केलिए अनिवार्य माना । सर्जन में कवि के निर्वैयक्तिक स्वरूप पर विशेष बल दिया । स्वीकृति की सफलता को काव्य का चरम लक्ष्य सिद्ध किया । भाषा के विभिन्न अर्थ-आयामों का उद्घाटन किया । अपने सर्जक व्यक्तित्व को सार्थक बनाया ।

1* When he regards the poet's mind as a medium rather than a personality, he insists on seperating the man and poet, experience and art; for man and experience may exist without tradition, poet and art cannot. - A Reader's Guide to T.S.Eliot - P.24.

एस॰ एच॰ वात्स्यायन : व्यक्तित्व और कृतित्व

પ્રો. પ્રો. વાત્સ્યાયન અજ્ઞેય'

अज्ञेय आधुनिक हिन्दी साहित्य के पर्याय हैं । उनकी बहुमुखी प्रतिभा ने हिन्दी साहित्य की सभी विधाओं के भण्डार को भरने का भरसक प्रयत्न किया है । इस प्रयास में वे पूर्णत: सफल हो चुके हैं । उनकी साहित्य साधना सच्चे अर्थों में सत्य:पूत है । उनके प्रतिभ व्यापार के सुपरिणाम काव्य तथा कथा के क्षेत्र में जितने शक्तिशाली है उतने ही शक्तिशाली है सिद्धान्त निरूपण के क्षेत्र में । हिन्दी में कविता के रूप, भावबोध एवं प्रस्तुतीकरण को नया आयाम देने और आधुनिक मानसिकता से पूरी तरह जोड़ने में वात्स्यायन की भूमिका सर्वाग्रमुख रही है ।

अज्ञेय के व्यक्तित्व पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट होगा कि उनमें असाधारण प्रतिभा थी । और उस प्रतिभा का सदुपयोग भी हुआ है । जीवन की विभिन्न घटनाओं ने उस व्यक्तित्व को पूर्ण विकास के तल पर पहुंचा दिया अज्ञेय के जीवन में ऐसे अनेक मोड़ हैं जहां से उनकी काव्य साधना नयी करवटें लेती रही । घटनाएं सभी के जीवन में होती है लेकिन वही उनसे पूर्णतया प्रभावित होता है जिसमें तीक्ष्ण प्रतिभा हो और पैनी दृष्टि हो । अज्ञेय की प्रतिभा के सहज विकास में उनके परिवेश का महत्त्वपूर्ण योगदान है । धीरे-धीरे बढ़कर काव्य क्षेत्र में उच्चतर स्थान में निरन्तर विराजमान रहना अज्ञेय की चरम उपलब्धि है ।

माता - पिता

डा॰हीरानंद शास्त्री भारत के पुरातत्व विभाग की सेवा में उच्च अधिकारी थे । संस्कृत भाषा के प्रखर पंडित थे वे । कठोर अनुशासन तथा प्रतिभा का स्वतन्त्र विस्तार उनके इष्ट साधन थे । भगोत सारस्वत ब्राह्मण कुल के सदस्य थे शास्त्री । निर्भयता उनके रक्त में घुलमिल गयी थी । 7 मार्च 1911 में कसिया में जो कुशीनगर नाम से जाना जाता है, उनका एक पुत्र हुआ । उनका नाम रखा सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन ।

प्रारंभिक शिक्षा

योग्य पिता के सुपुत्र के रूप में वात्स्यायन घर और बाहर बढ़ने लगा। प्रारंभिक शिक्षा संस्कृत मौखिक परंपरा से हुई । संस्कृत के पंडित ने अपने शिष्य सच्चिदानंद को रघुवंश, रामायण, हितोपदेश आदि पढ़ाया । अपने पिता के साथ वे श्रीनगर और जम्मू गये और वहां अमेरिकी पादरी के साथ उनका संबन्ध हुआ । इसी समय वे गीता, बौद्ध ग्रन्थ और वर्डसवर्थ, टेनिसन, शेक्सपीयर आदि अंग्रेज़ी कवियों का भी अध्ययन करते रहे ।

1925 में इण्टर मीडियट के लिए मद्रास क्रिस्टियन कालिज में भर्ती हुए । यहां अंग्रेज़ी के प्रोफेसर हेण्टरसन ने सच्चिदानंद को साहित्य की ओर आकृष्ट किया । इसी वक्त उन्हें दक्षिण के कई मन्दिर और नीलगिरि पर घूमने का अवसर मिला । जिससे उनमें प्रकृति और चित्रकला की ओर विशेष आकर्षण उत्पन्न हुआ । इण्टरमीडियट के बाद बी॰एस॰सी॰ केलिए वे लाहोर के

फारमान कॉलेज में आये । यहाँ वे स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेने लगे । बी॰एस॰सी के बाद अंग्रेज़ी में एम॰ए॰ करने लगे ।

स्वतन्त्रता संग्राम में योगदान

इसी बीच कोठरी के साथ अज्ञेय ने एक सुदृढ़ संबन्ध जोड़ दिया था । स्वतन्त्रता संग्राम के अन्तर्गत क्रान्तिकारी आन्दोलनों में भाग लेने से कई बार जेल जाने का मौका उन्हें मिला । चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव, भगवतीचरण वोहरा आदि क्रान्तिकारियों से लगातार मिलते रहे । जेल का जीवन उन्हें अपने व्यक्तित्व को सुदृढ़ बनाने में सहायक हुआ । जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण स्थापित करने और उसे व्यापक बनाने में वे उस समय सफल हुए । युद्ध क्षेत्र में काम करने से तत्संबन्धी बातों से वे अवगत हुए । अपनी वैयक्तिक विचारधारा के अनुसार ही स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेते रहे ।

वैवाहिक जीवन

लाहोर से लौटने के बाद जुलाई सन् 1940 में अज्ञेय ने विवाह किया । अगस्त में वे पत्नी से अलग हुए । 1946 में विवाह विच्छेद हो गया । 1943 में सेना में नौकरी करने लगे । कुछ समय के बाद उसे छोड़कर साहित्यिक क्षेत्र में आये । 1956 में श्रीमती कपिला से अज्ञेय का विवाह हुआ ।

अज्ञेय का पूरा जीवन एक विराट और प्रकांड भारतीय मेधा की बौद्धिक और सृजनात्मक उँचाईयों का एक चुनौतीपूर्ण और गौरवशाली शीर्ष बिंदु है । जहाँ उनकी बुद्धि राजनैतिक मन्थन में आलोड़ित हो रही थी, वहाँ

दूसरी ओर उनका अत्यन्त संवेदनशील हृदय, नये घात-प्रतिघातों में एक विषम अवस्था से गुज़र रहा था । उनके वैयक्तिक जीवन पर प्रकाश डालते हुए श्री विद्यानिवास मिश्र लिखते हैं "वे सर्वथा सहज थे । परिष्कृत रुचि भी उनकी सहज थी । किसी को भी तुम नहीं कहते थे । यह शालीनता ओढी हुई नहीं थी, सहज थी[1]।"

वे जीवन भर निर्भय होकर रहते थे । जीवन की ओर आने पर अनेक घात-प्रतिघातों का सामना करना पडा । भावना और यथार्थ के बीच के वास्तविक अन्तर को वे समझ गये थे । जो कुछ उन्होंने देखा, अनुभव किया उसका लेखन उनका उद्देश्य रहा । विद्यानिवास मिश्र ने महसूस किया कि "वे अपनी देखी या पायी सचाई देना चाहते थे, इसलिए दूसरों की देखी, पायी सचाई के प्रति ग्रहणशील थे । वे जितने आग्रही थे, उतने ही दूसरों के आग्रह के प्रति क्षमाशिष्णु भी थे[2]।" अज्ञेय के व्यक्तित्व का एक सशक्त पक्ष इस कथन में उपलब्ध होता है । उनकी इस दृढ़ आस्था पर बल देते हुए मिश्रजी आगे लिखते हैं "भाई बडे जिद्दी थे, बचपन से जिद्दी थे, जिसे उन्होंने अपना सच माना, उसके लिए कुछ भी उत्सर्ग कर सकते थे ।"

अज्ञेय का कवि व्यक्तित्व

अज्ञेय की प्रतिभा असाधारण रही । तीक्ष्ण प्रतिभा से अभिभूत उनका व्यक्तित्व विभिन्न पक्षों में विकसित हुआ । उनमें पहला है उनका कवि व्यक्तित्व । अज्ञेय का काव्य संसार जितना व्यापक है उतना ही उनका

---

1. दिनमान 12-18 , जुलै, 1987
2. वही " " "

काव्यानुभव भी । कविता की द्रुतधारा में वे सब कुछ भूल जाते थे । श्री॰चन्द्रकांत बांदिवडेकर ने उस पर अपना विचार प्रकट किया है "अज्ञेय केलिए काव्यानुभूति जीवनानुभूति का पर्याय नहीं है, यद्यपि जीवनानुभूतियों से उसका अनिष्ठ संबन्ध है । काव्यानुभूति को जीवनानुभूति से विशिष्टता देनेवाली महत्वपूर्ण बात काव्यानुभूति की प्रक्रिया है । जीवनानुभूति को काव्यानुभूति का स्वरूप देनेवाली पहली वस्तु कवि की आत्माभिव्यक्ति को दूसरों पर अभिव्यक्त करने की आन्तरिक आकांक्षा है - सीधा और साधारण की मांग है[1]।" काव्यानुभूति को अज्ञेय अधिक महत्व देते हैं । कविता के माध्यम से वह दूसरों तक पहुंचना चाहते हैं ।

अपने साहित्य संबंधी दृष्टिकोण को अज्ञेय ने त्रिशंकु में व्यक्त किया है "साहित्यिक कोई भी कलाकार अनिवार्य रूप से अपनी परिस्थितियों का परिणाम होता है । वह अपने आसपास के संघर्ष का फल है । उसमें आत्यन्तिक संतुलन नहीं है, न कभी हो सकता है । साहित्यकार होने के नाते ही वह चंचल है, अस्थिर है, असन्तुष्ट है । उसकी यही अस्थिरता और असन्तोष उसको घेरनेवाले बाहरी संघर्ष का भीतरी प्रतिरूप है । साहित्य- या कैसी भी कलात्मक रचना, सृष्टि - इस मौलिक संघर्ष का फल है । इस हल करने केलिए कलाकार के प्राणों का उत्कट प्रयास है -- कला संघर्ष का फल है । अतः कलाकार अनिवार्य रूप से गतिमात्र है, उसमें एक बलवती प्रेरणा काम कर रही है जो उसे स्थिर रहने नहीं देती और जिसके दबाव के कारण वह किसी प्रकार के सामंजस्य की ओर बढ़ता है[2]।"

1॰ कविता की तलाश - पृ॰17॰
2॰ त्रिशंकु - पृ॰76॰

अज्ञेय का साहित्य संबंधी यह दृष्टिकोण उनके काव्य सर्जन के विभिन्न आयामों में बिलकुल सही उतरता है ।

संघर्ष का फल ही साहित्य है । संघर्ष परिवेश और व्यक्ति के बीच का संघर्ष, वही साहित्य में प्रेरणा देता है । अज्ञेय के जीवन में बचपन से लेकर यह संघर्ष और तनाव अनवरत दृष्टिगत होता है । "कविता की तलाश" में श्री चन्द्रकान्त बांदिवडेकर इस पर अपना दृष्टिकोण व्यक्त किया है "अज्ञेय के अनुभव संसार में तनाव ही तनाव था । यह स्वाभाविक था कि अनुभव को ग्रहण करने से लेकर शब्दों के माध्यम से उसे व्यक्त करने तक की प्रक्रिया में अज्ञेय ने एक तनाव को अनुभव किया[1]।" इसलिए उसे किसी भी प्रकार के समझौता या सामंजस्य करना था । सर्जन में उद्भूत यह तनाव सर्जक केलिए प्रेरणाजनक शक्ति है । इस प्रेरणा को ग्रहण करके ही उन्होंने रचना की है ।

अज्ञेय की काव्य रचनाएं

प्रारंभ में औरों कवियों के प्रभाव में आकर छोटी मोटी औरों कविताएं लिखते थे । बाद में हिन्दी में कविता रचने लगे । प्रारंभिक कविताओं में छायावाद का प्रभाव परिलक्षित होता है । अज्ञेय के कवि व्यक्तित्व की महान उपलब्धि है "भग्नदूत" (1933) चिन्ता (1942) इत्यलम (1946) हरीघास पर क्षणभर (1949) बावरा अहेरी (1954) इन्द्रधनु रौंदेहुए (1957) अरी ओ करुणामय (1959) आंगन के पार द्वार (1961) पूर्वा (1965) सुनहले शैवाल (1965) कितनी नावों में कितनी बार (1967) क्योंकि मैं उसे जानता हूँ (1969)

---

1. कविता की तलाश - पृ.14.

सागर मुद्रा (1970) सदानीरा (1986) ऐसा कोई घर आपने देखा है (1986) प्रिज़न डेज़ एण्ड अदर पोयम्स (1946)

अज्ञेय कवि के मानस का, दायित्व का कर्म का विवेचन उसे एक अलग द्वीप मानकर नहीं करते थे, समस्त परिवेश-सांस्कृतिक, साहित्यिक, राजनीतिक और सामायिकता के उलझे वैचारिक भावनात्मक तन्तुओं के बीच ही कवि-कर्म की जटिलता का विवेचन करते रहे। परिवेश और कवि कर्म की जटिलताओं ; बाह्य यथार्थ और कवि का अपना स्वार्थ तथ्य और सत्य, परंपरा और प्रयोग ये सारे द्वन्द्व या तनाव अज्ञेय के काव्य चिंतन में बार-बार परिलक्षित होते हैं। और उनके बीच सन्तुलन का जो लक्ष्य सिद्ध किया है वह टकराव के बीच से गुज़रकर किया गया है।

सृजनशील साहित्यकार के नाते अज्ञेय व्यक्ति की सर्जन प्रक्रिया और उस सृजन को निश्चय ही स्वायत्त मानते हैं। लेकिन यह स्वायत्तता वास्तविकता या सामाजिकता से असंपृक्त नहीं है। व्यष्टि-समष्टि संबन्धी अपने काव्यचिंतन में अज्ञेय हमेशा व्यष्टि के साथ समष्टि को भी साथ लेते रहे। अपने अनुभवों की पुष्टि के लिए उन्होंने सामाजिक परिवेश का पर्याप्त उपयोग किया है। इसलिए अपनी व्यक्ति सत्ता को सुरक्षित रखकर भी समष्टि की ओर हमेशा वे समर्पित रहे। "नदी के द्वीप" नामक अपनी कविता में उनका यह दृष्टिकोण प्रकट हुआ है[1]।"

अज्ञेय की कविताओं में जीवन के प्रति एक स्वस्थ दृष्टिकोण उपलब्ध होता है। जीवन के अपरिमेय अर्थ के प्रति वे सजग हैं और जीवन के प्रत्येक क्षण के

---

1. किन्तु हम हैं द्वीप
हम धारा नहीं हैं
स्थिर समर्पण है हमारा, हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के
आज के लोकप्रिय कवि : अज्ञेय - पृ. 700.

उसकी पूर्णता में ही जाना चाहते हैं । मिट्टी के प्रति उनका लगाव एक महत्वपूर्ण बात है । साधारण जीवन के विभिन्न पक्ष प्रकृति के विभिन्न स्वरूप, लोक जीवन के विभिन्न अंग आदि को उजागर करने योग्य प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से पृथ्वी के जीवन को उन्होंने प्रस्तुत किया है । कविताओं में नये प्रतिमान को ढूंढने का प्रयास है लेकिन मूल्यों को नकारते हैं । जिन मूल्यों के प्रति मनुष्य का रागात्मक संबंध है उन्हें वे उच्च मानते हैं ।

रचना प्रक्रिया में कलाकार के मूल्य-सम्बन्धी दृष्टिकोण पर कृष्णलाल ने गंभीर अध्ययन किया है । उनके अनुसार "रचना प्रक्रिया के दौरान कलाकार अपने जीवन-मूल्यों और जीवन-दृष्टि के अनुरूप ही अपने अभिव्यक्त शिल्प को न केवल विकसित करता है, बल्कि उसका निर्माण भी करता है । अभिव्यक्त शिल्प के विकास और निर्माण की संभावना तभी हो सकती है : जब कलाकार बाह्य जीवन और जगत् से प्राप्त अपने अनुभव संवेदनाओं, जीवन-मूल्यों, जीवन दृष्टियों को विकसित करता रहता है[1]।" बाहरी और भीतरी संघर्ष का स्वरूप भी उनकी कविताओं में है । उन कविताओं के द्वारा अज्ञेय ने काव्य सत्य पर पहुँचने का सफल प्रयत्न किया है ।

आलोचक अज्ञेय

अज्ञेय के कवि व्यक्तित्व की पूर्णता तभी होती है जब उसके साथ उनके आलोचक व्यक्तित्व को भी जोड़ दें । अज्ञेय एक सफल कवि होने के साथ एक समर्थ आलोचक भी है । आलोचना के क्षेत्र में अपनी मौलिक उपलब्धियों के कारण

---

1. तारसप्तक के कवि : काव्य शिल्प के मान : पृ.25.

हिन्दी साहित्य में अज्ञेय प्रखर आलोचक माने जाते हैं । उनकी आलोचना आलोचक का वक्तव्य न होकर कवि का वक्तव्य है या सर्जनात्मक आलोचक का कवि-वक्तव्य ।

कवि ही कविता का वक्ता हो सकता है, यही उनका अभिमत है । काव्य चिंतन संबन्धी अनेक मौलिक बातों को अपने आलोचनात्मक निबन्धों के द्वारा अज्ञेय ने प्रस्तुत किया है । कवि, कविता, सौंदर्य, प्रयोग आदि अनेक गहरे विषयों पर अत्यंत मौलिक और गंभीर विचार उन्होंने प्रकट किये हैं । उनके प्रमुख आलोचनात्मक ग्रन्थ हैं - त्रिशंकु (1945) सतरंग (1946) आत्मनेपद (1960) हिन्दी साहित्य एक आधुनिक परिदृश्य (1967) आलवाल (1971) लिखि कागद कोरे (1972) भवन्ती (1972) अन्तरा:अन्तःप्रक्रियाएं (1975) आत्मपरक (1983) सर्जना के क्षण (1979) अद्यतन (1977) बारह खम्भा (1987) साहित्य और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया (1985) छाया का जंगल (1984) केन्द्र और परिधि (1984) और भारतीय कला दृष्टि ।

अज्ञेय ने अपने आलोचनात्मक वक्तव्यों में कवि और कविता संबंधी अनेक मौलिक विचार प्रकट किये हैं । आलोचना की आवश्यकता पर बल देते हुए वे लिखते हैं "आलोचना गौण या उपजीवी कर्म भले ही हो, कवि को उसकी आवश्यकता रहती है । आलोचना की अनुपस्थिति में वह मुर्झाता है, उसकी प्रतिभा मलिन होती है[1]।" आलोचना सर्जनात्मक होती है, होनी चाहिए । रचनात्मक व्यक्तित्व से संबंधित विभिन्न पक्षों को उभारनेवाली आलोचना से सचमुच लाभ होगा । आलोचक को भी मौलिक रचना मानने पर उसकी वास्तविक

---

1. भवन्ती - पृ. 44.

महत्ता स्पष्ट होगी ।

अज्ञेय ने जो कुछ आलोचना नाम से लिखा है वह अत्यन्त सार्थक है । काव्य सत्य, कविता और कवि व्यक्तित्व, भाषा, सर्जन प्रक्रिया, अनुभूति की प्रामाणिकता आदि विषयों पर अज्ञेय के विचार मौलिक और विशिष्ट है । रचना प्रक्रिया के साथ संप्रेषणीयता, आधुनिकता के साथ परंपरा पर भी उन्होंने विचार किया है । वे लिखते हैं कविता की आलोचना तभी सार्थक होगी जब वह कवि-दृष्टि पर भरोसा कर सके[1]" । अज्ञेय ने अधिकतर अपनी ही रचनाओं पर विचार किया है । दूसरों की रचनाओं की प्रतिक्रिया उनमें कम है । अज्ञेय आत्मतृप्ति के लिए आत्म चर्चा के पक्ष में नहीं बल्कि अजस्र संवेदना के खरेपन में मग्न रहना चाहते हैं ।

कहानीकार अज्ञेय

अज्ञेय की कहानियां उनके उत्कट अनुभवों का संचय है । अज्ञेय ने अपने क्रान्तिकारी जीवन के विभिन्न पहलुओं से संपृक्त कहानियां लिखी है । उनकी कहानियों का अध्ययन करने के बाद सुनीता वशिष्ठ ने कहा " अज्ञेय शुद्ध मनोवैज्ञानिक कहानीकार हैं तथा उनका दृष्टिकोण व्यक्तिवाद रहा है । अज्ञेय के व्यक्ति चरित्र अपनी संपूर्ण इकाई के साथ सामाजिक परिवेश में जीवित हैं । वे भले ही आत्मनिष्ठ, आत्मकेन्द्रित और गहरे चरित्र दिखलाई देते हैं । किन्तु उनके गहन अन्तःस्थल में एक सामाजिकता और उसे प्राप्त करने के लिए संघर्ष दिखाई देता है[2]।"

---

1. लिखे कागद कोरे - पृ. 76.

2. अज्ञेय, धर्मवीर भारती और मोहन राकेश की कथायात्रा

जीवन के विभिन्न पक्षों को छूनेवाले कथाकारों को लिखकर अज्ञेय ने सर्जन संबंधी तनाव से मुक्ति पाई है । अपनी कुछेक कहानियों के द्वारा एक अलग लोक ही बना डालने में वे सफल हुए । कहानी के प्रति अज्ञेय उतने नहीं जितने काव्य के प्रति है । फिर भी अनेक श्रेष्ठ कहानियों की प्रस्तुति में वे सफल हुए हैं । विपथगा (1967) परंपरा (1944) कोठरी की बात (1945) शरणार्थी (1948) जयदोल (1951) ये तेरे प्रतिरूप (1961) अमर वल्लरी और अन्य कहानियाँ (1954) कड़ियाँ और अन्य कहानियाँ (1957) अछूते फूल और अन्य कहानियाँ (1960) जिज्ञासा और अन्य कहानियाँ (1965) आदि उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं ।

अज्ञेय कहानी की आत्म मूलकता पर विशेष बल देते हैं । देश के विभाजन के अवसर पर लिखी कहानियों में मानव सम्बन्धों की सूक्ष्मता का अनावरण है । क्रान्तिकारी चेतना से अभिभूत कहानियों के बाद सामाजिक चेतना संपन्न "एगोडाक्षा" आदि कहानियों की रचना की । स्त्री-पुरुष-संबंध के विविध आयामों पर प्रकाश डालनेवाली कहानियाँ भी अज्ञेय ने लिखी है । सामन्ती मूल्यों तथा रियासती रीतियों की सच्चाई की ओर प्रकाश डालती है "चिड़िया घर" कहानी । "रमन्ते तत्र देवता" के द्वारा हिन्दु समाज में स्त्री की विवशता, उसके गौरव, और मर्यादा की सारी खोखली बातों के साथ व्यावहारिक स्तर पर उनका शोर अपमान और अवमानता आदि की चर्चा की है । कहानी का मूल स्रोत जीवन है, अपने आस पास के जीवन का निरंतर और अबाध प्रवाह । इस मूल स्रोत से कटकर कहानी लिखी नहीं जा सकती ।

उपन्यासकार अज्ञेय

हिन्दी उपन्यास को अज्ञेय ने एक नई संपन्नता प्रदान की है । उनका उपन्यास साम्राज्य केवल तीन उपन्यासों पर निर्भर है लेकिन उस साम्राज्य की व्यापकता असीम है । शेखर एक जीवनी (1954) नदी के द्वीप (1922) अपने अपनी (1961) हैं ये तीन उपन्यास ।

हिन्दी औपन्यासिक जगत में उनका योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है । अज्ञेय की रचनात्मक दृष्टि इन उपन्यासों से व्यक्त होती है । आज के तीव्र संकटबोध में भी मनुष्य निरानंद नहीं होता है । मनुष्य के मनोवैज्ञानिक अध्ययन को प्रस्तुत करने में अज्ञेय के उपन्यास सक्षम हैं । स्त्री-पुरुष सम्बंधों के विभिन्न पक्षों पर प्रकाश डालता है उपन्यास "नदी के द्वीप" । मूल्यसंबंधी परिकल्पना से अभिभूत अपने-अपने अजनबी" भी सफल उपन्यास है । अज्ञेय के उपन्यास नये मानव संबंध की व्याख्या करते है । जटिल मनोभावों एवं सूक्ष्म संवेदनों और गंभीर विचारों को व्यक्त करने की क्षमता अज्ञेय के उपन्यासों में है । मानव मन के सूक्ष्मातिसूक्ष्म पक्षों का उद्घाटन करने में उनके उपन्यास सफल हुए हैं ।

यायावर

जीवन के अक्षय अनुभवों को प्राप्त करने में अज्ञेय की यायावरी मानसिकता अधिक सहायक हुई है । अज्ञेय सचमुच एक यायावर हैं । उनके व्यक्तित्व में इस यायावर या घुमक्कड़ पक्ष अत्यन्त प्रबल है । देश-विदेश में भ्रमण करके विभिन्न संस्कृतियों के अध्ययन-विश्लेषण करने का उन्हें सुयोग प्राप्त हुआ । भारत के विभिन्न प्रान्तों में घूम-घूम कर वहाँ लोगों के जीवन के सांस्कृतिक,

धार्मिक, सामाजिक एवं राजनीतिक पहलुओं से गहरा संपर्क एवं संबंध स्थापित करने में वे सफल हुए । इसके फलस्वरूप उन्हें व्यापक जीवन दृष्टिकोण उपलब्ध हुए ।

अज्ञेय की सीमा भारत तक नहीं रही । ने अमेरिका, रूस, फ्रान्स, युगोस्लाविया, जापान, मंगोलिया तथा आस्ट्रेलिया का सफर उन्होंने किया है । इस प्रकार युरोप तथा ऐशिया के सांस्कृतिक और धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन का व्यापक अनुभव उन्हें प्राप्त हुआ । इनसे प्रभावित होकर उन्होंने अरे यायावर रहेगा याद (1953) तथा एक बूंद सहसा उछली (1961) नामक दो भ्रमण-वृत्तान्त को लिख डाला ।

अज्ञेय यात्रा को समर्पित यात्री हैं । व्यापक अनुभव को अभिव्यक्त करने योग्य भाषा उनमें थी । इसलिए ये यात्राएं उनको सर्जन-प्रक्रिया का एक पहलू बन गयी । विभिन्न संस्कृतियों के निकट आने का अवसर मिला । जिससे उनकी अनुभूति जगत में व्यापकता आयी ।

संपादक अज्ञेय

अज्ञेय का संपादक व्यक्तित्व काफी उज्ज्वल और प्रखर है । वे महान साहित्यकार हैं । साहित्य सम्बन्धी अनेक अवधारणाएं स्वभावतया उनमें थी । उनके अभिव्यंजन के लिए साहित्य सर्जन के अतिरिक्त संपादन कार्य भी बहुत सहायक हुआ । अपने संपादकीय के द्वारा अज्ञेय ने अनेक महत्त्वपूर्ण काव्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया ।

पत्रिकाओं का संपादन कार्य

अज्ञेय के संपादक व्यक्तित्व का प्रथम सोपान हिन्दी पत्रिकाओं से संबन्धित है । सबसे पहले "सैनिक" साप्ताहिक के संपादक के रूप में अज्ञेय ने कार्य किया । बाद में 1937 में "विशाल भारत" में आये । "विशाल भारत" के द्वारा उन्होंने इस क्षेत्र में काफी परिचय प्राप्त किया । उसके बाद "आरती" के साथ जुड गये ।

अज्ञेय की सबसे बडी उपलब्धि है "प्रतीक" त्रैमासिक । प्रतीक के माध्यम से अज्ञेय अपने काव्य चिंतन को निरंतर व्यक्त करने लगे । अन्य लेखकों को लिखने के लिए इस पत्रिका के द्वारा उन्होंने प्रोत्साहन दिया । हिन्दी को अन्य प्रादेशिक और अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यों के नवीनतम प्रयोग से अवगत करवाया ।

कुछ समय के लिए संसदीय हिन्दी परिषद के त्रैमासिक "देवनागर" के संपादक पद पर वे विराजमान थे । यहाँ से "दिनमान" के संपादक पद संभालने लगे । "दिनमान" के द्वारा वे साहित्य तथा राजनीति संबंधी देश के धुरंधर विद्वानों के विचार प्रस्तुत किये और करने लगे । लेकिन कुछ समय के पश्चात् उसके संपादक पद को उन्होंने छोड़ दिया । परंतु एक संपादक के रूप में अज्ञेय ने तब तक बडी सफलता हासिल की थी । 1977 में वे "नवभारत टाइम्स" के संपादक पद पर आ गये ।

पुस्तकीय संपादन कार्य

अज्ञेय ने पत्रिकाओं के अलावा अनेक रचनाओं का भी संपादन किया । इनमें दिये गये वक्तव्य सचमुच अज्ञेय की साहित्यिक पटुता के ही उदाहरण है । इन वक्तव्यों के द्वारा अज्ञेय ने अनेक प्रचलित धारणाओं का खण्डन करके साहित्य

केलिए नयी मान्यताएं प्रदान कीं । उन्होंने बहुत सी रचनाओं का संपादन किया है । उनमें प्रमुख है - आधुनिक हिन्दी साहित्य (1942) तार सप्तक (1943) दूसरा सप्तक (1951) तीसरा सप्तक (1959) पुष्करिणी (1959) मेहर अभिनंदन ग्रन्थ (1949) नये एकांकी (1952) हिन्दी की प्रतिनिधि कहानियां (1952) रूपांबरा (1960) चौथा सप्तक (1979) सवधा (1983) साहित्य का परिवेश (1985) ।

इनमें सप्तकों का स्थान विशेष महत्वपूर्ण है । सप्तकों के माध्यम से अज्ञेय ने हिन्दी कविता को ही नया रूप प्रदान किया और काव्य-संबन्धी सर्जन प्रक्रिया, सौंदर्य, काव्य-सत्य, एवं भाषा संबन्धी विषयों पर अपने गंभीर विचार प्रस्तुत किये । उनके वक्तव्य काफी प्रचलित और गंभीर है ।

अज्ञेय नाटककार

नाटक को भी अज्ञेय ने अपनी प्रतिभा से अलंकृत किया है । नए एकांकी के संपादन के साथ-साथ उन्होंने उत्तर प्रियदर्शी (1967) नाटक की रचना की है । नाटक के क्षेत्र में उनका योगदान सीमित है । लेकिन नाटक संबंधी अनेक विषयों पर उन्होंने मौलिक विचारों को प्रकट किया है । एकांकी नाटक को आधुनिक साहित्य की एक विशेष विधा के रूप में उन्होंने चित्रित किया है ।

मृत्यु

अज्ञेय एक महान, एक मूर्धन्य कथाकार एक प्रखर आलोचक, एक अद्वितीय शिल्पि, एक अथक यायावर, एक दुर्जय योद्धा, एक निर्भीक पत्रकार एक आस्थावा चिंतक एक प्रेरक अन्वेषी और एक साधारण मनुष्य रहे उस महामानव की मृत्यु 4 अप्रेल 1987 में हुई । वे जीवन भर हिन्दी भाषा एवं साहित्य भण्डार को

भरने का सफल प्रयास करते रहे । उनका पूरा जीवन एक विराट और प्रकांड भारतीय मेधा की बौद्धिक और सृजनात्मक उंचाइयों का एक चुनौतीपूर्ण और गौरवशाली शीर्ष बिन्दु है ।

अज्ञेय संस्कृति के वक्ता

अज्ञेय की हिन्दी साहित्य सेवा बहुमुखी है और अत्यन्त मूल्यवान भी । साहित्य सर्जन में निरत होते हुए साहित्य संबंधी अपने दृष्टिकोण को वे विकसित करते रहे । भारतीय संस्कृति और परंपरा का उनके रचनायन में बड़ा योगदान है । अज्ञेय भारतीय संस्कृति के प्रति विशेष आस्थावान हैं । संस्कृति को साहित्य का सर्वाधिक महत्वपूर्ण मूल्य मानकर अज्ञेय ने साहित्य में आनेवाली सांस्कृतिक गिरावट को रोकने का प्रयास किया । इस संबन्ध में उनका विचार है "साहित्य किसी एक काल में किसी एक जाति अथवा समाज की संपूर्ण संस्कृति की उपज होती है । उसके वर्तमान में संस्कृति का समूचा इतिहास निहित होता है । किसी भी सभ्य में साहित्य संस्कृति के उस सभ्य के विश्व-दर्शन को प्रतिबिंबित करता है और साथ ही उस जाति के उस सभ्य के आत्म दर्शन को और अस्मिता बोध को भी प्रतिबिंबित करता है[1]।" संस्कृति व्यक्ति और समाज के बीच की अखण्ड इकाई है ।

साहित्य का मूल आधार संस्कृति और संस्कृति की आधार-शिला नैतिकता है । अज्ञेय के अनुसार संस्कृति पारम्परिक अनुभव संचय और उसपर आधारित नैतिक, सामाजिक और कला संबन्धी मान्यताओं का दूसरा नाम है[2]।" सांस्कृतिक परिवेश का प्रभाव साहित्यकार पर पड़ता है । इस विषय पर अज्ञेय के विचार ध्यान देने योग्य है "साहित्यकार जिस संस्कृति में रहता है उसका

---

1. संवत्सर - पृ.49.
2. अज्ञेय गद्य में - पृ.25-26.

विश्व-दर्शन भी उसके परिवेश का एक अंग है, क्योंकि वह उसकी मानसिकता को बनाता है, वह ढांचा खड़ा करता है । जिसके भीतर उसके मनोभावों का घात-प्रतिघात वह तनाव पैदा करता है जो सर्जना का कारण बनता है[1]।" सर्जन में संस्कृति की महत्ता का उल्लेख यहाँ मिलता है । सर्जक सर्जन की मानसिकता को संस्कृति एवं उसके परिवेश से उपलब्ध करता है ।

भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं का उद्घाटन अज्ञेय की आलोचना में हुआ है । संस्कृति के विकास के साथ उसके स्वरूप पर भी अज्ञेय ने विचार किया है । संस्कृति के प्रति एक समन्वयात्मक दृष्टिकोण होना चाहिए । अज्ञेय ने कहा "संस्कृति मात्र समन्वित होती है क्योंकि एक समन्वित दृष्टि ही उसकी एकता का आधार होती है[2]।" संस्कृति की ओर अज्ञेय का एक स्वतंत्र दृष्टिकोण रहा है

अज्ञेय : परंपरा की उपलब्धि

परंपरा के बिना कवि का अस्तित्व नहीं है । अपने विकास केलिए कवि या कलाकार परंपरा के भण्डार से सामग्री ग्रहण करता है । "किसी कवि, चिंतक या कलाकार का विकास शून्य में नहीं होता । वह कितना ही परंपरा भंजक, विद्रोही और प्रगतिशील क्यों न हो, किसी न किसी रूप में परंपरा से अवश्य ही जुड़ा रहता है, उसकी जीवन पद्धति, उसका इतिहास संस्कृति और वर्तमान परिस्थितियाँ उसे प्रभावित करती ही है । जहाँ एक ओर प्राचीन संस्कार उसके व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं वहाँ दूसरी ओर उसका परिवेश भी उसे ढलता रहता है । जो कवि जितना अधिक प्रतिभाशाली होगा और जिसकी चेतना जितनी अधिक जागरूक और तीव्र होगी वह उतना ही अधिक अपनी परंपरा

---

1. साहित्य का परिवेश - पृ. 104.
2. वही - पृ. 105.

और परिवेश से प्रभावित होगा[1]।"

अज्ञेय अपने को परंपरा से जोड़ना चाहते थे। क्योंकि वे परंपरा में ही अपने सर्जन की प्रेरणा पाते थे। मलयज ने इस विषय में लिखा है "अज्ञेय में परंपरा से अपने को सार्थक ढंग से जोड़ने की सबसे अधिक ललक दिखाई देती है। परंपरा के वास्तविक जीवन्त अर्थ की नयी व्याख्या द्वारा ही अज्ञेय उस साहित्यिक अराजकता के माहौल का सचेत प्रतिकार कर सकते थे। कविता की उखड़ती हुई जड़ों को पूर्णतः विच्छिन्न हो जाने से रोक सकते थे[2]।" अतीत की उपलब्धि से वे काव्यसर्जन को नया रूप देना चाहते थे। उन्होंने परंपरा में मूल्यों का अन्वेषण करके उसे प्राप्त किया। इसलिए अतीत के प्रति समर्पित होकर उसकी देन को सहज स्वीकार करने में वे सफल हुए।

अज्ञेय को बचपन से लेकर परंपरा का गहरा अवबोध प्राप्त हुआ था। उन्होंने लिखा है "मेरा बचपन ऐतिहासिक खंडहरों में बीता, जो आज भी हमें अपने गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलाते हैं। प्राचीनता से संबद्ध शक्ति के बिना हम राष्ट्र का क्रान्तिकारी पुनर्निर्माण नहीं कर सकते। राम-कथा का सदुपयोग भी हम क्रान्तिकारी सर्जना के लिए करना चाहते हैं[3]।" इसलिए अज्ञेय के साहित्यिक व्यक्तित्व का विकास परंपरा की दृढ़ नींव पर हुआ है। जीवन भर वे परंपरा के प्रति सचेत रहे।

अज्ञेय परंपरावादी नहीं हैं, परन्तु परंपरा का निषेध नहीं करते हैं। परंपरा का अन्धानुकरण उन्हें इष्ट नहीं है, परंतु परंपरा या अतीत में जो सार है उसको प्राप्त करना उनके अनुसार कवि-कर्म है। अतीत की अन्तर्धारा में

---

1. अज्ञेय का अन्तर्क्रिया साहित्य - पृ.187.
2. कविता से साक्षात्कार - पृ.33.
3. आधुनिक हिन्दी साहित्य - पृ.227.

निहित सारी चीज़ों को लेना उचित नहीं, बल्कि उसे तोड मरोड़कर जो कुछ ग्राह्य करने योग्य है, उसे लेना स्पृहणीय है[1]।" अज्ञेय की यह धारणा उनके परंपरा संबंधी दृष्टिकोण को व्यक्त करती है ।

अज्ञेय केलिए परंपरा या इतिहास बोध एक अनुभव है मात्र घटना क्रम नहीं है । इस अनुभव के अन्तराल में वे अपनी सर्जनात्मकता को पाते हैं । परंपरा की अन्तर्धारा के संबन्ध में विद्यानिवास मिश्र के विचार उल्लेखनीय है "इतिहास और परंपरा में अभिन्न सम्बंध रहने पर भी परंपरा इतिहास अथवा घटनाक्रम नहीं है, वह घटनाक्रम से मिलनेवाला जातिगत अनुभव है - अनुभव ही नहीं बल्कि उस अनुभव का जीवित स्पन्दन जो जाति को प्रेरित्र करता है[2]।"

सृजन में कवि को हमेशा सतर्क रहना चाहिए कि वह किसका सृजन कर रहा है । परंपरा से अनुमोदित काव्य सत्य का ही सृजन कर रहा है । परंपरा से अनुमोदित काव्य सत्य का ही सृजन उसे करना चाहिए । अज्ञेय भी इस पर अधिक बल देते हैं "काव्य परंपरा द्वारा अनुमोदित होते हैं । एक-एक नयी युग की कविता काव्य के सर्व-सम्मत गुणों में से एक-एक को अधिक महत्व देती गयी है और दूसरों को गौण मानती आयी है[3]।" अर्थात् परंपरा ने जो मूल्य निर्धारित किया है उससे कवि को अपना भाग लेना चाहिए । भले ही उन्हें कवि अपना कुछ जोड लें ।

जो कुछ कवि जोड देता है वह भी परंपरा का ही अंग बनाता है ? "भया कवि : आत्मस्वीकार" में कवि कहता है

1.
2.साहित्य की चेतना, पृ.95.
3.आत्मपरक - पृ.28.

किसी का सत्य था
मैंने सन्दर्भ में जोड़ दिया
कोई मधुकोष काट लाया था
मैं ने निचोड़ लिया
किसी की उक्ति में गरिमा थी,
मैंने उसे थोड़ा सा संवार दिया ।"

यहाँ जो सत्य कवि को विरासत के रूप में मिला उसको उचित सन्दर्भ में जोड़कर नया अर्थ प्रदान किया जाता है । इसी प्रकार उपलब्ध उक्ति को थोड़ा संवारकर उसमें नयी गरिमा प्रदान की जाती है । कवि ने जिसको सन्दर्भ में जोड़ दिया है और संवार दिया है वही परंपरा की देन है । जो कवि परंपरा के साथ चलता है वह अपने सर्जन के प्रति न्याय कर सकता है । परंपरा से अलग रहकर वह कुछ नया नहीं दे सकता ।

काव्य कृति के व्यक्तित्व को सुरक्षित रखकर उसे साधारण बनाना - सार्वभौम - यूनिवर्सल बनाना कवि कर्म की जटिल समस्या है । इस समस्या को सुलझाने में परंपरा कवि को सहायता देती है । परंपरा द्वारा निर्देशित उच्च मूल्य के प्रति सचेत रहने पर कवि अपने व्यक्तित्व के बाहर आ जाता है और व्यक्तित्व से मुक्त रहकर अपने अनुभवों का सृजन करता है । यहाँ व्यक्तित्व का निर्वैयक्तिकरण होता है ।

कविता में "अहं का विलयन" अज्ञेय की मान्यता है । अज्ञेय के विचार में "आज की कविता का एक बहुत बड़ा और शायद सबसे बड़ा दोष यह है कि उस घर एक में "छा गया है, वह भी एक अपरीक्षित और अविसर्जित में "[2]। इस "मैं" का विलयन होना कवि धर्म के लिए आवश्यक है । इस प्रकार कविता में निर्वैयक्तिकरण की प्रक्रिया से अज्ञेय भी सहमत हैं ।

---

1. आज के लोकप्रिय कवि अज्ञेय - पृ. 67.
2. कवि दृष्टि - पृ. 95.

काव्य की सार्वलौकिकता की कसौटी यही निर्वैयक्तिकरण की प्रक्रिया है । "काव्य रचना मूलत: अपने को अपनी अनुभूति से पृथक करने का प्रयत्न है - अपने ही भावों के निर्वैयक्तिकरण की चेष्टा । बिना इसके काव्य निरा आत्म निवेदन है और सच होकर भी इतना व्यक्तिगत है कि काव्य की अभिधा के योग्य नहीं है - सर्वजनीनत की कसौटी पर खरा नहीं उतरता[1]।" इस प्रकार काव्य में अहं की अभिव्यक्ति न होकर उसका विलयन या समर्पण अज्ञेय को मान्य है ।

अज्ञेय अभिव्यक्ति और सृजन को काव्य की चरम सिद्धि मानते हैं[2]।" सही और सार्थक सृजन में वे भाषा के योगदान को स्वीकार करते हैं । अज्ञेय वैसे हिन्दी भाषा के सशक्त वक्ता है, लेकिन वे ऐसे एक भाषिक-सौन्दर्य की खोज करते रहे हैं जिसमें कवि अपनी अनुभूतियों को अक्षुण्ण रूप से अभिव्यक्त कर सके । रचना प्रक्रिया में कवि की समस्या यही होती है कि अपने अनुभूत सत्य को किस प्रकार अभिव्यक्त किया जाए । अज्ञेय करते हैं "अनुभव की अद्वितीयता और अर्थ की साधारणता प्रतिभा के ये दो इष्ट हैं । या कहा जाये कि इन दो ध्येयों का योग ही उसका इष्ट है । जिस प्रक्रिया से यह योग सिद्ध होता है वह रचना प्रक्रिया है[3]।" अर्थ की साधारणता अर्थात् सृजनीयता यही इसका अर्थ है । अज्ञेय ने इसलिए ऐसी भाषा की चर्चा की है जिसमें भावों की पूर्ण अभिव्यक्ति हो ।

अभिव्यक्ति पक्ष के सन्दर्भ में अज्ञेय अधिक सतर्क रहे हैं । वे हमेशा भाषा को संवेदनक्षम बनाने का सफल प्रयास करते आये हैं । श्री परमानंद श्रीवास्तव ने

---

1. चिंता - पृ.8.
2. भवन्ती - पृ.77.
3.

कहा "मौन और शब्द के तनाव से भाषा को संवेदनक्षम बनाने की दिशा में अज्ञेय की एक लगातार कोशिश रही है।" अज्ञेय की अपनी दुनिया है। उसका खास रचनात्मक बनावट है। इसलिए उनके कवि और आलोचक व्यक्तित्व सशक्त और प्रभाव दायक रहे हैं। सचमुच वे आधुनिक हिन्दी साहित्य के पर्याय है।

अज्ञेय का व्यक्तित्व अपने "स्व" के प्रति हमेशा सचेत रहा है। जहाँ वे अपनी व्यक्ति सत्ता को सुरक्षित रखते हैं वहाँ समाज के प्रति अपने दायित्वों की ओर पूर्णतः अवगत है। व्यष्टि को समष्टि में मिलाना उनका लक्ष्य नहीं, परन्तु व्यष्टि को समष्टि में पहचानने का प्रयास है।

काव्य धर्म के संबंध में एस् एच् वात्स्यायन के विचार

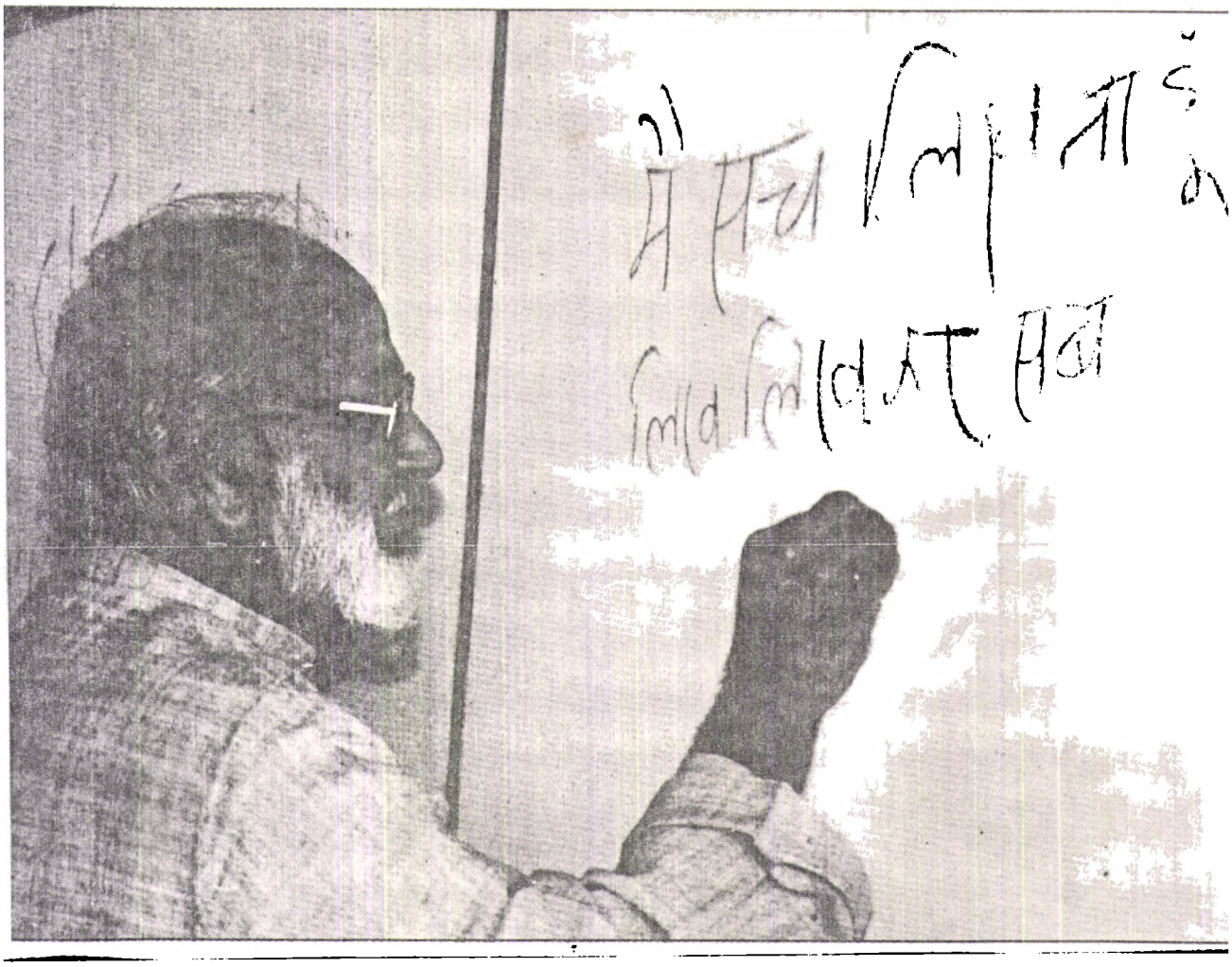

पुरू पुरु वात्स्यायन संप्रेषण की तलाश में

आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक हिन्दी साहित्य में काव्य सर्जन और काव्य धर्म संबन्धी सिद्धान्तों की व्याख्या और प्रतिपादन हुआ है । अनेक कवियों और आलोचकों ने अपनी अपनी रुचि और प्रतिभा के अनुसार काव्य के अनेक प्रतिमानों पर विचार किया है । इन विचारों में एक प्रकार का वैरम्त्य परिलक्षित होता है । प्रत्येक कवि ने इस वैरम्त्य में अपना योगदान किया है । काव्य सिद्धान्तों के द्वारा नयी भूमिका भले ही साहित्य में जुड गयी है पर उसी को सर्वमान्य स्थापित करने के लिए हिन्दी साहित्य तैयार नहीं हुआ, इसलिए इस क्षेत्र में नयी-नयी उपलब्धियां होती रहीं ।

भारतेन्दुकालीन काव्य सर्जन और काव्य धर्म की प्रक्रिया संबंधी धारणाओं से भिन्न एक नया विचार छायावाद में दृष्टिगत होता है । व्यक्तिन्मुख सर्जन प्रक्रिया संबन्धी छायावादी विचारधारा से भिन्न समाजोन्मुख प्रवृत्ति प्रगतिवाद में दिखाई पडती है । बाद में प्रयोगवादी नयी कविता में पूर्व प्रचलित सभी धारणाओं का संयोग होता दृष्टिगत होता है । अज्ञेय की प्रासंगिकता इस चरण पर है । उन्होंने अपने मौलिक परंतु परंपरा से अभिभूत सर्जन तथा काव्यधर्म सम्बन्धी सिद्धान्तों का नयी-भान्ति प्रतिपादन किया है । काव्यधर्म के विभिन्न आयामों पर अज्ञेय ने अपने विचार प्रकट किये हैं ।

सर्जन प्रक्रिया

अज्ञेय ने भावना के साथ साथ विचार को भी कला के सर्जन के स्तर पर प्रतिष्ठित करने का सफल प्रयास किया है । अर्थात् सर्जन को एक बौद्धिक धरातल से जोडने का उन्होंने प्रयत्न किया । इ रोमान्टिक भावबोध में

विद्यमान कल्पना की सर्वोन्मुखता से आगे बढ़कर उन्होंने काव्य प्रणयन की प्रक्रिया को मस्तिष्क से सम्बन्धित कार्य बताया । मानवीय भावनाओं के अतिरिक्त विचारों को भी कला में स्थान दिया ।

विचार मस्तिष्क की उपलब्धि है । काव्य का आस्वादन बौद्धिकता के स्तर पर भी हो सकता है । यही उनकी स्थापना है । श्रीरामस्वरूप चतुर्वेदी ने लिखा "अज्ञेय की गैर रोमान्टिक प्रवृत्ति जो आरंभ से ही आवेग की अपेक्षा सर्जनात्मकता को प्रमुखता देती है, विकसित होने पर सर्जनात्मक शक्ति के धर्म निरपेक्ष रहस्यमय रूप में पर्यवसित हो जाती है[1]।"

सर्जन की प्रेरणा कैसे, कब होती है ? वह सचमुच एक वैयक्तिक विवशता है । व्यक्ति को सर्जन करना पड़ता है । निरन्तर अपने मन में और मस्तिष्क में होनेवाले घात-प्रतिघातों के प्रतिफलन होता रहता है और एक क्षण ऐसा भी आता है जब उसे लिखना ही पड़ता है अभिव्यक्ति देनी पड़ती है ।

सर्जन प्रक्रिया में जिस ऊर्जा की आवश्यकता होती है वह कवि को आभ्यन्तर और बाह्य के बीच तथा आभ्यन्तर और आभ्यन्तर के बीच तनाव से प्राप्त होती है । "बाह्य और आभ्यन्तर के बीच का तनाव एक है, वह थोड़ा बहुत हल भी होता रहता है । लेकिन आभ्यन्तर और आभ्यन्तर के बीच भी तनाव है और ये हल नहीं होते, केवल रूपान्तरित होते रहते हैं । और वास्तव में ये तनाव ही वह ऊर्जा प्रस्तुत करते हैं जिससे रचना होती है[2]।" अज्ञेय के इस कथन में रचना-प्रक्रिया की प्रेरणा भी प्रस्तुत हुई है ।

---

1. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या - पृ. 2.
2. शाश्वती - पृ. 54.

सर्जन की यह प्रक्रिया ही सर्जक के लिए सब कुछ है । यहीं से उसकी प्रतिभापूर्ण विकास कर पाती है । अज्ञेय ने इस प्रक्रिया को, इसकी प्रेरणा को यों प्रस्तुत किया यदि कलाकार सचमुच कलाकार है तो उसकी प्रेरणाशक्ति एक निगूढ़ और अत्यन्त व्यक्तिगत विवशता है जिसके कारण वह संसार की सत्यता को चित्रित करने को बाध्य होता है । संसार की अनुभूतियां और घटनाएं साहित्यकार के लिए मिट्टी है जिनसे वह प्रतिमा बनाता है, वह निरी सामग्री है उपकरण है[1]।" यहां काव्य-सत्य की ओर पहुंचने का प्रयत्न है अर्थात् सांसारिक अनुभूतियों और घटनाओं के माध्यम से उसे प्रतिमा बनानी पड़ती है । प्रतिमा अर्थात् काव्य जिसमें संसार की सत्यता निहित होती है । इसी सत्य को पकड़ने केलिए कवि को निरंतर तपस्या करनी पड़ती है ।

काव्य सत्य ऐसा कोई स्थूल वस्तु नहीं जो आसानी से हस्तगत हो सके उसको हमें कठिन परिश्रम से ही प्राप्त कर सकते है । और जो सत्य हमें मिला है वह तभी काव्य सत्य होता है जब उसके साथ हमारा गहरा संबन्ध है । अज्ञेय ने भी इसकी समर्थन किया है "सत्य की संज्ञा उन्हें तब मिल सकती है जब उसके साथ हमारा रागात्मक सम्बन्ध हो । यानी जो तथ्य हमारे भाव जगत् की यथार्थता है वह सत्य है, जो निरे वस्तु-जगत् की है, वह तथ्य है[2]।" सत्य वही है जिसके साथ हमारा रागात्मक सम्बन्ध हो । हमारे अनुभूत सत्य ही काव्य सत्य के धरातल पर पहुंच जाता है ।

सर्जक का सत्य भी अनुभूत सत्य होता है । सृजन प्रक्रिया में कलाकार इसी अनुभूत सत्य को अभिव्यक्त करता है । तथ्य के साथ रागात्मक सम्बन्ध

1.कविदृष्टि - पृ.12.
2.नदी के द्वीप उपन्यास - पृ.18.

होता है,तब वह उसका अनुभूत सत्य बन जाता है । वह काव्य सत्य बन जाता है । एतदर्थ उसे तथ्य के साथ गहरा सम्बन्ध होना चाहिए । तब तथ्य सत्य में बदल जाता है । इस प्रक्रिया में कवि का अनुभूत तथ्य काव्य सत्य में परिणत हो जाता है[1]।" यह काव्य सत्य अभिव्यक्त होकर सर्जित हो जाता है । इसकी प्राप्त करने के लिए कवि को कठिन परिश्रम करना पड़ता है ।

आधुनिक रचना के सन्दर्भ में यह कार्य और अधिक कठिन होता है । क्योंकि आज संवेदना को सही रूप में पहचानना आसान नहीं है । श्रीरामदरश मिश्र ने इस विषय में लिखा है "आज की संवेदनाएं उलझी हुई है क्योंकि सामाजिक संबन्ध उलझे हुए हैं, मूल्य उलझे हुए हैं । इन संवेदनाओं को उनकी समस्त गहनता, सच्चाई और तीव्रता में पकड़कर उन्हें चित्रित करना सर्जक का मूलधर्म है[2]" । उलझी हुई संवेदनाओं को पूर्णरूप में ~~उपलब्धि~~ के समझना पहला काम है । क्योंकि यह संवेदना मानव की उपलब्धि है । यह हमें परस्पर जोड़ती है । भूत को वर्तमान से जोड़ती है । इसलिए इस संवेदना को सही अर्थ में समझना सर्जक का अनिवार्य काम है ।

काव्य सर्जन की प्रक्रिया सनातन है । इसलिए कलाकार को उसके प्रति सतर्क रहना चाहिए । कला की सनातनता का समझकर उसके प्रति निरंतर क्रियाशील रहना कवि केलिए अनिवार्य होता है । अज्ञेय के विचार में "वह द्रष्टा देखता है कि प्रक्रिया सनातन है, प्रक्रिया भी है, और सनातन भी है इसलिए मूलत: स्थिर भी है और गतिमान भी है । शिव भी है और शक्ति भी है और प्रकृति भी, काल भी है और ऋतु भी, सत्य भी है और ऋतु भी[3]" रचना

1.आधुनिक हिन्दी साहित्य - पृ.231.
2.आधुनिक हिन्दी कविता - पृ.23.
3.संवत्सर - पृ.26.

प्रक्रिया की यह जटिल परन्तु गतिशील रूप को समझकर ही सर्जक को उसमें कार्य करना चाहिए ।

रचना कर्म में निरत व्यक्ति को सर्तक रहना चाहिए । वह जो कार्य करता है वह मात्र उस व्यक्ति तक सीमित नहीं है बल्कि एक व्यापक धरातल पर उसकी प्रतिक्रिया हो सकती है । इसलिए सर्जक को सूक्ष्मदृष्ट होकर सत्य को उसकी पूर्णता में स्वीकार कर लेना चाहिए । "कुछ अधिक देख पाना, कुछ अधिक दूर तक देख पाना कुछ अधिक गहराई तक या गहराई से देख लेना, कुछ समय से पहले देख लेना, जो स्पष्ट दीख रहा है उससे भिन्न या उसके प्रतिकूल भी कुछ देखना अथवा भांप लेना गति की जो दिशा स्पष्ट है अथवा स्वीकृत है उससे भिन्न दिशा में होनेवाली गति को देख लेना या उसके प्रतिकूल दिशा का संकेत दे देना - ये सभी उस दृष्टि का अंग है जिस का श्रेय हम सर्जक को देते हैं, जिस की अपेक्षा उससे रखते हैं और जिसके आधार पर ही इसका निर्णय करते हैं कि उसकी कृति कहां तक सर्जना है रचना है[1]।" इस कथन में अज्ञेय का सर्जक और सर्जना सम्बन्धी दृष्टिकोण स्पष्ट होता है । वही सच्चा सर्जक है जो भूत वर्तमान और भविष्य को देखता है । कवि और साधारण व्यक्ति में यही अन्तर है । कवि जो कुछ देखता है उसे आम आदमी देख नहीं पाते । या जो आम आदमी देखता उससे बढ़कर, गहराई में कवि देखता है । वह पुरानी लीक को छोड़कर नयी लीक को स्वीकार करता है । इसलिए वह सर्जक होता है ।

---

1. साहित्य और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया - पृ.90.

सर्जन और परिवेश

सर्जन प्रक्रिया में सर्जक के परिवेश का योगदान होता है । अनुभूतियों और घटनाओं का परिवेश या परिस्थिति से मौलिक संघर्ष से रचना होती है । इसमें कवि के अपने मूल्यों का भी प्रभाव है । कवि जिन मूल्यों को श्रेष्ठ समझता है उनका सर्जन में अनिवार्य स्थान है । परिस्थितियों के दबाव से कवि सर्जन करने केलिए मजबूत होता है और यह अनिवार्यता एक प्रकार के कलात्मक संघर्ष का परिणाम है । इसलिए अज्ञेय ने लिखा "साहित्यिक कोई भी कलाकार अनिवार्य रूप से अपनी परिस्थितियों का परिणाम होता है । साहित्य कैसी भी कलात्मक रचना, सृष्टि - इस मौलिक संघर्ष का नतीजा है, इसे हल करने केलिए कलाकार के प्राणों का उत्कट प्रयास है[1]।" अपने परिवेश का यह दबाव कलाकार को रचना की ओर प्रेरित करता है । वह उससे मुक्ति चाहता है । यह मुक्ति सर्जन के क्षण में, उसके पश्चात् उसे मिलती है । उसे आराम मिलता है ।

परिस्थितियां लगातार बदलती रहती हैं । इस बदलाव का प्रभाव रचना-कर्म पर अवश्य पडता है । कविता के कथ्य और शिल्प पक्ष पर इसका असर पडता है । इसलिए कवि को हमेशा सृजन की स्थितियों और स्तरों पर अधिक बल देना पडता है । सृजन की स्थितियों में भी परिवर्तन आता है । सभी काल के लिए एक ही स्तर का सृजन अनुपयुक्त है । परिवेश के बदलते स्वरूप के अनुसार सृजन की स्थितियों में भी परिवर्तन लाना पडता है । परिवेश जिस तरह का सृजन मांगता है उस पर कवि को ध्यान देना पडता है । क्योंकि यदि सृजन होता ही नहीं तो काव्य सर्जन का कोई अर्थ नहीं रह जाता

---

1. त्रिशंकु - पृ. 80.

काव्य अभिव्यक्ति से अधिक सृजन है । सृजन की प्रक्रिया काव्य की स्थिरता की कसौटी है । अज्ञेय लिखते हैं "लेखक होने के नाते दूसरे तक पहुंचना उसे भीतर बैठकर उसे अपने भीतर पैठने देने बैठाना मैंने अनिवार्य माना है[1]।" क्योंकि यहां पाठक या समाज के साथ निकट सम्बन्ध की अनिवार्यता पर बल दिया है । यहां सर्जन की कष्टभरी प्रक्रिया पर भी प्रकाश डाला गया है । सर्जन में दूसरों तक पहुंचने की प्रक्रिया है ।

सर्जक परिवेश का अंग होता है । इसलिए उसके अन्तर हमेशा भोक्ता और सर्जक रूप के बीच द्वन्द्व होता है । "सर्जन एक यन्त्रणा भरी प्रक्रिया है । भोगनेवाले व्यक्ति और रचनेवाली मनीषा के अलगाव के बीच एक दूरी है और जितना बड़ा कलाकार होगा उतनी अधिक दूरी होगी, दूरी लाने की यह प्रक्रिया भी और वही तो सर्जन प्रक्रिया है[2]।" भोक्ता और सर्जक ये दो व्यक्ति हैं । दोनों का अलग-अलग व्यक्तित्व होता है । अर्थात् अनुभव को उसी रूप में अभिव्यक्त करना रचना नहीं है । रचना में उसकी कलात्मक अभिव्यक्ति मात्र होती है । काव्य-सत्य के रूप में वह रचना में अभिव्यक्त हो जाता है । तब वह मात्र अनुभव या अनुभूति नहीं रह जाते ।

कवि की अनुभूतियों और अनुभवों का जितना महत्व उसके लिए है उतना महत्व पाठक या समाज के लिए होना आवश्यक नहीं है, इसलिए सृजन के उपयुक्त बना देना "रचनेवाली मनीषा" का धर्म है । अनुभवों के संचयन में उसके परिवेश का हाथ है । जिस परिवेश में सर्जक रहता है उसीको उसे सृजन करना पड़ता है । इसलिए अपने परिवेश के प्रति सर्जक को जागरूक रहना चाहिए ।

---

1. भवन्ती - पृ.14.
2. वही - पृ.5.

युग बदलता है मगर मूल्य स्थिर रहता है । परन्तु मूल्यों के प्रति मानव का दृष्टिकोण बदल जाता है । मानव की संवेदना भी बदलती है । अनुभूति जगत भी परिवर्तित होता रहता है । तब उस नवीन परिवेश का प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव सर्जक पर पड़ सकता है । अज्ञेय ने "सदानीरा" की भूमिका में लिखा है "आज कवि का संवेदन बदल गया है । आज कविता का अम्बार लगा है ; आज रीति अमान्य है और कवि को बार-बार आक्रामक भाव से अपने को सामने लाने की आवश्यकता का अनुभव होता है[1]।" कवि अपने अनुभूत सत्य को प्रकट करने के लिए एक प्रकार से विवश है ।

संवेदना का स्वरूप बदल जाने से सर्जक के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आता है । यह आज की परिस्थिति की देन है । पुराने दृष्टिकोण का आज के सन्दर्भ में उतनी सार्थकता नहीं रह जाती, क्योंकि परिवेश निरन्तर बदलता जाता है और दृष्टिकोण भी । इसलिए कवि या सर्जक सचेत रहता है । अज्ञेय का भी यही विचार रहा है "कुल मिलाकर यह स्पष्ट होता है कि आज का कवि जिस परिस्थिति में है जिसमें अपने को रखना चाहता है उसमें वह प्रभावों के प्रति वेध्य है[2]।" परिवेश और उसके प्रभाव की सार्थकता पर अज्ञेय का यह विचार महत्त्वपूर्ण है ।

कवि या सर्जक को अपने परिवेश के प्रति निरन्तर जागरूक रहना चाहिए । परिवेश का सूक्ष्मातिसूक्ष्म परिवर्तन भी महत्त्वपूर्ण होता है । इसलिए उसका प्रभाव मनुष्य पर पड़ता है । सर्जक को अत्यन्त सूक्ष्मदृक होकर रहना चाहिए जिससे वह इन सूक्ष्म परिवर्तन को भी पहचान कर सके । भिन्न-भिन्न परिवेश में रहकर कवि को सर्जन करना पड़ता है । और परिवेश का गहरा

---

1. सदानीरा - पृ.7.
2. वही - पृ.6.

प्रभाव भी साहित्य में होता है । अज्ञेय लिखते हैं "परिवेश के अनेक तत्व ऐसे होते हैं जिनके प्रति हम सचेत नहीं होते और युगीन संवेदन का एक पहलू यह भी है कि विभिन्न युगों में परिवेश के विभिन्न अंगों को या कह सकते हैं विभिन्न परिवेशों को अधिक महत्वपूर्ण और प्रासंगिक समझा जाता है[1]।"

सर्जक को अपने समय के प्रति, समकालीन घटनाओं उनकी प्रतिक्रियाओं के प्रति सचेत रहना अनिवार्य होता है । क्योंकि उसकी उपेक्षा करके सर्जक आगे नहीं बढ़ सकता । परिवेश जन्य मूल्यों के प्रति, नये संवेदनाओं की ओर साहित्य को उदार दृष्टिकोण रखना चाहिए । उसकी रचना परिवेश से संपृक्त मानी जाएगी ।

स्वीकार प्रक्रिया

साहित्य की चरम उपलब्धि स्वीकार है । उसके अभाव में उसकी पूर्णता कभी संभव नहीं । इसलिए सर्जक हमेशा स्वीकार की सफलता की ओर ध्यान देते हैं या उसे ध्यान देना चाहिए । स्वीकार प्रक्रिया पर अज्ञेय के विचार महत्वपूर्ण है " स्वीकार एक प्रक्रिया है जो एक सजीव, प्रत्यक्ष, व्यक्तिरूप मूर्त इकाई की ओर प्रवाहमान होती है । जिस इकाई की सजग चेतना स्वीकार के दौरान निर्व्याघात बनी रहती है[2]।" अर्थात् जिस अनुभूति या सत्य की अभिव्यक्ति कवि करता है उसका स्वीकार सही हो, संपूर्ण हो । अभिव्यक्ति और स्वीकार के दौरान अभिव्यक्ति सत्य या अनुभूत सत्य की चेतना अक्षुण्ण रहती है या रहना चाहिए ।

कवि की चेतना और पाठक की चेतना यही स्वीकार के बीच दो तट हैं । लहरें तट की ओर आती है और तट का आलिंगन करती हैं । कवि के

---

1. साहित्य का परिवेश - पृ.5.
2. समकालीन कविता का संकट - पृ.71.

मन से उत्पन्न अनुभूति की लहरें पाठक के मानस तट पर आती है । कवि से प्रवाहमान अनुभूति का सायुज्य पाठक पर होता है । इस प्रक्रिया में कवि की चेतना स्फोटक के वक्त स्थिर रहती है । क्योंकि अभिव्यक्ति अनुभूति से निकलती है । और अनुभूति ही वास्तविक घटना है । वही अस्ति है । उसकी एक प्रकार की पहचान ही स्फोटित हो जाती है । स्थूल रूप से अनुभूति का स्फोटक नहीं होता । अनुभूति के प्रति सर्जक की प्रतिक्रिया ही अभिव्यक्त होती है ।

कवि की सबसे बड़ी समस्या स्फोटक की समस्या है । कवि कर्म की सफलता की कसौटी यही स्फोटक प्रक्रिया है । बदलते परिवेश में अनुभूतियों का चक्र भी बदलता रहता है । कवि अपनी अनुभूतियों और अनुभवों को उसकी पूर्णता में ही स्फोटित करना चाहता है । इस प्रक्रिया में उसे नवीन उपलब्धियों को प्राप्त करना पड़ता है । उसके उचित प्रतिमानों को स्थापित करना पड़ता है । अज्ञेय ने इसकी ओर संकेत किया है "साधारणीकरण और स्फोटक कवि-कर्म की मूल समस्या है । और कवि को प्रयोगशीलता की ओर प्रेरित करनेवाली सबसे बड़ी शक्ति यही है । कवि अनुभव करता है कि भाषा का पुराना व्यापकत्व उसमें नहीं है - शब्दों के साधारण अर्थ से बड़ा अर्थ हम उसमें भरना चाहते हैं, पर उस बड़े अर्थ को पाठक के मन में उतार देने के साधन अपर्याप्त है । वह या तो अर्थ कम पाता है या कुछ भिन्न पाता है[1]।"

स्फोटक की पूर्णता ही कवि कर्म की सफलता है । इसलिए कवि इस सफलता को प्राप्त करने के लिए निरन्तर प्रयोग की ओर अग्रसर होता है । जिन क्षेत्रों में प्रयोग हुआ उनसे आगे बढ़कर उन क्षेत्रों का अन्वेषण करता है ताकि

---

1. आत्मपरक - पृ. 34.

उसकी अनुभूतियों को काव्य सत्य बनाकर पाठक के मन तक संपूर्ण रूप में संप्रेषित किया जाए । इसी संप्रेषण की पूर्णता की तीव्र इच्छा ने आधुनिक कवियों को प्रयोग करने के लिए विवश किया है । अपूर्ण संप्रेषण से सत्य [illegible] विकृत रूप में जाता है । अपने अनुभूत सत्य को व्यापक सत्य बनाने के प्रयत्न में वह सही संप्रेषण चाहता है ।

अपने "व्यक्ति सत्य" को व्यापक सत्य बनाने के प्रयत्न में उसे संस्कृति का सहारा लेना पड़ता है । यह सांस्कृति अवबोध उसे परंपरा के अवबोध से ही प्राप्त होता है । सांस्कृतिक अवबोध से युक्त तथ्य का ही मूल्य होता है । इसलिए जिस कवि में अपनी संस्कृति का गहरा अवबोध है वही सच्चा सर्जक बन सकता है । परंपरा और संस्कृति में बड़ा अन्तर नहीं है । इसलिए कवि को अपनी परंपरा के प्रति सचेत रहना चाहिए । परंपरा के विरासत में वह जो कुछ उपलब्ध करता है उसी की स्थिरता है । अपने व्यक्ति सत्य को परंपरा के अवबोध से प्राप्त ज्ञान के द्वारा समझने पर उसे व्यापक सत्य के रूप में संप्रेषित करने में कवि सक्षम होता है ।

कवि की अनुभूतियों और अनुभवों को उसी रूप में अभिव्यक्त करना कवि-धर्म नहीं है, यह संप्रेषण भी नहीं है । क्योंकि "काव्यगत भावानुभूति और वास्तविक जीवन की भावानुभूति में अन्तर होता है । वास्तविक यथार्थ और काव्यगत यथार्थ भी अलग है । कविता का वास्तविकता से संबंध है, घनिष्ठ संबन्ध है । कल्पना, प्रातिभ ज्ञान, पर्यवेक्षण सभी से कविता वास्तविकता को स्वायत्त, आत्मसात् करती है, संवेद्य और बहुजन संप्रेष्य बनाती हुई फिर से

रचती है[1]।" अज्ञेय के इस कथन में सृजन के स्वरूप की चर्चा की गई है। अनुभूतियों को आत्मसात् करके ही सृजन करता है।

कलाकार का लक्ष्य, रचना प्रक्रिया का उद्देश्य यह सृजन है। अज्ञेय ने लिखा "कृतिकार का उद्देश्य या लक्ष्य केवल अनुभव का सृजन है। सहज बोध द्वारा अपनी अनुभूतियों से व्यापकतर अनुभवों में प्रवेश कर उन अनुभवों की पकड़, और उनका सृजन यही उसका लक्ष्य है। जब यह पूरा हो जाता है उसे तृप्ति होती है[2]।" सृजन की महत्ता को यह साबित करता है। कवि की सार्थकता इस सफल सृजन के आधार पर निर्धारित होती है। इसमें वह स्वानुभवों को व्यापक धरातल में अभिव्यक्त करता है। तब वह मात्र उसका नहीं होता, परन्तु सार्वभौम होता है।

परिस्थितियों के बदलते स्वरूप को सामने रखकर कवि या सर्जक ही सृजन की संभावना पर विचार करता है। तब उसे उसके अनुकूल अपनी रचना को स्थापित करना पड़ता है। अज्ञेय के अनुसार "सृजन की नयी परिस्थितियाँ काव्य में जो नये परिवर्तन लायी हैं, रूप के, छन्द के, लय के, विचार में उनको भी सामने रखना चाहिए। क्योंकि इन सब के परिवर्तन इन से जुड़े हुए हैं, उन्हीं के कारण हुए हैं[3]।" इस प्रकार काव्य के स्वरूप में सृजन के अनुकूल परिवर्तन लाना कवि का कर्तव्य होता है। उसे पुरानी रूढ़ियों को तोड़कर आधुनिक संवेदना के अनुसार अपनी रचना को स्थापित करना चाहिए। युग की माँग की ओर सर्जक को सचेत रहना चाहिए।

---

1. भवन्ती - पृ.68.
2. वही - पृ.84.
3. समकालीन कविता के छन्द - पृ.162.

सृष्टि की प्रक्रिया की पूर्णता में सर्जक पाठक तक पहुंच जाता है । इस प्रकार दूसरों तक पहुंचने की इच्छा हर सर्जक में होती है । वह अपनी रचना की, रचना-धर्म की सफलता भी इस प्रकार पाठक के मन तक पहुंचने पर ही प्राप्त करता है । इस विषय पर अज्ञेय का मत इस प्रकार है "दूसरों तक पहुंचने की दुर्दान्त ललक । कभी कभी सोचता हूं कि यही शायद साहित्य सर्जना की मूल प्रेरणा होती है" यही तो सर्जना मात्र की मूल प्रेरणा है । आदि स्रष्टा को भी इसी ने सताया होगा तो उसने सबसे पहले अपना एकान्त अकेलापन काटने केलिए एक-दूसरे की सृष्टि की होगी[1]।" इन पंक्तियों में सृष्टि का अनिवार्यता पर प्रकाश डाला है अज्ञेय ने । मनुष्य अकेला नहीं रहना चाहता । वह एक दूसरे से संवाद करना चाहता है ।

यह मानव की आदिम इच्छा है । वह अपने भाव को दूसरों से प्रकट करना चाहता है । "दूसरे तक पहुंचना ही एक अनुक्त अभिकंपित मानव धर्म था मानव होने की कसौटी था[2]" अभिव्यक्ति का प्रथम पाठ यहां से शुरू होता है । सर्जक भी इसी अभिव्यक्ति और सृष्टि की वेदना से तड़पता है । वह दूसरों तक पहुंचना चाहता है । उसका तीव्र आग्रह उसके मन में रहता है । विवश होकर वह रचना प्रक्रिया की ओर मुड़ता है । अर्थात् रचना के माध्यम से सर्जक अपने को दूसरों को सृष्टि करना चाहता है ।

इस प्रकार दूसरों तक पहुंचने की तीव्र अभिलाषा के कारण सर्जक इस सृष्टि की पूर्णता केलिए विभिन्न साधनों का प्रयोग करता है । साहित्य सर्जना केलिए इसी सृष्टि की अभिलाषा कवि को विवश करती है । इस विषय पर

---

1. छाया का जंगल - पृ. 70.
2. वही - पृ. 71.

अज्ञेय ने कहा " दूसरे तक पहुँचने की ललक साहित्य स्रष्टा या किसी भी कला सृष्टि की बुनियादी प्रेरणा है । कल्पना, बुद्धि सम्पन्न मनुष्य मात्र का एक प्रकृत गुण है । कवि उसी के सहारे दूसरे तक पहुँचना था और दूसरों तक पहुँचने के नये विशदतर साधन सब के लिए उपलब्ध कराता जाता था[1]।" सर्जक अपनी प्रातिभशक्ति एवं कल्पना की सहायता से दूसरों से संवाद करना चाहता है । इसकेलिए वह अपनी कृति को माध्यम बनाता है । तब सर्जक अपनी-रचना के द्वारा दूसरों से संवाद करता है । यह सृष्टि की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है ।

कवि चाहता है कि उसका स्वर, उसका अनुभूत सत्य दूसरों तक पहुँच जाए । इस प्रकार दूसरों तक पहुँचने पर ही वह अपनी रचनाधर्मिता की सफलता को प्राप्त कर सकता है । अज्ञेय की कुछ पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं

"कहीं मेरा स्वर
पहुँच जाए
अचानक
तुम तक
कहीं तुम
पकड़ जाओ
औचक " [2]

कवि का स्वर पाठक तक पहुँच जाना है और पाठक उसको सुन सकना ये दोनों सृष्टि की सफलता के अनिवार्य तत्व हैं । इसकी पूर्णता पर सर्जना का लक्ष्य पूरा हो जाता है । अब यह सम्मुख एक समस्या है जिसपर अज्ञेय ने भी विचार किया है "वास्तव में उपन्यास की - समूचे साहित्य की-समस्या केवल यथार्थ को प्रस्तुत करने की समस्या नहीं है बल्कि यथार्थ को रचने की समस्या है

1.छाया का जंगल - पृ.72.
2.महावृक्ष के नीचे - पृ.24.

यथार्थ को रचने की और फिर उस रचे हुए यथार्थ के स्वीकार की[1]।" यहाँ यह स्पष्ट होता है अभिव्यक्ति और स्वीकार रचनाधर्म की मूल समस्या है ।

अनुभूत सत्य की अभिव्यक्ति और उसको सही और संपूर्ण रूप में स्वीकृति करना कवि-कर्म के ध्येय है । सनातन काल से सर्जक के सम्मुख ये समस्याएं रही हैं । असल में जो अनुभव कलानुभव के स्तर पर तभी पहुंच जाता है जब उसका सही स्वीकार होता है । अज्ञेय लिखते हैं "साहित्य-कला मात्र-मूलत: एक स्वीकार है, अभिव्यक्ति भी है तो दूसरे पर अपनी अभिव्यक्ति है, दूसरे तक पहुंचना है[2]।" तब साहित्य स्वीकार है और स्वीकार की सफलता ही रचना की सफलता है । रचना की सार्थकता है । कवि कर्म की चरम उपलब्धि है ।

रचनाकार के मन में यह संघर्ष होता है कि वह अपने अनुभव को काव्यसत्य के रूप में संपूर्णत: अभिव्यक्त करना चाहता है।यह संघर्ष निरंतर होता है । क्योंकि साहित्य यदि अभिव्यक्ति है तो स्वीकार भी अनिवार्य हो जाता है । इसलिए स्वीकार को संभव बनाये रखने केलिए वह नये-नये प्रयोग करता है । सर्जक तभी संतृप्त होता है जब उसकी रचना का सही स्वीकार होता है ।

कवि और परंपरा

परंपरा का अवबोध सर्जक की रचना धर्मिता की सफलता का प्रमुख तत्व है । कवि या साहित्यकार का विकास परंपरा के अवबोध से होता है । ऐतिहासिकबोध कवि को बौद्धिक होकर प्राप्त करना चाहिए । परंपरा के प्रति अत्यन्त सतर्क रहना सर्जक के लिए अनिवार्य होता है । क्योंकि परंपरा का महत्व सब केलिए समान नहीं है "लेखक को, कविमनीषी को बौद्धिक होना है ।

---

1. केन्द्र और परिधि - पृ. 324.
2.

बौद्धिक होकर उसकी निर्मम बुद्धि से इतिहास और परंपरा का मूल्यांकन करना है । परंपरा न सब की सब और ज्यों की त्यों मूल्यवान है, न ही सब की सब और ज्यों की त्यों बिल्कुल कूड़ा है । लेकिन क्या मूल्यवान है और क्या कूड़ा, क्या ग्राहण करना है और क्या छोड़ना, किसकी किसके साथ मिलाना और किसकी किस पर पैबन्दी करनी है इसका निर्णय बुद्धि के सहारा ही हो सकेगा[1]।" परंपरा की सार्थकता को समझने केलिए, उसे उपलब्ध करने के लिए सर्जक को सचेत होकर कार्य करना चाहिए ।

परंपरा न सब की सब मूल्यवान है । कवि का ? कर्त्तव्य है उसमें से अच्छा ग्राहण करे । क्योंकि एक स्वस्थ परंपरा बोध ही कवि को समर्थ और सक्षम बनाता है । परंपरा बोध ही कवि को कवि बनाता है । परंपरा एवं परंपरा-बोध को ग्राहण करने केलिए यह देखना है कि उसमें क्या निहित है । इसकेलिए परंपरा का सही विश्लेषण और मूल्यांकन आवश्यक है ।

अज्ञेय परंपरा को आंख मूंदकर अपनाने के पक्ष में नहीं है । वे लिखते हैं "परंपरा कम से कम कवि केलिए कोई ऐसी पोटली बांधकर अलग रखी हुई चीज नहीं है जिसे वह उठाकर सिर पर लाद ले और निकले । परंपरा कवि केलिए कोई अर्थ नहीं जब तक वह उसे ठोक-बजाकर तोड मरोड़कर देखकर आत्मसात् नहीं कर लेता, जब तक वह इतना गहरा संस्कार नहीं बन जाती कि उसका चेष्टापूर्वक ध्यान रखकर उसका निर्वाह करना अनावश्यक न हो जाय । अगर कवि की आत्माभिव्यक्ति एक संस्कार-विशेष के वैष्टन में ही सहज सामने आती है, तभी वह संस्कार देनेवाली परंपरा कवि की परंपरा है[2]।" परंपरा को

---

1. लेखक की स्थिति - पृ.36.
2. दूसरा सप्तक - भूमिका - पृ.6.

आत्मसात् करना और बिना चेष्टा के उसको ध्यान में लाना यही दो प्रक्रियाएं परंपरा के संबंध में कवि के लिए सार्थक है ।

परंपरा में जो तथ्य और सत्य उपलब्ध है उसको आत्मसात् करने का प्रयास किया जाना चाहिए । उसको प्राप्त करने पर - आत्मसात् - करने पर कवि उसका अंग बन जाता है । और सहज ढंग से ही उसका अवबोध उसमें लीन रहता है । अपने दृष्टिकोण को बनाने में बढ़ाने में परंपरा का सही अवबोध कवि का सहायक होता है । इसलिए परंपरा का विश्लेषण और मूल्यांकन से कवि या सर्जक उसके सही मूल्य को पहचानने में समर्थ हो जाता है ।

कवि की भाषा और भाषा में निहित प्रत्येक शब्द के संयोजन में मृत और ध्वस्त चमत्कारों का इतिहास विद्यमान है । कालाकाल में उपलब्ध विभिन्न संस्कारों से कवि अपनी भाषा गठित कर लेता है । यहाँ उसे मृत और ध्वस्त परंपरा का अवबोध मार्गदर्शक हो जाता है । इसकेलिए कवि को परंपरा के प्रति अपने को समर्पित करना पड़ता है । तभी उस प्रवाहमान अन्तर्धारा से अपनी उपलब्धि को वह पहचान सकता है ।

कवि परंपरा को बदलता है, बदलकर चल सकता है क्योंकि वह परंपरा को जानता है, उसमें परंपरा का गहरा अवबोध है । जिस परंपरा बोध ने उसे कुछ दिया उसमें कुछ जोड़ने का प्रयत्न भी वह करता है । इसलिए जो कुछ बदलाव वह करता है, वह मात्र बदलाव नहीं, बल्कि नयी उपलब्धि है, परंपरा में वह नया कुछ जोड़ रहा है । इसलिए परंपरा से मुक्त वह नहीं हो सकता । "एक तो कवि इसलिए मुक्त है कि वह परंपरा को बदलना चाहता है - चल सकता है । यानी वह परंपरा से नहीं, केवल पुरानी परंपरा से मुक्त हो

सकता है, परंपरा को निरंतर नया रूप देते रहकर । और जब तक वह यों परंपरा में कुछ जोड़कर चलता है, तब तक वह नया होता चलता है, और मुक्त होता चलता है । यह प्रक्रियागत उन्मोचन ही मुक्ति है[1]।" अज्ञेय के विचार में परंपरा में प्रत्येक कवि कुछ नया जोड़ता है और इस जोड़ने की प्रक्रिया में वह स्वयं कृतकृत्य हो जाता है । अपने को परंपरा से जोड़कर वह मुक्त हो जाता है

जब कवि परंपरा में कुछ जोड़ता है तब वह नया कुछ बना डालता है । यही कवि का कर्म भी है । अपने को मुक्त समझनेवाला कवि जो कुछ स्वतन्त्र कर रहा है वह भी उस अजस्र परंपरा केलिए एक भूमिका बनेगा । इसलिए कवि सर्जन प्रक्रिया में मुक्त होने का मतलब है उस परंपरा के अवबोध में अपना भाग जोड़ देना । पुरानी या जो परंपरा चली आयी है वह नयी होती है, नयी बाद में पुरानी । यह चक्र ऐसा ही चलता है । परंपरा के इस सहज स्वभाव को सर्जक जानता है, जान लेता है और अपने को उसका एक अंग बनाता है । तब वह जो कुछ देता है वह परंपरा का ही अंश होगा, जो सनातन है, सार्वलौकिक है ।

परंपरा का अवबोध कवि को अपने अहं से मुक्ति प्रदान करता है । संस्कृति के प्रति सचेत होने पर वैयक्तिक मूल्य उतना प्रमुख नहीं होता जितना कि उसका सामंजस्य सांस्कृतिक धरातल पर हो । इसलिए व्यक्ति जब परंपरा के प्रति समर्पित होता है । तब इसका व्यक्तित्व उसका स्वीय्य - विषय नहीं रहता है । व्यक्तित्व का विलयन होता है । अज्ञेय ने लिखा "अगर स्वीकार आवश्यक है तो आत्माभिव्यक्ति का खंडन हो जाता है और अगर कला आत्माभिव्यक्ति है तो स्वीकार का क्या सवाल ? अगर स्वीकार बुनियादी बात है तो अभिव्यक्ति का क्या होता है ? और अगर अभिव्यक्ति ही मूल बात है

---

1. भवन्ती - पृ. 26.

तो सामाजिक का कोई स्थान नहीं, वह अप्रासंगिक है ।[1] इसलिए स्वीकृत होता है तो उस व्यापक सत्य का जिसको कवि ने अपने व्यक्ति सत्य के बाहर आने पर महसूस किया है । उस व्यापक सत्य पर पहुँचने के लिए सर्जक को परंपरा की ओर मुड़ना चाहिए । परंपरा द्वारा निर्देशित सत्य व्यापक सत्य होता है उसका स्वीकृत होता है । वहाँ सही स्वीकृति भी होता है ।

परापरा के बिना कवि की कोई सार्थकता नहीं है । सर्जक सर्जना के क्षेत्र में एक व्यापक परंपरा के साथ जुड़कर कार्य करता है । तब वह अपने को पा सकता है, दूसरों को स्वीकृत कर सकता है । परंपरा का अंग होकर वह अपना कुछ उसमें जोड़ देता है । अपने परिवेश के साथ गहरा संबन्ध रखने के लिए यह अनिवार्य होता है " पर कन्टिन्यूइटी के, परंपरा के बिना" परिवेश के साथ अर्थवान संबन्ध जुड़ नहीं सकता । नैरन्तर्य का रिश्ता जोड़े बिना परिवेश से कोई रिश्ता ही नहीं जुड़ता : नये परिवेश के साथ भी जो सम्बन्ध बनता है उसकी अर्थवत्ता में इस नैरन्तर्य का बड़ा महत्त्वपूर्ण योग होता है । आधुनिक मार्डन होने के लिए इतिहास आवश्यक होता है । बिना ऐतिहासिकता के बोध के मार्डन होना ही संभव नहीं है । निरंतरता की पहचान ही वास्तव में इतिहास बोध का मूल और आरंभ बिंदु है । और जहाँ तक मानवीय प्रतिभा का प्रश्न है, इस निरंतरता का उत्कर्ष वहाँ होता है जहाँ यह सर्जनशील हो जाती है । वह सर्जनशील निरन्तरता ही है जो नाना रूपों में प्रकट होती है । वैदिक परिकल्पना में जहाँ स्रष्टा को "कवि" कहा गया, वहाँ भी उसकी निरन्तर सर्जनशीलता-सर्जनरत निरन्तरता - की ओर संकेत था, जिसके उत्ताप के कारण

---

1. भवन्ती - पृ. 76.

वह अविराम असंख्य रूपों को रचता हुआ फेंकते - बिखेरते जा रहा था । अपने छोटे आयाम से कहूँ तो सभी कला स्रष्टा - चित्रकार, मूर्तिकार, कवि अपने अपने स्तर पर उस निरन्तरता में नित्य नई कड़ी जोड़ते चले जाते हैं।[1]" परंपरा की निरंतरता एवं व्यापकता में सर्जक का स्थान और योगदान इस उद्धरण में स्पष्ट है । परंपरा की निरंतरता के समान सर्जनशीलता भी निरन्तर प्रक्रिया होती है । परंपरा और कलास्रष्टा के बीच गहरा संबन्ध है । परंपरा के सौरम्य में वह स्वयं बह जाता है, वह अपने को विलीन कर देता है । सर्जक अनादिकाल से बहती काव्यधारा में अपनी काव्य संपदा को जोड़ देता है । इसलिए काव्यसर्जन एक निरन्तर प्रक्रिया बनता है ।

काव्यसर्जन की निरन्तर प्रक्रिया में अपने को सम्मिलित करने केलिए कवि को परंपरा या इतिहास बोध आवश्यक है । इतिहास बोध उसके कवि - व्यक्तित्व के विकास का प्रथम सोपान है । यहाँ से वे काव्यसर्जन की सीढ़ियों पर मुक्त रूप में चढ़ सकता है । इसलिए कलाकार उस सौरम्य की ओर, उसके साथ मिलकर अपनी प्रतिभा का परिचय देता है । यही कलाकार की सार्थकता है । तब उसे बदलते परिवेश में अपनी अस्मिता की पहचान कर सकता है । क्योंकि परिवेश परंपरा का एक अंश हुआ करता है । तब परिवेश के प्रति सतर्क रहने के लिए इतिहास-बोध कवि के लिए आवश्यक होता है ।

परंपरा के अवबोध से कवि आधुनिक भी होता है । क्योंकि परंपरा निरंतर बहती धारा है । उसकी अजस्र धारा में कवि अपने व्यक्तित्व की पहचान करता है । उसमें अपनी काव्य प्रतिभा को मिलाता है । हर युग में कवि ऐसी प्रक्रिया में निरत होकर काव्यसर्जन में सक्षम हो जाता है । क्योंकि सर्जन-प्रक्रिया भी

---

1. केन्द्र और परिधि - पृ. 64.

इस सौन्दर्य का एक भाग है जो विभिन्न युग में विभिन्न मनुष्यों, विभिन्न रूपों में प्रकट होती है । व्यापक इतिहास बोध और तत्सम्बन्ध परंपरा सर्जक केलिए अनिवार्य है ।

परंपरा एक ऐसी नींव है जिसपर कवि अपने कवि-व्यक्तित्व रूपी मकान का निर्माण करता है । जितनी मज़बूत नींव होती है उतना ही उसका कवि व्यक्तित्व रूपी भवन भी मज़बूत होता है, इसलिए नींव को सुदृढ़ बनाने के लिए सर्जक को परंपरा संबन्धी अपनी अवधारणा एवं अवबोध को व्यापक रूप में प्राप्त करना चाहिए । उसमें खड़े होकर वह अपने रचना-स्तर पर पहुंच सकता है । कलाकृति की रचना की श्रेष्ठता भी उसमें निहित परंपरा या इतिहास बोध पर निर्भर रहती है । अतीत को आत्मसात् करने के बाद ही वह सच्चा सर्जक बन सकता है और उससे सच्ची रचना भी उपलब्ध होती है । इसलिए इस गतिशील परंपरा की महत्ता को जानकर उसके चैतन्य को पाकर अपने कवि-व्यक्तित्व को, कवि-कर्म का विकास करना कवि-कर्म की प्रक्रिया है ।

अतीत का अवबोध सर्जक के दृष्टिकोण को व्यापक बनाता है । क्योंकि अतीत में जो कुछ है वह प्रत्यक्ष के गोचर है । उसमें सत्य है और वह वर्तमान से प्रमाणित भी होता है । इसलिए उसको कवि स्वीकार करता है । इस प्रकार उसको स्वीकार करके कवि उसमें अपना भाग भी जोड़कर उसको व्यापक धरातल पर प्रस्तुत करता है । "कोई भी कला-वस्तु चाहे कितनी भी नयी क्यों न हो ऐसी वस्तु नहीं है जो अकस्मात् अपने आप घटित हो गयी है ; वह ऐसी वस्तु है, जो अपने-आप में नहीं, अपनी पूर्ववर्ती तमाम कलावस्तुओं की परंपरा के साथ साथ घटित हुई है[1]।" कलासृष्टि का जन्म परंपरा की उपलब्धि के साथ होता है

---

1. आत्मनेपद - पृ. 54.

उसमें परंपरा का अवबोध अवश्य होता है या होना चाहिए । साहित्यकार में परंपरा की चेतना विद्यमान होती है ।

निर्वैयक्तिकता : रचना के सन्दर्भ में

काव्य अभिव्यक्ति है संवेदना है । तब उसमें अभिव्यक्ति होती है अनुभूति की । अनुभूति को अभिव्यक्त करते समय वैयक्तिक पक्ष का क्या स्थान है इस पर भी अज्ञेय ने काफी गहरा विचार किया है । कवि का व्यक्तित्व वास्तव में अभिव्यक्ति का विषय नहीं है । वह रचना के लिए बाधक है । जब तक सर्जक अपने व्यक्तित्व का विलयन नहीं करता वह श्रेष्ठतम कवि नहीं हो सकता । लेकिन व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति की आकांक्षा या इच्छा और उसके प्रति एक विशेष आकर्षण कवि में होता है । उससे मुक्त होना ही कवि का वास्तविक संघर्ष है । जो कवि इसमें सफल होता है वह श्रेष्ठ कवि माना जाता है । प्राचीन कवियों की श्रेष्ठता का कारण भी यही है । "प्राचीन कवियों की महत्ता का असल रहस्य यही है कि वे अहं को विलीन करके ही लिखते थे, उनकेलिए कविता स्वास्थ्य का साधन नहीं, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति की अनन्य साधना थी[1]।"

परंपरा द्वारा निर्देशित उच्चतर कर्तव्य के प्रकाश में अनुभूतियों को परखने के फलस्वरूप कलाकार का व्यक्तित्व परिवर्तित एवं पुनर्निर्मित होता है । साधारण अर्थ में यह मुश्किल काम है, लेकिन निरंतर प्रयत्न से यह आया सकता है काव्य रचना का अधिकार किसी कवि को तभी प्राप्त होता है जब व्यक्तित्व का पूर्ण विलयन हो जाय । कविताओं में विद्यमान अन्तर्धाराओं को पहचानने

---

1. आत्मनेपद पृ 34

केलिए भी यह आवश्यक है । आधुनिक कविता में कवि का व्यक्तित्व ही कविता से अधिक जुड़ा जा रहा है । इसलिए कवि अपने महान् कर्त्तव्य के प्रति न्याय नहीं कर बैठता है "काव्य रचना का - किसी भी कलासृष्टि का - अधिकार तभी आरंभ होता है जब व्यक्तित्व का संपूर्ण विलयन हो जाय, यह मानना तो दूर की बात रही, आज का कवि कला साधारणतया इतना भी नहीं मानता कि कविता या कि कला-सृष्टि, व्यक्ति के विलयन का माध्यम है ; कि कविता के द्वारा कवि व्यक्ति को बृहत्तर इकाई में विलीन कर देते हैं । वरंच आज का कवि तो कविता को, व्यक्तित्व की, व्यक्ति के अहं की प्रखरतर अभिव्यक्ति और उस अहं को पुष्ट करनेवाली रचना मानता है । मैं कहूँ कि इस चरम कोटि का आधुनिक कवि मैं नहीं हूँ, अधिक से अधिक उस श्रेणी में हूँ जो कविता को अहं के विलयन का साधन मानते हैं[1]।"

इस विस्तृत वक्तव्य में अज्ञेय काव्य में निर्वैयक्तिकता संबन्धी अपने दृष्टिकोण को व्यक्त करते हैं । वे कविता को अहं के विलयन का साधन मानते हैं । अहं को पुष्ट करने वाली रचना को घटिया रचना मानते हैं । कवि को अपने संकुचित व्यक्तित्व से बाहर आकर व्यापक इकाई को पहचानने के लिए इस प्रकार अपने व्यक्तित्व का विलयन अनिवार्य होता है । काव्य व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का साधन नहीं है । व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति से कलाकृति विकल हो जाती है । काव्य सृजन में कवि को अपने व्यक्तित्व का विलयन करके उसे निर्वैयक्तिक अभिव्यक्ति का साधन बनाना चाहिए । इसलिए कलाकृति व्यक्ति के विलयन का माध्यम है उसको अभिव्यक्त करने का साधन नहीं है ।

---

1. आत्मपरक - पृ. 31.

काव्य में कवि का व्यक्तित्व अभिव्यक्त नहीं होता । रचयिता का महत्व सर्जन की तीव्रता में है । कवि एक माध्यम होता है जिसमें सारी अनुभूतियां और अनुभवों का संयोग होता है । काव्य केलिए महत्व रखनेवाले भावों का अस्तित्व कवि के जीवन या व्यक्तित्व में नहीं, स्वयं काव्य में होता है । इस प्रकार व्यक्तित्व का बहिष्करण काव्य सर्जन में कवि को एक माध्यम बना देता है । "काव्य में कवि का व्यक्तित्व नहीं, वह माध्यम प्रकाशित होता है । जिसमें विभिन्न अनुभूतियां और भावनाएं चमत्कारिक योग में युक्त होती हैं । काव्य एक व्यक्तित्व की नहीं, एक माध्यम की अभिव्यक्ति है[1]।" उसके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का साधन कविता नहीं । निर्वैयक्तिक होकर सर्जन प्रक्रिया में सर्जक को कार्य करना चाहिए ।

कला में अभिव्यक्त भाव कवि के व्यक्तित्व से भिन्न होता है । विभिन्न भावों का संयोग होने पर एक अभिव्यक्त करता है, उसमें उसके व्यक्तित्व का अंश नहीं होता । इस प्रकार व्यक्तित्व की निरपेक्ष अभिव्यक्ति के लिए कवि को परंपरा के प्रति अपने को समर्पित करना पड़ता है । तब उस अंश चाहे व्यक्तित्वाभिव्यक्ति से कवि मुक्त हो सकता है । और काव्य मात्र अनुभूत सत्य की अभिव्यक्ति का साधन बन जाता है ।

अतीत के अवबोध से संपृक्त भाव कलात्मक भाव हो जाता है । कलात्मक भाव की अभिव्यक्ति ही कलाकार का लक्ष्य होता है । "कलात्मक भाव व्यक्तित्व से परे होते हैं, निर्वैयक्तिक होते हैं और कवि इस निर्वैयक्तिक भावों का ग्रहण और आभासहीन अभिव्यंजना तभी कर सकता है जब वह व्यक्तित्व की परिधि से बाहर आकर एक महत्तर अस्तित्व के प्रति अपने को समर्पित कर सके । अर्थात्

---

1. त्रिवेणी - पृ. 42.

जब उसका जीवन वर्तमान क्षण में ही परिमित न रहकर अतीत की परंपरा के वर्तमान क्षण में भी स्पन्दित हो, जब उसकी अभिव्यक्ति केवल उसी की अभिव्यक्ति न हो, जो जी रहा है, बल्कि उसकी भी जो पहले से जीवित है । कवि का जीवन आज में बद्ध नहीं है, वह त्रिकाल-जीवी है[1]।" यहाँ अज्ञेय ने अपनी परंपरा और निर्वैयक्तिक संबन्धी विचारधारा को स्पष्ट किया है । अज्ञेय की दृष्टि में व्यक्तित्व से निर्लिप्त रहकर ही कलात्मक अभिव्यक्ति संभव है । अपने व्यक्त सत्य को व्यापक सत्य में परिणत करके उसे महत्तर बनाना कवि का कार्य होता है । कविकर्म का ध्येय भी यही है । अतीत की परंपरा में वर्तमान क्षण को जोड़कर कवि अपने अनुभूत सत्य का प्रतिपादन करता है ।

निर्वैयक्तिकता को प्राप्त करने के लिए परंपरा की अनिवार्यता है । परंपरा को वर्तमान में देखने से उत्पन्न काव्य बोध में कवि के व्यक्तित्व का अंश नहीं होगा । अपने को किसी महत्तर सत्य के प्रति समर्पित कर देना इस निर्वैयक्तिकरण की प्रक्रिया केलिए आवश्यक है । क्योंकि परंपरा वर्तमान के साथ अतीत की सम्बद्धता और तारतम्य का नाम है । जो कवि परंपरा के अवबोध को प्राप्त करता है उसे वर्तमान का सही स्वरूप भी दृष्टिगोचर होगा ।

निर्वैयक्तिकता के धरातल पर पहुँचने केलिए कवि को कठिन तपस्या करनी पड़ती है । उसे अपने कार्य में इसलिए सतर्क रहना चाहिए । काव्य की उत्कृष्टता भी निर्वैयक्तिक अभिव्यक्ति से होती है ।"कवि का काव्य उस की आत्मा का सत्य है । यह भी कहना ठीक होगा कि वह सत्य व्यक्तिबद्ध नहीं है, व्यापक है, और जितना ही व्यापक है उतना ही काव्योत्कर्षकारी है ।

1.त्रिशंकु - पृ.43.

"व्यक्ति सत्य" और व्यापक सत्य के कई स्तरों की उद्भावना करते हैं, कवि इन स्तरों में से किसी पर भी हो सकता है[1]।" यहाँ कवि का सत्य कभी व्यक्ति सत्य नहीं होता, बल्कि वह एक व्यापक सत्य होकर काव्य में अभिव्यक्त होता है। यह सत्य निर्वैयक्तिक सत्य के रूप में प्रकट होता है।

काव्य भाषा

कविता बोलती है भाषा के द्वारा। इसलिए कविता एक भाषा बद्ध रूप है, इतना ही नहीं एक विशिष्ट शाब्दिक अभिव्यक्ति है। तब कविता की सफलता भाषा की सार्थकता पर निर्भर रहती है। सफल सृजन के लिए उचित भाषा का संयोग होना चाहिए। भाषा अभिव्यक्ति और सृजन के बीच एक सेतु है। सेतु जितना मज़बूत होगा उतना ही सृजन भी। इसलिए प्राचीनकाल से कवि-आलोचकों ने भाषा के विभिन्न अंगों पर काव्य के सन्दर्भ में विचार किया है।

भाषा शब्दों से बनती है। कविता शब्दों का सार्थक प्रयोग है। सच्चा कवि भाषा पर दृष्टि न डालकर शब्द पर विचार करता है। क्योंकि उसका सम्बन्ध भाषा से नहीं शब्द से है। "सर्जक कवि का सरोकार भाषा से नहीं शब्दों से होता है और रचनात्मक प्रयोग वास्तव में भाषा का नहीं, शब्द का प्रयोग है[2]।" शब्द का सार्थक और सही प्रयोग ही कविता है। शब्द में नया-नया अर्थ भरकर अभिव्यक्ति देने का प्रयत्न किया है आधुनिक कवियों ने।

कविता में भाषा का स्वरूप काव्य सत्य से सृजन में सहायक हो। अन्यथा कविता कविता नहीं रहेगी, "मात्र कुछ शब्दों की पोटली रहेगी।

---

1. आत्मपद - पृ. 33.
2. नया प्रतीक - मई, 1977

इसलिए कविता में उपयुक्त भाषा सार्थक होती है या उसे सार्थक होनी चाहिए । भाषा में वह क्षमता होनी चाहिए जिसमें कवि अपनी अस्मिता की पहचान कर सके । इससे कवि अपने अनुभवों को निरूपित करने में सफल हो जाता है । कवि और भाषा के बीच गहरा सम्बन्ध होता है "कितनी गहराई में हमारी अस्मिता, हमारी अपनी पहचान, हमारी अपनी भाषा के साथ जुड़ी हुई होती है और कितने गहरे में हमारी भाषा इस बात से प्रभावित होती है कि किस भाषा में हम अपने को पहचान रहे हैं और उस पहचान में से कौन- सी भाषा निकल रही है । यह सम्बन्ध हमारी भाषा को भी निरूपित और नियन्त्रित करता है[1]।"

मानव और भाषा के बीच सम्बन्ध सनातन है । मनुष्य अपने भावों की अभिव्यक्ति भाषा में करता है । इसलिए भाषा के साथ मानव का गहरा संबंध है । भाषा का इतिहास मानव का इतिहास होता है । भाषा में ही मानव अपने को पहचानने का प्रयास करता है । इसलिए भाषा के निरूपण में मानव का उत्कट प्रयास परिलक्षित होता है । सर्जक भी भाषा का ही प्रयोग करता है । परन्तु कलाकार की भाषा विशिष्ट या अद्वितीय अनुभवों की निर्वैयक्तिक अभिव्यक्ति का माध्यम होता है । इसलिए सर्जन की भाषा अपने में अलग होती है ।

कवि की सर्जनात्मक शक्ति भाषा में निहित है । उसको पहचानकर भाषा का सम्पूर्ण उपभोग करना कवि का कर्त्तव्य है । कवि की रचनाशीलता की ओर अग्रसर होने करनेवाली प्रेरणा उसकी जानी हुई भाषा है । और उस भाषा की साहित्यिक सार्थकता है । भाषा की शक्ति को कवि जान लेता है और उसमें अपने को प्रकट करता है । व्यापक सत्य की खोज में । यही अज्ञेय के कथन से स्पष्ट होता है "भाषा हमारी शक्ति है उसको हम पहचानें ; वही रचनाशीलता का उत्स है व्यक्ति के लिए भी और समाज केलिए भी[2]।" सर्जक की प्रतिभा भाषा

---

1. जोग लिखी - पृ. 22.
2. त्रिशंकु और सेतु - पृ. 99.

संयोग से सर्जन में क्रियाशील होती है । अनुभूतियों की पूर्ण अभिव्यंजना में भाषा ही उसकी मदद करती है ।

भाषा का संबन्ध संस्कृति से है और संस्कृति परंपरा का कुल जोड है । तब भाषा का स्वरूप भी परंपरा में उपलब्ध होता है । किसी समय कोई कवि कुछ लिखता है तो उसमें जिस भाषा का प्रयोग है उसकी सार्थकता उस समय की नहीं, उसके पहले ही उसका स्वरूप निर्धारित हुआ करता है । इसलिए भाषा का स्वरूप और पहचान बदलता रहता है । "कवि उसी भाषा का प्रयोग करता है जिसे वह रोज जीता है क्योंकि रचना प्रक्रिया सूक्ष्मग्राहीयता की भी सृष्टि करती है[1]।"

भाषा के बदलाव से उसके स्वरूपों में भी परिवर्तन आता है । कवि को सभी भाषिक स्वरूपों पर जाने की आवश्यकता नहीं है, रचना करते वक्त उसे उस भाषा का प्रयोग करना चाहिए जो उस समय विद्यमान है । वही जीवित भाषा है । कवि की भाषा वही है जिसके साथ उसका गहरा संबंध होता है । अभिव्यंजना के माध्यम के रूप में कवि उस भाषा का प्रयोग करता है । जिसकी गहरी पकड उसे हो । तब वह उस भाषा को सशक्त माध्यम के रूप में उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति कर पाता है । क्योंकि सूक्ष्मग्राहण की पूर्णता भाषा की उपलब्धि पर आश्रित है ।

सच्चेकवि का संबंध सार्थक शब्दों से होता है क्योंकि उसका कार्य शब्दों से, सार्थक शब्दों से ही पूर्ण होता है । कवि को शब्दों की खोज करनी चाहिए

---

1. लिख कागद कोरे - पृ. 7।

जिससे वह अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त कर सके । अज्ञेय का भी यही प्रयास रहा है " मेरी खोज भाषा की खोज नहीं, केवल शब्दों की खोज है । एक लेखक के नाते मैं कला-सृजन के माध्यम में सबसे अधिक वैध्य माध्यम का उपयोग करता हूँ । जो विभिन्न प्रक्रिया काम कर रही होती है उनमें गुणात्मक भेद होता है[1]।" माध्यम की क्षमता सर्जना की सफलता है, सृष्टि की चरम सीमा है । कवि को शब्द को ढूंढ़ ढूंढ़कर प्रयोग करना है ।

शब्द की महत्ता केवल उसके बाह्य स्तर पर प्रयुक्त होने से नहीं है । अर्थ की सीमा संकुचित होने की प्रक्रिया होती रहती है । इसलिए शब्द के द्वारा पूर्ण अभिव्यंजना ही कवि का लक्ष्य होना चाहिए । तभी वह उस शब्द से उद्भूत असली शक्ति को पहचान सकते हैं "कवि का उद्देश्य केवल शब्द की निहित सत्ता का पूरा उपयोग करना नहीं बल्कि उसकी जानी हुई संभावनाओं के परे तक उसका विस्तार करना है[2]।" शब्दों में जितनी अभिव्यंजना शक्ति निहित है उसका पूर्ण उपयोग करना कवि धर्म है । प्रत्येक शब्द की सर्जनक्षमता के बारे में कवि जानता है और उसकी पूरी संभावनाओं के साथ वह उसका प्रयोग करता है ।

सामाजिक जीवन बदलता रहता है । समाज के लोगों का जीवन स्तर भी परिवर्तित होता रहता है । प्राचीन काल में जिन शब्दों से काम चलता था उनसे आज नहीं चलता है । अर्थात् लोगों के चिंतन मण्डल में व्यापकता आयी । रुचियों में परिष्कार आया । अ रागात्मक सम्बन्ध में परिवर्तन न होने पर भी उसके प्रति लोगों का दृष्टिकोण बदल गया । इसलिए भाषा की पहुँच उसके अनुसार बदलनी चाहिए थी । कवि की आज की समस्या भी इसी भाषा को

---

1. आलवाल - पृ. 97.
2. वही - पृ. 11.

लेकर ही है । "कवि कर्म की मौलिक समस्या है साधारणीकरण और कम्यूनिकेशन की समस्या । कवि अनुभव करता है कि भाषा का पुराना व्यापकत्व अब उसमें नहीं है । शब्दों के साधारण अर्थ से बड़ा अर्थ हम उसमें भरना चाहता है पर उस बड़े अर्थ को पाठक के में उतार देने के साधन अपर्याप्त है[1]।" यहाँ शब्द की अपर्याप्तता की ओर संकेत किया गया है । अनुभूति की अक्षुण्ण अभिव्यंजना कवि का साध्य है । उसकेलिए सार्थक शब्द उसके पास नहीं ; यही उसकी समस्या है । कवि उस भाषा की तलाश में है जो अधिकाधिक अर्थ को संप्रेषित करे । क्योंकि वही कवि का एकमात्र माध्यम होता है ।

भाषा ही दूसरों तक अपने यथार्थ को संप्रेष्य बनाने का एक मात्र साधन है । इसलिए उसकी सार्थकता पर विचार करना आवश्यक है । भाषा को खोजने पर समकालीन यथार्थ पर भी ध्यान दिया जाता है । "आज के साहित्य की यानी आज के भारतीय साहित्य की बात सोचते समय सबसे पहले भाषा की बात ध्यान में आती है । एक बहुत गहरे अर्थ में सभी भारतीय भाषाओं में समकालीन यथार्थ की खोज वास्तव में भाषा की खोज रही है[2]।" यथार्थ की अभिव्यक्ति सशक्त भाषा में ही संभव है । कवि ऐसी भाषा की तलाश में लगे है । अभिव्यक्ति पक्ष में तथ्य के साथ शिल्प पर भी अधिक ध्यान दिया जाता है । भाषा का गठ और उसका सही उपयोग निरन्तर कवि कर्म केलिए आवश्यक है । कवि सर्जन की ओर आते समय भाषा के प्रति विशेष ध्यान देता है ।

अपने निजी सत्य को सामान्य बनाकर उसका संप्रेषण कवि का ध्येय है । इसकेलिए वह शब्द का विभिन्न प्रकार से प्रयोग करता है । शब्द का

---

1. तारसप्तक - वक्तव्य
2. भवन्ती - पृ. 71.

माध्यम एक पवित्र माध्यम है । महान कवि ही भाषा का, शब्द का निर्माण कर सकता है । "मैं उन व्यक्तियों से हूं जो भाषा ब्रह्म का सम्मान करते हैं और अच्छी भाषा को अपने रूप में एक सिद्धि मानते हैं[1]।" अज्ञेय के इस वाक्य में भाषा के प्रति उनका उदार दृष्टिकोण व्यक्त होता है । कवि अपने लिए एक भाषिक स्वरूप पाना चाहता है । जो कवि इस प्रकार एक अच्छी भाषा का अधिकारी होता है वह श्रेष्ठ समझा जाता है ।

भाषा की समकालीनता पर सर्जक को ध्यान देना चाहिए । भाषा परिवर्तित एवं परिवर्द्धित होती है । तब सर्जक को उस भाषा का प्रयोग वांछनीय है जो जनता की है । "आज के कवि का यह युग-धर्म है कि वह भाषा की उन पुरानी रूढ़ियों तथा जकड़ बन्दियों से मुक्ति पाए जिनके द्वारा आज के जीवन में पैदा हुई उलझी-सुलझी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति नहीं कर पाता । अपने जीवन के आस-पास प्रचलित भाषा की छवियों और भंगिमाओं को पहचानने और उसे यथार्थ जीवन के विभिन्न प्रसंगों और संवेदनात्मक अनुभवों की अभिव्यक्ति का वाहक बनाएं[2]।" भाषा को जनता के निकट लाना कवि का कर्त्तव्य है । अर्थात् जनता की भाषा का प्रयोग उसको करना चाहिए । भाषा का लोक-तन्त्रीकरण का यही अर्थ है ।

इस प्रकार नित्य गतिशील भाषा के स्वरूप को पहचानना कवि का कार्य होता है । भाषा का यह सहज स्वभाव है । वह निरंतर बदलती रहती है । और ऐसी भाषा ही जीवन्त भाषा होती है "जीवन्त भाषा कभी स्थिर नहीं होती, उसकी अनवरत प्रवाहमानता को साहित्यकार न केवल अन्तःप्रज्ञा से

---

1. आत्मनेपद - पृ. 242.
2. लिखि कागद कोरे - 72-73.

जानता है बल्कि उसमें अटूट श्रद्धा रखता है । जहाँ यह श्रद्धा टूटती है, वहाँ या तो रचनाकार की भाषा जड़ हो जाती है और इसलिए रचना भी जड़ होकर आवृत्ति मात्र रह जाती है, या फिर साहित्यकार का आत्मविश्वास भी नष्ट हो जाता है और उसकी रचना में प्रामाणिकता का स्पन्दन हमें नहीं मिलता[1]।" भाषा बहती धारा है । वह नित्य परिवर्तित होती है । कवि को उसके प्रति सचेत रहकर परिवर्तित और परिवर्द्धित रूप को ही अपनाना चाहिए ।

भाषा के साथ कवि का दृढ़ सम्बन्ध होता है । काव्य सर्जन में कवि जिस भाषा को चुनती है उसके साथ उसे गहरा संबन्ध होता है "मैं उस बिंदु तक पहुँच गया जहाँ रचनाकार अन्तिम रूप से चुनता है कि कथन के लिए उसकी भाषा कौनसी होगी । दूसरी भाषाओं को वह छोड़ नहीं देता, लेकिन जिस एक भाषा को चुनता है उसके साथ उसका संबंध फिर हमेशा केलिए दूसरा हो जाता है । बल्कि उसे वह चुनता ही इसीलिए है कि उसके साथ उसका पहले से ही एक दूसरे प्रकार का संबंध होता है, वरण की प्रक्रिया में वह उस संबंध को पहचानता भर है । यह पहचान केवल भाषा के साथ अपने अनेक-स्तरीय संबंध की पहचान नहीं होती बल्कि आत्म-प्रत्यभिज्ञा भी होती है[2]।" भाषा के साथ एक प्रकार का रागात्मक संबंध कवि का होता है । वह अपनी उपलब्ध भाषा को पहचानता है और उसके साथ सुदृढ़ संबंध रखता है ।

भाषा ही सर्जना की क्षमता प्रदान करती है । जिसके पास भाषिक संपदा है वह सहज सर्जन कर सकता है । "सच बात तो यह है कि हम भाषा को नहीं बनाते, भाषा हमको बनाती है[3]।" भाषा हमें सर्जन की ओर प्रेरित

1.साहित्य का परिवेश - 107.
2.सदानीरा - 11.
3.केन्द्र और परिधि - 8.

करती है । "भाषा कल्पवृक्ष है । जो उससे मांग जाता है, भाषा वह देती है[1]।" भाषा एक कल्पवृक्ष है । वह सर्जक की सर्जना को साध्य बनाती है । अभिव्यक्ति को सक्षम बनाती है । वह काव्य है ।

भाषा के सहारे सर्जक यथार्थ की पहचान करता है । काव्य सत्य की उपलब्धि में भाषा उसकी सहायता करती है । अनुभवों की गहराई में जाकर उसे काव्य सत्य के रूप में अभिव्यंजित करने की प्रक्रिया में भाषा की महत्ता है "भाषा के द्वारा हम यथार्थ की एक नये ढंग की पहचान कर सकते हैं । यथार्थ की पहचान हमें भाषा के कारण मिलती है । जिस चीज़ को हम पहचान रहे हैं, उसको आत्मसात् करके उसके प्रति किसी तरह की भी विवेक पर आधारित प्रतिक्रिया हम भाषा के बिना नहीं कर सकते । भाषा/ यथार्थ की सिर्फ पहचान ही नहीं करती, उसको एक व्यवस्था भी देती है । भाषा का क्रम यथार्थ की पहचान का एक क्रम हमें देता है । तो एक समूचा अस्मिता का, एक आत्मभाव का, उपकरण या साधन भी भाषा होती है[2]।"

जो व्यक्ति का अनुभूत है उसे समष्टि तक उसकी संपूर्णता में पहुंचाने केलिए भाषिक सन्दर्भ का सही प्रयोग अनिवार्य है । भाषा की अर्थ परिधि को बढ़ाकर उसमें नये-नये अर्थ भरकर संप्रेषण को सक्षम बनाना कवि-धर्म होता है । भाषा एक शक्ति है । सर्जक को सर्जना की प्रेरणा देती है ।

---

1. केन्द्र और परिधि - पृ. 18.
2. वही - पृ. 138.

काव्यधर्म संबंधी विचार

काव्यधर्म के बारे में प्राचीनकाल से अनेक विचार प्रस्तुत हुए हैं । अज्ञेय ने भी इस विषय पर अपना गहरा विचार प्रस्तुत किया है । कविता की चरम उपलब्धि स्वीकृति है । "मेरी समझ में साहित्य का दोहरा धर्म होता है । एक तरफ तो वह निरंतर वर्तमान की सही और सटीक पहचान कराता है और दूसरी ओर वह गृहीता समाज को अर्थवत्ता के बृहत्तर सन्दर्भ से जोड़ता है । यह करके ही साहित्य संवेदना की गहराई या विस्तार बढ़ा सकता है और जीवन को समृद्ध बना सकता है[1]।" उसी प्रकार व्यक्ति को समाज से जोड़ने का कार्य भी, व्यक्ति को समाज के एक अंग के रूप में स्थापित करने का कार्य साहित्य का होता है । जीवन के दृष्टिकोण को व्यापक बनाता है ।

साहित्य मानव मन को निरंतर परिष्कार करता है । उसे अपने अनुभवों के प्रति सचेत रहने के लिए और उनकी प्रतिक्रियाओं को जगाने के लिए साहित्य सहायक होता है । "साहित्य निरंतर इस बात की पहचान करता रहता है कि हमारे जीवन की वस्तु, चिंतन की कोटियों और अनुभवों की कोटियों में बंटती रहती है जहाँ प्रत्यभिज्ञा के लिए उनको प्राप्त करने के लिए इन दोनों कोटियों को अलग रखकर उनके घात-प्रतिघात अथवा परस्पर प्रभाव का निर्वचन आवश्यक है, वहाँ उन दोनों को निरंतर एक इकाई में आकलित करके जीवन की समग्रता की प्रत्यभिज्ञा भी साहित्य का अनिवार्य कर्त्तव्य और धर्म है[2]।" जीवन की समग्रता का बोध, उसके प्रति व्यापक दृष्टिकोण मानव में जगाना काव्यधर्म है । अपने चिंतन और अनुभव को एक साथ लेकर जीवन की समग्रता का बोध प्राप्त करने में सहायक होता है ।

---

1. संवत्सर - पृ. 18.
2. वही - पृ. 18.

इस जीवन की सम्पृक्तता का बोध तभी प्राप्त होता है जब हम उसमें निहित यथार्थ को पहचान लेते हैं । मनुष्य एक संस्कृति की देन है । उस संस्कृति में मनुष्य अपने को पाने का प्रयत्न करता है । साहित्य इस प्रयत्न में उसकी सहायता करता है । "साहित्य किसी एक काल में किसी एक जाति अथवा समाज की संपूर्ण संस्कृति की उपज होती है । उसके वर्तमान में संस्कृति का समूचा इतिहास निहित होता है । किसी भी [illegible] में समय में साहित्य संस्कृति के उस समय के विश्व-दर्शन को प्रतिबिंबित करता है और साथ ही उस जाति के उस समय के आत्मदर्शन को और अस्मिता- बोध को भी प्रतिबिंबित करता है[1]।"

काव्य मानव की अस्मिता का बोध कराता है । विभिन्न संस्कृतियों में, युगों में, मानव के होने का बोध काव्य कराता है । इसी प्रकार मानव अपनी सही पहचान भी काव्य के द्वारा ही करता है । काव्य मानव की सार्थकता का उद्घाटन करता है । "साहित्य भी अस्मिता की पहचान कराता है -सामूहिक सामाजिक, व्यक्तिगत और अस्तित्वक अस्मिता की । साहित्य भी स्थिति बोध जगाता है । जड़ों की पहचान कराता है, उनके द्वारा अपनी मिट्टी से रस खींचने की प्रेरणा देता है, प्रक्रिया सिखाता है, क्षमता बढ़ाता है । साहित्य भी बदलाव की पहचान कराता है । बदलाव की संभावनाएं उजागर करता है, बदलने की प्रेरणा देता है[2]।"

साहित्य मनुष्य का सम्पृक्त विकास करता है । उसे उसकी संस्कृति से जोड़ता है । परंपरा बोध उसे प्रदान करता है । व्यष्टि-समष्टि के बीच संबंध का बोध कराता है । मनुष्य को विकास की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा देता है

1.संवत्सर - पृ.49.
2.साहित्य और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया - 94.

समय-समय पर होनेवाले परिवर्तन की ओर मानव को आकृष्ट करता है । स्वयं बदलने की प्रेरणा देता है । मानव के अस्तित्व का बोध कराकर उसके पूर्ण विकास की प्रेरणा देता है ।

काव्य मानव को अपने व्यक्ति सत्य से बढ़कर व्यापक और सार्वलौकिक सत्य का बोध कराता है । इसलिए अपने अनुभव के प्रति जागरूक रहने की प्रेरणा देता है काव्य । साधारण अनुभव और कलात्मक अनुभव के अन्तर को समझकर कलात्मक अनुभव का आस्वादन की क्षमता बढ़ाने से वह काव्य का सही और सहज आस्वादन कर पाता है । अभिव्यक्त अनुभूति का आस्वादन करने के लिए पाठक इससे सफल हो जाता है । कलात्मक अनुभव के रूप में वह सम्प्रेषित होता है उसका आस्वादन वह करता है ।

अज्ञेय काव्य सर्जन को एक वैयक्तिक विवशता मानते हैं । सर्जक सर्जना के माध्यम से अपने को मुक्त करना चाहता है । इसमें वह एक माध्यम मात्र है । रचनाधर्म में अनुभूत सत्य व्यापक सत्य के साथ तादात्म्य होकर काव्य सत्य बन जाता है । इस प्रक्रिया में कवि को स्वयं उसके प्रति समर्पित होना पड़ता है । इस पूर्ण समर्पण में उसकी काव्य चेतना निखर उठती है । काव्य उस समर्पण का फल है । इस समर्पण में वह अपनी अस्मिता की पहचान करता है । सत्य की पहचान और समष्टि के साथ उसका तादात्म्य काव्य का अनन्य धर्म होता है ।

তুলনাত্মক প্রত্যয়বাদ

टी·एस·इलियट और एस·एच·वात्स्यायन महान् कवि और प्रखर आलोचक - बीसवीं शती के साहित्य के दीपस्तंभ है । पाश्चात्य और भारतीय साहित्य में दोनों को छोड़कर आधुनिक साहित्य का अध्ययन असंभव है ।

साहित्यिक क्षेत्र में दोनों का प्रवेश कवि के रूप में हुआ, पर दोनों की प्रतिभा का आलोक आलोचना के क्षेत्र को उद्भावित करता रहा । अपनी काव्यात्मक उपलब्धियों के परिप्रेक्ष्य दोनों ने काव्य - संबंधी विभिन्न सिद्धान्तों का निरूपण किया ।

इलियट और अज्ञेय दोनों दो विभिन्न भाषाओं क्रमशः - अंग्रेज़ी एवं हिन्दी - के सशक्त सर्जक रहे । दोनों पर पूर्ववर्ती और समकालीन अनेक कवियों एवं आलोचकों का सशक्त प्रभाव परिलक्षित होता है । उनसे प्रेरणा एवं शक्ति ग्रहण करके दोनों ने काव्य सर्जन के क्षेत्र में प्रवेश किया । इलियट पर विशेषतया फ्रेन्च कवियों का प्रभाव अधिक पड़ा है । एज़रापाउण्ड और ह्यूम का इलियट पर प्रभाव पड़ा है तो अज्ञेय पर भारतीय एवं पाश्चात्य साहित्यकारों की छाप पड़ी है ।

इलियट के सर्जक व्यक्तित्व के गठन में फ्रेन्च, ग्रीक एवं भारतीय दर्शन का विशेष महत्व है । उन्होंने उनका विशद अध्ययन किया । भारतीय दर्शन को वे विशेष ध्यान देते थे । "वे लिखते हैं" चार्लस लानमान से संस्कृत का और जेम्सवुड के निर्देश में पतंजली का अध्ययन करनेसे मुझे एक नयी मानसिकता एवं

चेतना मिली[1]।"

अज्ञेय ने भारतीय दर्शन एवं साहित्य का विस्तृत अध्ययन किया । पाश्चात्य साहित्य एवं दर्शन के प्रति वे विशेष आकृष्ट रहे । डी॰एच॰लारेन्स तथा टी॰एस॰इलियट का व्यापक अध्ययन करके अज्ञेय ने अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा को विकसित किया ।

अपने पूर्ववर्ती और समकालीन साहित्यकारों से प्रभावित होने पर भी दोनों का स्वतन्त्र साहित्यिक व्यक्तित्व रहा । स्वच्छन्दतावादी काव्य बोध के विस्तृत अध्ययन ने उन्हें क्लासकीय होने की प्रेरणा दी । इसलिए उनके काव्य सिद्धान्तों में काफी कुछ समानता दीख पड़ती है । सर्जन प्रक्रिया, परंपरा-बोध, निर्वैयक्तिकता, स्वीकरण, काव्यभाषा एवं काव्यधर्म के संबन्ध में दोनों के विचार काफी समान होते हुए भी अपने में स्वतन्त्र हैं और मौलिक हैं ।

सर्जना की प्रक्रिया

सर्जन की जटिल प्रक्रिया में सर्जक और अनुभूति की प्रामाणिकता एवं महत्ता पर इलियट और अज्ञेय ने विशेष बल दिया । रचना कर्म में संवेग और अनुभूति की महत्ता को दोनों ने मान लिया । अनुभूति और संवेग की अभिव्यक्ति उन्मुक्त रूप से कविता में नहीं होती । कवि का मन एक माध्यम है

इलियट सर्जक के मन को एक माध्यम मानते हैं । उस माध्यम से होकर सारे अनुभव और अनुभूतियाँ स्वीकरण योग्य बन जाती हैं । सर्जन-प्रक्रिया संबन्धी उनके विचार हैं "यह उस क्रिया के समान है जो उस समय होने लगती है जब प्लेटिनम का एक बारीक तार आक्सीजन और सल्फर डाइआक्साइड से भरे

---

1. "Two years spent in the study of Sanskrit under Charles Lan man, and a year in the mazes of Patanjalis mataphysics under the guidence of James Woods, left me in a state of enlightened mystification. - T.S.Eliot -Bernard Bergonzi-P.23

प्रकोष्ट में डाल दिया जाता है । प्लेटिनम का बारीक तार उत्प्रेरक का काम करता है उसकी उपस्थिति में आक्सीजन और सल्फर डाइआक्साइड संयोजित होकर एक तीसरी वस्तु को जन्म देती है और वह तीसरी वस्तु है सल्फ्यूरिक एसिड । यह तीसरी वस्तु तब तक जन्म नहीं लेती जब तक कि इस संयोजन का उत्प्रेरक वहाँ उपस्थित नहीं हो । फिर भी इस नव्य निर्मित अम्ल में प्लेटिनम का अंश बिल्कुल नहीं होता, और देखने में प्लेटिनम के स्वयं के ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । वह निष्क्रिय, तटस्थ और अपरिवर्तित रहता है[1]।"

कवि मन प्लेटिनम के समान एक माध्यम मात्र है जिसका कोई परिवर्तन नहीं होता, परन्तु जिससे होकर ही सारी अनुभूतियाँ सृजन योग्य बन जाती हैं । कवि के मन का अंश उसमें होता नहीं । उसके बिना सर्जना असंभव है । विविध भावनाओं के संयोजक के रूप में सर्जन प्रक्रिया में कवि-मन कार्य करता है ।

अज्ञेय ने काव्य प्रणयन को तनाव का फल बताकर उसे एक वैयक्तिक विवशता कहा है । वे लिखित है "यदि कलाकार सचमुच कलाकार है तो उसकी प्रेरणाशक्ति एक निगूढ और अत्यन्त विवशता है जिसके कारण वह संसार की सत्यता को चित्रित करने को बाध्य होता है । संसार की अनुभूतियाँ और-

---

1. The analogy was that of the catalyst. When the two gases previously mentioned are mixed in the presense of a filament of platinum, they form sulphurous acid. This combination takes place only if tne platinum is present: neverthless the newly formed acid contains no trace of platinum and the platinum itself is apparently uneffected h as remained inert, neutral and unchanged.
Selected Essays - P.18.

घटनाएँ साहित्यकार के लिए मिट्टी है, जिसमें वह प्रतिभा बनाता है , वह निरी सामग्री है, उपकरण है ।[1]"

कवि अनुभूतियों की मिट्ट से प्रतिमा बनाता है । कवि यहाँ भी एक माध्यम है जिससे होकर अनुभूतियाँ और घटनाएँ सौष्ठव योग्य,काव्यानुभूति का रूप धारण कर लेती है । मिट्टी से भिन्न है प्रतिमा, पर प्रतिमा में मिट्टी है । मिट्टी को प्रतिमा का रूप दिया जाता है । इस प्रक्रिया में कवि की प्रतिभा सहयोग करती है । प्रतिमा के निर्माण में शिल्पि का मन माध्यम होता है । काव्य निरी अनुभव या अनुभूतियाँ नहीं, लेकिन काव्य में अनुभव और अनुभूतियाँ है, वे कवि मन से होकर काव्य का रूप प्राप्त करती हैं ।

सर्जक अपनी अनुभूति को अखण्ड रूप में अभिव्यक्त करना चाहता है । कवि-मन से होकर अनुभूतियाँ काव्य का रूप प्राप्त करने से इस अभिव्यक्ति में सर्जक सफल हो जाता है । टी·एस·इलियट और अज्ञेय ने काव्य-प्रणयन में कवि को एक माध्यम माना है ।

कवि एक माध्यम क्यों ? कवि वास्तव में जिस वस्तु का निर्माण करता है वह उसकी अपनी नहीं है । वह बाह्य जगत् और समाज की वस्तु है । वही उसकी सामग्री अथवा अस्कृत पदार्थ है । इस सामग्री को कवि अपने अंतरंग में अथवा अपनी प्रातिभ शक्ति के आधार पर काव्य का रूप प्रदान करता है । उसे सौष्ठवीय बनाता है । यही कवि का कार्य है । इसी विचार से ये दोनों विचारक कवि-मन को माध्यम मात्र मान लेते हैं । इसका मतलब यह नहीं कि कवि प्रतिभा का कोई योगदान इसमें नहीं है, योगदान अवश्य है, प्रतिभा के

1· कवि- दृष्टि - 12·

बल पर ही काव्य स्थापित होता है, काव्य की असली सामग्री काव्यकार की सृष्टि नहीं है ।

काव्य और परंपरा

काव्य सत्य के अन्वेषण में परंपरा की महत्ता को इलियट और ब्रेय ने स्वीकार किया है । परंपरा के बोध के बिना काव्य का निर्माण संभव नहीं है । परंपरा द्वारा निर्देशित उच्चतर कर्त्तव्य के प्रति कवि को सचेत रहना चाहिए । "इतिहास बोध कठिन परिश्रम से ही प्राप्त होता है । सर्जक को अपने समय के प्रति सचेत रहने केलिए परंपरा का बोध सहायक है ।"[1]

कवि अपने अनुभूत सत्य को परंपरा के अवबोध से परिपुष्ट करके उसे काव्य सत्य बना देता है । सर्जन प्रक्रिया का यह क्षण महत्वपूर्ण है । यहाँ अनुभव "स्व" नहीं रह जाता । उसको एक व्यापक पक्ष मिल जाता है । कवि को अपने वर्तमान के साथ परंपरा का अवबोध जोड़ता है । "सर्जक व्यक्तित्व की सार्थकता उसके अपनी परंपरा के साथ सन्तुलित भाव के उत्पन्न होने से है । यह प्राचीन साहित्य के अन्तर्गत उपलब्ध होता है । यही जीवन्त साहित्य की मौलिकता है"[2]

जो कवि इतिहास के अवबोध को प्राप्त करता है वह अपने कर्त्तव्यों

---

1. This historical sense, which is sense of the timeless as well as or the temporal and of the timeless and of the temporal together is what makes a writer traditional. And it is at the same time what makes a writer most acutely conscious of his place in time, of his own contemporaneity.
Selected - Essays - P.14.

2. Tnh persistance of literary creativeness in any people, accordingly consists in the maintenance of an unconscious balance between tradition in the larger sense - the collectiv personality. So to speak, realised in the literature of the past - and tne originality of the living generation.
What is classic - P.15.

और कठिनाइयों से अवगत होते हैं । इसलिए सर्जक की सार्थकता का मानदण्ड उसका ऐतिहासिक बोध होता है । इलियट परंपरा के परिप्रेक्ष्य में काव्य की समग्रता मानते हैं । सर्जक को अपनी विशिष्ट परंपरा के प्रति सचेत रहना चाहिए ।

अज्ञेय भी काव्य को परंपरा द्वारा अनुमोदित मानते हैं । परंपरा में निहित सत्य को ग्रहण करके सर्जक को सर्जन करना चाहिए । अज्ञेय परंपरा को बोझ नहीं मानते । परंपरा में निहित सत्य को कठिन परिश्रम से खोज लेना ही कवि का कर्त्तव्य है । "परंपरा कम से कम कवि के लिए ऐसी पोटली बाँधकर अलग रखी हुई चीज़ नहीं, जिसे वह उठाकर सिरपर लाद ले और निकाल ले । परंपरा का कवि केलिए कोई अर्थ नहीं जब तक वह उसे ठोक-बजाकर तोड़-मरोड़कर देखकर आत्मसात् नहीं कर लेता, जब तक वह एक इतना गहरा संस्कार नहीं बन जाती कि उसका चेष्टापूर्वक ध्यान रखकर उसका निर्वाह करना आवश्यक न हो जाय । अगर कवि की आत्माभिव्यक्ति एक संस्कार विशेष के वेष्टन में ही सहज सामने आती है, तभी वह संस्कार देनेवाली परंपरा कवि की परंपरा है[1]

परंपरा का विश्लेषण करके उसमें निहित सत्य को आत्मसात् करना कवि का कर्त्तव्य होता है । परंपरा के अवबोध से उपलब्ध सत्य से कवि अपने अनुभूत सत्य को जोड़कर उसे सीपना योग्य बनाता है

"किसी का सत्य था
मैंने सन्दर्भ में जोड़ दिया
कोई मधुकोष काट लाया था,
मैंने निचोड़ लिया
किसी की उक्ति में गरिमा थी 2
मैंने उसे थोड़ा सा संवार दिया ।"

---

1. दूसरा सप्तक - भूमिका - 6
2. आज के लोकप्रिय कवि - अज्ञेय - 67.

परंपरा से उपलब्ध काव्य वस्तु को कवि अपने इतिहास बोध के द्वारा उसे सत्य बनाकर स्वीकृत करता है । उसे सन्दर्भ में जोड़कर, संवारकर वह अभिव्यक्त करता है । तब वह परंपरा का ही एक अंश बन जाता है । और वह निरंतर परंपरा को नया रूप देता है ।

परंपरा कवि को जीवन देता है । वह अपनी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए परंपरा का सहारा लेता है । क्योंकि परंपरा किसी एक व्यक्ति की देन नहीं है बल्कि वह एक व्यापक बोध है । प्रभाकर क्षोत्रीय लिखते हैं "परंपरा किसी एक व्यक्ति, कवि या अकेली पीढ़ी ने नहीं बनाई है । वह व्यापक मानव समुदाय द्वारा देश-काल की गत्यात्मकता और स्थैर्य-चैतन्य के अनवरत समायोजन और संघर्ष से बनी है और लगातार बनती और विकसित होती जाती है[1]।" परंपरा वह नींव है जिससे कलाकार अनुवासतः अपने जीवन के कुछ वर्षों और प्रशिक्षण में ही रचना के उस धरातल पर पहुँच जाता है, जिसे प्राप्त करने में मानवता को शतियों तक तैयारी करनी पड़ती है ।

अज्ञेय और इलियट ने अपने काव्य चिंतन में परंपरा को महत्वपूर्ण स्थान दिया । परंपरा ही कवि को कवि बनाती है और काव्यकार की सार्थकता भी इसी परंपरा के अवबोध में निर्भर रहती है । सर्जक व्यक्तित्व का विकास परंपरा के अवबोध उपलब्ध काव्यसत्य के स्वीकार में होता है । इसलिए अपनी परंपरा के प्रति सर्जक को सतर्क रहना चाहिए । काव्य सत्य और काव्यभाषा के निरूपण में यह ऐतिहासिक बोध उसका सहायक होता है ।

परंपरा की उपलब्धि सिद्धसाध्य नहीं है । कठिन तपस्या के द्वारा ही परंपरा बोध को कोई प्राप्त कर सकता है । अतीत की अन्तर्धारा में

---

1. कविता की तीसरी आखें - पृ.4.

प्रत्येक कवि अपना हिस्सा जोड देता है । परंपरा सनातन है । प्रत्येक कवि उसमें अपना योग देता है । कवि की अपनी सार्थकता है महत्ता है । मगर वह परंपरा का एक अंग है । उसकी अस्मिता की पहचान उस परंपरा-बोध में ही प्रकट होती है । उसका व्यक्तित्व अतीत से कटा हुआ नहीं, परंपरा का ही एक अंग है ।

निर्वैयक्तिकता काव्य-स्तर पर

इलियट और अज्ञेय दोनों ने काव्य में निर्वैयक्तिकता की प्रक्रिया पर ज़ोर दिया है । काव्यसर्जन में अभिव्यक्ति निर्वैयक्तिक होती है या होनी चाहिए । इलियट ने उसे अहं का समर्पण बताया है "काव्य में कवि अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति नहीं करता, परन्तु वह एक माध्यम है । उसमें अनुभव और अनुभूतियों का विशेष और अप्रत्याशित संयोजन होता है[1]।"

सर्जक एक माध्यम मात्र है । उससे होकर अनुभूतियाँ और अनुभव सृजन योग्य बन जाती हैं । उसमें उसके व्यक्तित्व का अंश नहीं होता । "काव्य में कवि के व्यक्तित्व का कोई महत्व नहीं है[2]।" काव्य में कवि के व्यक्तित्व का प्रबल पक्ष उसको निम्न स्तर का बना देता है ।

काव्य में सर्जक को अपने व्यक्तित्व का समर्पण करना चाहिए ।

---

1. The poet has not a personality to express, but a particular medium, which is only a medium and not a personality in which impressions and experience combine in peculiar and unexpected ways.
Selected Essays - P.8.

2. Impressions and experience which are important for the may take no place in the poetry and those which became important in the poetry may play quite a negligible part in the man, the personality. - Selected Essays - P.8.

साहित्यकार का सही विकास भी इसी निरंतर समर्पण से होता है ।[1]" इसलिए काव्य में अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति नहीं होती । काव्य व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का साधन नहीं है । इसलिए अभिव्यक्ति एक प्रकार से व्यक्तित्व से पलायन है न कि व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति[2] यहाँ इलियट ने काव्य को उच्चतर स्तर पर पहुंचा दिया है । इस प्रक्रिया में कवि परंपरा के प्रति समर्पित होता है और काव्य में एक माध्यम मात्र रह जाता है ।

अज्ञेय अहं के विलयन को काव्य में अनिवार्य मानते हैं । उच्च काव्य में (श्रेष्ठ काव्य में) व्यक्तित्व का विलयन होता है । व्यक्त सत्य एक व्यापक सत्य का रूप ग्रहण कर लेता है । "काव्य रचना का किसी भी कला-सृष्टि का अधिकार तभी आरंभ होता है जब व्यक्तित्व का संपूर्ण विलयन हो जाय, यह मानना तो दूर की बात रही, आज का कवि साधारणतया इतना भी नहीं मानता कि कविता या कि कलासृष्टि, व्यक्ति के विलयन का माध्यम है : कि कविता के द्वारा कवि व्यक्ति को बृहत्तर इकाई में विलीन कर देता है । वरंच आज का कवि तो कविता को, व्यक्तित्व की, व्यक्ति के अहं की, प्रखरतर अभिव्यक्ति और उस अहं को पुष्ट करनेवाली रचना मानता है । मैं कहूं कि इस चरम कोटि का आधुनिक कवि मैं नहीं हूं ; अधिक से अधिक उस श्रेणी में हूं जो कविता को अहं के विलयन का साधन मानते हैं[3]।"

---

1. The Progress of an artist is continual self sacrifice, a continual extinction of personality.
Selected Essays - P.17.

2. Poetry is not a turning loose or emotion, but an escape from emotion, it is not the expression of personality, but an escape from personality. - Selected Essays - P.21.

3. आत्मपरक - पृ.3.

अज्ञेय की "असाध्यवीणा" में अहं के विलयन की यह प्रवृत्ति है । कवि अपने को उस विराट के प्रति समर्पित करता है ।

"पर उस स्पन्दित सन्नाटे में
मौन प्रियंवद साध रहा था वीणा -
नहीं, स्वयं अपने को शोध रहा था ।
सघन निविड में वह अपने को
सौंप रहा था उसी किरीटी - तरु को ।"

प्रियंवद कलाकार के रूप में नहीं, बल्कि एक साधक शिष्य के रूप में वीणा के प्रति अपने को अर्पित करता है । अपनी व्यष्टि को उस समष्टि मयी समाहित वाणी में निःशेष भाव से डुबा देता है और उस समष्टि के प्रत्येक जीवन-स्पर्शी मुखरित क्षण के साथ अपनी व्यष्टि का सीधा और रागात्मक तादात्म्य स्थापित होता है । जब यह प्रक्रिया पूरी होती है, तब वीणा बज उठती है ।

इस प्रकार अपने को समर्पित करने पर सर्जन-प्रक्रिया पूरी हो जाती है । काव्य में कवि के व्यक्तित्व की कोई महत्ता नहीं रह जाती, काव्य की महत्ता है, उस व्यापक सत्य की महत्ता होती है ।

"श्रेय नहीं कुछ मेरा ;
मैं तो डूब गया था स्वयं शून्य में -
वीणा के माध्यम से अपने को मैं ने
सब कुछ को सौंप दिया था" [2]

आत्मविस्मृति और अचेतन की विवृति के निमिष में प्रियंवद के अंगुली-स्पर्श से वीणा से निर्झरित होनेवाली संगीत धारा आत्म समर्पण और अहं से मुक्ति के क्षणों में सध जानेवाली कलाकार की अन्तश्चेतना की असाध्यवी

---

1. आज के लोकप्रिय कवि अज्ञेय - पृ.105.
2. वही - पृ.114.

असाध्यवीणा की सुमधुर झंकार की मौन-ध्वनि का अभिव्यंजन ही है[1]।"

अज्ञेय मानते हैं कि काव्य व्यक्तित्व के विलयन का साधन है । वह व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का साधन नहीं है । जो कवि इसमें सफल हो जाता है वह श्रेष्ठ कवि होता है । प्राचीन कवि भी इस प्रकार अपने व्यक्तित्व को विलीन करके ही लिखते थे[2]।"

व्यक्तित्व का विलयन काव्य सर्जन केलिए अनिवार्य होता है । काव्य सत्य की सही पहचान केलिए व्यक्तित्व से मुक्त रहकर सर्जक को सर्जन में निरत रहना चाहिए । मुक्तिबोध भी इसका समर्थन करते हैं "मैं कलाकार की स्थानान्तर गामी प्रवृत्ति पर बहुत ज़ोर देता हूँ । आज के वैविध्यमयी उलझन से भरे रंग-बिरंगे जीवन को यदि देखना है तो अपने वैयक्तिक क्षेत्र से एक बार तोड़ उड़कर बाहर जाना ही होगा । बिना उसके इस विशाल जीवन समुद्र की परिसीमा उसके तट-प्रदेशों के भूखण्ड, आड़ों से ओर ही रह जाएगी । कला का केन्द्र है व्यक्ति, पर उसी केन्द्र को अब दिशा व्यापी करने की आवश्यकता है[3]।"

कलाकार केलिए यह आवश्यक है कि सर्जक अपने व्यक्तित्व का विकास वैयक्तिक सीमाओं के संकुचित क्षेत्र को त्यागकर व्यापक क्षेत्र को अपनाए । इस प्रकार व्यापक धरातल को प्राप्त करने के लिए कवि को अपने व्यक्तित्व का विलयन करना आवश्यक है । साधारणीकरण की इस प्रक्रिया में काव्यानुभव को व्यक्तिमूल से अलग होकर सामान्य होना चाहिए । सहृदय का सम्बन्ध काव्य से है कवि व्यक्तित्व से नहीं ।

---

1. कला के सम्बन्ध में युग के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के आलोक में अज्ञेय की कविता के प्राग्बिंबीय और मिथकीय तत्वों का अध्ययन - पृ.469.
2. आत्मपरक -32
3. नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबंध - 30.

संप्रेषण

संप्रेषण की सफलता पर काव्यानंद अधिष्ठित है । सही संप्रेषण के द्वारा ही काव्यानुभव का आस्वादन पाठक कर जाता है । प्रिं इलियट और अज्ञेय ने इस संप्रेषण की महत्ता को स्वीकार किया है । काव्य तो संप्रेषण ही है । काव्य का लक्ष्य भी संप्रेषण होता है । इलियट ने कहा कि कवि अपने अनुभवों के सही संप्रेषण केलिए तड़पता रहता है[1]।" काव्य संप्रेषण के अनेक रूपों में एक होता है । परंतु काव्य ही संप्रेषण का सबसे सशक्त रूप होता है । अभिव्यक्त सत्य पाठक के हृदय पर पहुंचने पर ही अभिव्यक्ति का लक्ष्य पूरा हो जाता है । इसलिए कवि चाहता है कि उसके अनुभूत सत्य का सही संप्रेषण हो ।

अज्ञेय ने भी अनुभव किया कि काव्य का लक्ष्य संप्रेषण है । इस संप्रेषण को सफल बनाने के लिए कवि प्रयोग करता रहता है । जो व्यक्ति का अनुभूत है, उसे समष्टि तक कैसे उसकी संपूर्णता में पहुंचाया जाय - यही पहली समस्या है जो प्रयोगशीलता को ललकारती है[2]।" अनुभूत सत्य को उसकी पूर्णता में संप्रेषित करना चाहता है कवि ।

संप्रेषण कवि केलिए एक जटिल प्रक्रिया रही है । क्योंकि वह लगातार संप्रेषण की सफलता केलिए प्रयत्न करता रहता है । संप्रेषण प्रक्रिया के संबंध में अज्ञेय लिखा "संप्रेषण एक प्रक्रिया है जो एक सजीव, प्रत्यक्ष, व्यक्त रूप मूर्त इकाई

---

1. The more of a poet any particular poet is the more he is tormented by the need of communicating his experience. The use of Poets of and use of Criticism - 138.

2. आत्मनेपद - पृ. 34.

की ओर प्रवाहमान होती है, जिस इकाई की सजग चेतना सृष्टि के दौरान निर्व्याघात बनी रहती है[1]।" अज्ञेय कविता को कवि सत्य को साधारण करने का अथवा दूसरों तक पहुंचाने का एक साधन मात्र मानते। साधारण करने का अर्थ है दूसरों तक पहुंचाना।

काव्यानुभव की सार्थकता उसके सफल सृष्टि में है। "जो अनुभव कलानुभव के स्तर पर चढ़ना चाहता है, उसमें सृष्टि की मांग अनिवार्य होती है[2]।" सृष्टि की मांग ही उसकी अनुभूति को महत्व प्रदान करती है। इलियट और अज्ञेय अपने काव्य-चिंतन में इसलिए सृष्टि की अनिवार्यता पर विशेष बल देते हैं। दोनों के अनुसार सृष्टि की सफलता ही काव्य की सफलता की कसौटी है।

काव्य भाषा

काव्य भाषा के सम्बन्ध में इलियट और अज्ञेय के समान विचार हैं। दोनों शब्द को भाषिक इकाई मानते हैं। ऐसे शब्दों के प्रयोग पर बल देते हैं जिनसे अधिकाधिक सृष्टि संभव हो। काव्य के सही आस्वादन केलिए उचित शब्द का प्रयोग अनिवार्य है। सार्थ शब्द की तलाश और उसका प्रयोग कवि-धर्म होता है। और शब्दों में अधिकाधिक अर्थ देना कवि का ही काम होता है। इसी प्रकार सहृदय में वह काव्यानुभव जागृत करता है। इसलिए कवि शब्दों की खोज में रहता है। अपने अनुभव जन्य सत्य को पूर्णरूप में पाठक तक पहुंचाने योग्य शब्द का प्रयोग उसका इच्छित कार्य होता है।

---

1. समकालीन कविता का संकट - पृ. 7।
2. कविता की तलाश - पृ. 25.

काव्य भाषा के सम्बन्ध में दोनों के अपने विचार हैं । अनुभूत सत्य की अभिव्यक्ति के लिए उचित भाषा की अनिवार्यता होती है । लेसलस एमर कोम्बरिक ने लिखा है "अनुभव जितना सशक्त होता है उसको अभिव्यक्ति देने के लिए उतनी ही सशक्त भाषाकी चाहिए[1]।" अनुभव के सही स्वीकार के लिए उचित भाषा होनी चाहिए । इलियट ने भी इससे सहमति प्रकट की है ।

उनकी दृष्टि में सही भाषा वही है जो अभिव्यक्ति में समर्थ हो । "जो भाषा हमारे लिए महत्व रखती है, वह ऐसी है जो नई वस्तुओं, नये नये वस्तु समूहों नयी भावनाओं, नये पक्षों को आत्मसात् करने एवं अभिव्यक्त करने का प्रयास कर रही है[2]।" अनुभव के सारे पक्षों को पूर्ण रूप से अभिव्यक्ति देने योग्य भाषा का प्रयोग कविता में लेना चाहिए ।

भाषा के सम्बन्ध में अज्ञेय का भी अभिमत प्रायः यही है । भाषा शब्दों का संचय है । इसलिए "सर्जक कवि का सरोकार मूलतः भाषा से नहीं शब्दों से होता है और रचनात्मक प्रयोग वास्तव में भाषा का नहीं, शब्द का प्रयोग है[3]।" शब्द का सार्थक प्रयोग ही कविता है । इसलिए आधुनिक कवियों ने शब्दों में नया अर्थ भरने का प्रयास किया है ।

कवि के अनुभूत सत्य की अभिव्यक्ति की क्षमता भाषा में होनी चाहिए । कवि और भाषा के बीच अज्ञेय लिखते हैं "कितनी गहराई में हमारी अस्मिता हमारी

---

1. The greater the inspiration, the greater the art required to give it literary experience, for the more there is in an expegience, the more power over language will be required to symbolize it in a work of art. Principles of Literary Criticism.

2. The language which is more important to us is that which is struggling to digest and express new objects new groups of objects, new feelings new aspects, as for instance the prose of the James Joyce or the earlier Conard. - Seven American Poets - P.206.

3. नया प्रतीक

अपनी पहचान हमारी अपनी भाषा के साथ जुड़ी हुई होती है और कितने गहरे में हमारी भाषा इस बात से प्रभावित होती है कि किस भाषा में हम अपने को पहचान कर रहे हैं और उस पहचान में से कौन सी भाषा निकल रही है । यह सम्बन्ध हमारी भाषा को भी निरूपित और नियन्त्रित करता है[1]।" कवि अपनी पहचान अपनी भाषा में करता है । यह भाषा उसकी अपनी होती है । इसलिए वह एक ऐसी भाषा की तलाश करता है जिसमें वह अपने को पहचान कर सके ।

अज्ञेय ने अपने भाषिक-चिंतन के अनुकूल साहित्यिक भाषा के स्वरूप को भी निरूपित किया है । उनके साहित्य में भाषा का विकसित रूप दृष्टिगत होता है । रघुवीर सहाय ने लिखा "भाषा की दृष्टि से भी अज्ञेय विकास का सबूत देते हैं । जटिल मनोभावों, उलझी हुई संवेदनाओं और मनोदशाओं को अभिव्यक्त करने की भाषायी क्षमता का जैसा प्रिंस निदर्शन अज्ञेय ने "शेखर" एक जीवनी" में दिया था उसे हम विकसित रूप में पाते हैं "नदी के द्वीप" की भाषा में यात्री की जटिल मनोदशाओं और सूक्ष्म संवेदनों को अभिव्यक्त करने की समर्थ है तो "अपने अपने अजनबी" की भाषा में उलझी हुई मनःस्थितियां, अमूर्त विचारों और दार्शनिक अभिवृत्तियों को अभिव्यक्त करने की क्षमता है ।

बदलते परिवेश के अनुसार भाषा भी बदलती है । इसी प्रकार वह अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के योग्य होती है । भाषा स्थिर होती ही नहीं । जीवन्त भाषा कभी स्थिर नहीं होती, उसकी अनवरत प्रवाह मानता को साहित्यकार न केवल अन्तः प्रज्ञा से जानता है बल्कि उसमें अटूट श्रद्धा रखता है

---

1. जोग लिखी - पृ. 22.
2. आजकल - जून, 1987 - पृ. 9.

जहाँ यह श्रद्धा टूटती है वहाँ या तो रचनाकार की भाषा जड़ हो जाती है और इसलिए रचना भी जड़ होकर आवृत्ति मात्र रह जाती है, या फिर साहित्यकार का आत्मविश्वास भी नष्ट हो जाता है और उसकी रचना में प्रामाणिकता का स्पन्दन हमें नहीं मिलता।[1]" इस कथन में अज्ञेय का भाषा सम्बन्धी दृष्टिकोण स्पष्ट होता है। जीवन्त भाषा का प्रयोग करना है कवि को। और भाषा बहती धारा है इसमें परिवर्तन होता ही रहता है। इस परिवर्तन के प्रति सचेत होना कवि के लिए अनिवार्य है। तभी उसकी रचना सार्थक हो जाती है।

भाषा का अपना सांस्कृतिक पक्ष है। निरंतर बदलती भाषा ही कविता को अभिव्यक्ति प्रदान करती है। पर इस प्रवाह मानता के साथ ही भाषा में उसकी अपनी संस्कृति स्थापित होती है। इसी को भाषा का सांस्कृ पक्ष कहा जाता है। भाषा के सांस्कृतिक पक्ष पर इलियट और अज्ञेय ने ज़ोर दिया है। भाषा सांस्कृतिक उपलब्धि है। परंपरा और संस्कृति से संपन्न भाषा का प्रयोग कवि-कर्म का ध्येय है। ऐसी भाषा में सांस्कृतिक परिवेश की सारी विशेषताएं सुरक्षित रहती हैं। यही जनमानस की भाषा है। जनमानस की भाषा सहज अभिव्यक्ति की भाषा है। पाठक सहजता से उसका आस्वादन कर पाता है।

अभिव्यक्ति में बिंब और प्रतीक

अभिव्यक्ति में बिंब और प्रतीक या दोनों का महत्व निर्विवाद है। अत्यन्त गूढ़ भावों की अभिव्यक्ति बिम्बों और प्रतीकों की सहायता के बिना

---

1. साहित्य का परिवेश - पृ.107

काव्य के क्षेत्र में विशेषकर असंभव है । आधुनिक कवि इसी कारण बिम्बों और प्रतीकों की बहुलता के साथ प्रयोग करते हैं । इलियट और अज्ञेय दोनों की कविताओं में नये-नये कभी-कभी दुर्ग्राह्य बिम्बों और प्रतीकों की योजना पायी जाती है ।

अभिव्यक्ति पक्ष में बिंबों और प्रतीकों की महत्ता इलियट और अज्ञेय ने स्वीकार की है । टी॰ इ॰ ह्यूम ने लिखा है " बिंब कविता का मात्र अलंकार नहीं बल्कि वह भाषा का प्रमुख अंग है[1]।" इलियट ने "वेस्टलैंड" में सशक्त बिंबों का प्रयोग किया है । उन्होंने भाषा में बिंबों एवं प्रतीकों के प्रयोग अनिवार्य ही माना है ।" मैं तो कहूँगा और थोड़ा-सा भी अध्ययन और पर्यवेक्षण इसे पुष्ट करेगा - कि कोई भी स्वस्थ काव्य-साहित्य प्रतीकों की नये प्रतीकों की सृष्टि करता है, और जब वैसा करना बन्द कर देता है तब जड़ हो जाता है[2]।" अनुभूत सत्य को उसकी पूर्णता में अभिव्यक्ति देने केलिए बिंबों एवं प्रतीकों की अनिवार्य आवश्यकता है ।

काव्य सत्य के अन्वेषण में प्रतीक कवि की सहायता करता है । प्रतीक के द्वारा सर्जक कवि अर्थ की गहराई तक जाकर उसे संप्रेषित करने में सफल होता है । "कवि प्रतीक के द्वारा सत्य को जानता है - सत्य के अथाह सागर में वह प्रतीक रूपी कंकड़ फेंककर उसकी थाह का अनुमान करता है[3]।"

काव्यधर्म

इलियट और अज्ञेय ने काव्य को परंपरा की उपलब्धि माना है । साहित्य में मनुष्य अपनी अस्मिता का बोध प्राप्त करता है । और समाज

---

1. The Plays of T.S. Eliot - P.9.
2. आत्मनेपद - पृ॰37॰
3. वही - पृ॰42॰

के साथ उसके संबन्ध को सार्थक बनाता है । वर्तमान को अतीत के भावबोध में मिलाकर उसके सही रूप को काव्य प्रस्तुत करता है । इस प्रकार वर्तमान की पहचान कराने में काव्य व्यक्ति का सहायक होता है ।

साहित्य व्यक्ति के चिंतन क्षेत्र को व्यापक बनाकर उसकी सार्थकता का बोध कराता है । अपनी अर्थवत्ता का बोध व्यक्ति में जगाकर उसे समाज के प्रति उत्तरदायी बनाता है । इस प्रक्रिया में काव्य व्यक्ति को अपने अस्तित्व का बोध करता है । अपने आसपास घटित घटनाओं और वस्तुओं के प्रति व्यक्ति को जागरूक बनाना काव्य का धर्म होता है । उनकी विभिन्न प्रतिक्रियाओं के प्रति संवेदनशील होना व्यक्ति धर्म होता है । काव्य व्यक्ति को इनकी ओर प्रेरित करता है ।

जीवन को खंडित न देखकर उसको समग्रता से देखने की क्षमता काव्यप्रदान करता है । इस तीव्रता की समग्रता के बोध को व्यक्ति में जगाकर उसमें जीवन की ओर सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना काव्य का धर्म होता है । अज्ञेय ने लिखा । साहित्य भी अस्मिता की पहचान कराता है । सामूहिक, सामाजिक, व्यक्तिगत और अस्तित्विक अस्मिता की । साहित्य भी स्थिति बोध जगाता है जड़ों की पहचान करता है, उनके द्वारा अपनी मिट्ठी से रस खींचने की प्रेरणा देता है, प्रक्रिया सिखाता है, दक्षता बढ़ाता है । साहित्य भी बदलाव का परिचय कराता है । बदलाव की संभावनाएं उजागर करता है, बदलने की प्रेरणा देता है ।[1]" साहित्य मानव के अस्तित्व का बोध कराता है । उसी प्रकार परिवेश में जो परिवर्तन होता है उसकी पहचान कराता है । उसके अनुसार बदलने का आह्वान भी देता है ।

---

1. साहित्य और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया - पृ.94.

मानव संस्कार को परिवर्तित और परिवर्द्धित करने में काव्य सहायक होता है । संस्कृति के विकास में उसका योगदान है । मानव की मूल चेतना के प्रति उसे जागरूक बनाना काव्य का धर्म होता है । मनुष्य संस्कृति का एक अंग है । अपनी सांस्कृतिक परिवेश के बारे में सही बोध मनुष्य में उत्पन्न करता है काव्य । इससे वह स्वयं अपना विकास भी करता है । मानव जीवन के विस्तृत इतिहास में अपनी अस्मिता का बोध व्यक्ति में उत्पन्न करना काव्य का परम धर्म होता है ।

उपसंहार

उपर्युक्त अध्यायों में हमने इलियट और वात्स्यायन दोनों के काव्य धर्म संबंधी विचारों का गहरा विवेचन प्रस्तुत किया है । ये दोनों अपनी अपनी भाषा के सर्वश्रेष्ठ सर्जकों में परिगणित होते हैं । वस्तुत: दोनों का वास्तविक क्षेत्र सृजनात्मक साहित्य ही है । परन्तु इतिहास, परंपरा और दर्शन के प्रति जागरूक रहने के कारण साहित्य के सामान्य धर्मों के संबंध में अपने विचारों का प्रतिपादन करना भी उन दोनों के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक हो गया ।

कवि के रूप में इलियट और वात्स्यायन विश्व विश्रुत हैं । उनकी कविताएं हमेशा बुद्धिवाद से प्रबोधित दीख पड़ती है । वैचारिक पक्ष दोनों में सशक्त है । उनके समीक्षात्मक निबन्धों के अध्ययन के बिना उनकी कृतियों का यथावत् मूल्योंकन संभव नहीं है । इस कारण समीक्षात्मक कृतियों की महत्ता और भी बढ़ गयी है । हमने इसी दृष्टिकोण से उनके सिद्धान्तों का तुलनात्मक अध्ययन किया है । सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर उनमें वैषम्य की अपेक्षा साम्य ही अधिक लक्षित होता है । दोनों स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के विपक्ष में हैं । परंपरा के सनातन मूल्यों के संरक्षण के द्वारा ही समसामयिक साहित्य विकास पाता है, इस तथ्य पर दोनों का विश्वास अडिग है ।

प्रस्तुत अध्याय में इलियट और वात्स्यायन के काव्य धर्म संबंधी सिद्धान्तों के संबंध में हमारे अध्ययनों का परिणाम क्रमश: प्रस्तुत किया जाएगा ।

टी·एस·इलियट और एस·एच्·वात्स्यायन के काव्य प्रणयन और काव्य धर्म संबंधी विचारों के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उनके सिद्धान्त अपने में मौलिक हैं और परंपरा के अवबोध से सुसंपन्न है । आधुनिक साहित्य और समीक्षा पर दोनों का सशक्त प्रभाव पड़ा है ।

इलियट और वात्स्यायन काव्य सर्जना को तम:पूत साधना मानते हैं । वैयक्तिक अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने का माध्यम नहीं है सर्जक । वह उन अनुभूतियों को आत्मसात करके उन्हें काव्यात्मक बनाने की साधना में लीन हो जाता है । वह उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र होता है । इस माध्यम से होकर सारी अनुभूतियाँ वैयक्तिक और सामाजिक-काव्यानुभूतियाँ बन जाती है । यह परिवर्तन अनुभूति की सृजन प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप होता है । इसलिए कवि एक सशक्त माध्यम होता है काव्य प्रणयन में ।

कविता और काव्य निर्माण को इसलिए दोनों ने एक जटिल कार्य माना इस कार्य में कवि सिर्फ एक माध्यम है । यह सच है कि कवि के पास बहुत से अनुभव होते हैं । अनुभूतियों की सहजधारा में बहना ; उन्हें पुन: प्रस्तुत करना सर्जक कर्म नहीं है । क्योंकि अनुभूतियों की सहज अभिव्यंजना नहीं होती । उन्हें काव्यानुभूति में परिणत करना कवि कर्म है । अतएव वह माध्यम बन जाता है । यह माध्यम जितना सशक्त और तटस्थ होता है उतना ही काव्य का महत्व भी बढ़ जाता है ।

परंपरागत धारणा काव्य के संबंध में यह है कि कविता कवि के अंतरंग व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है । कवि भले ही वस्तु दृश्य जगत से ग्रहण करता है

तथापि उसके आन्तरिक जगत में बाह्य वस्तु परिवर्तित होकर उसकी अपनी बन जाती है । उसी को वह काव्य में अभिव्यक्त करता है । इस सिद्धान्त को इलियट और वारेन्यायम दोनों ने स्वीकार किया है ।

परंपरा की महत्ता को सारे क्लासिक कवियों ने स्वीकार किया है । इलियट और वारेन्यायम भी परंपरा के सशक्त वक्ता रहे हैं । सर्जना में एक सशक्त माध्यम बनने के लिए यह आवश्यक है कि कवि अपने को परंपरा के प्रति समर्पित करे । ऐसा करके वह व्यापक अनुभव जगत को प्राप्त कर लेता है । पूर्ण समर्पण की देन है काव्य । परंपरा से उपलब्ध काव्य सत्य प्राप्त करने के लिए कवि उसमें अपने को विलीन कर देता है । उस विलयन से उत्पन्न काव्यानुभव वास्तव में स्रष्टा के काव्य सत्य होता है ।

कविता सौन्दर्य का साधन है । आनंद का उत्स है । इसलिए कविता में कवि को बोलना नहीं चाहिए । काव्य को कवि के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का साधन मानना उसके प्रति अन्याय होगा । क्योंकि कविता का स्वतन्त्र अस्तित्व होता है । उसमें लेखकीय हस्तक्षेप काव्य के सौन्दर्य को धूमिल कर देता है । इसलिए इलियट और वारेन्यायम काव्य में अहं या कवि के व्यक्तित्व का विलयन या समर्पण अनिवार्य मानते हैं । कवि-व्यक्तित्व की बोझ से कविता का सही आस्वादन असंभव होता है । आस्वादन के अभाव में काव्य का लक्ष्य भी अधूरा रह जाता है । इसलिए कवि को तटस्थ रहकर काव्यसर्जन में लगना चाहिए । अपने व्यक्तित्व के संकुचित दायरे से मुक्त होकर व्यापक सत्य की अभिव्यक्ति के साधन के रूप में कविता को ग्रहण करना चाहिए ।

इस व्यापक सत्य के अन्वेषण में कवि को अपने व्यक्तित्व से बाहर आना पड़ता है । निर्वैयक्तिक होकर निरन्तर साधना से ही कवि इस सत्य को पा सकता है । निर्वैयक्तिकरण की इस प्रक्रिया का इलियट और वात्स्यायन अनुमोदन करते हैं । अपने को शून्य करके ही वह काव्य सत्य के धरातल तक पहुँच सकता है । अहं के विलयन से यही तात्पर्य है । काव्यानुभूति कवि की अनुभूति नहीं रह जाती है । उसको एक व्यापक पक्ष मिल जाता है । काव्य प्रणयन में यह बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य है । इसलिए वात्स्यायन तथा इलियट ने सर्जना में कवि व्यक्तित्व को कोई स्थान नहीं दिया । सर्जना में कवि व्यक्तित्व का हस्तक्षेप काव्यकृति को विकल बनाता है । इसलिए काव्य निर्माण में निर्वैयक्तिकरण की अनिवार्यता है ।

इलियट और वात्स्यायन की दृष्टि में सर्जना का ध्येय सृष्टि है । काव्य सृष्टि का वाहक नहीं होते काव्य प्रणयन की चरम सीमा है । इसलिए सृष्टि की सफलता पर दोनों ने बल दिया । सृष्टि के योग्य भाषा के प्रयोग पर ज़ोर दिया । भाषा की मूल इकाई शब्द के सार्थक प्रयोग उनका लक्ष्य रहा । शब्दों में नया अर्थ भरकर उन्हें सृष्टि के योग्य बनाना उनकी निरन्तर साधना रही । सार्थ शब्द ही सही सृष्टि कर सकता है, करता है ।

अभिव्यक्ति और सृष्टि एक दूसरे से जुड़े हैं । सृष्टि के अभाव में कविता अपूर्ण होती है । इलियट और वात्स्यायन इस सृष्टि की पूर्णता को काव्यसर्जन में अनिवार्य तत्व मानते हैं । कविता ही सृष्टि है । काव्य की चरम उपलब्धि सृष्टि है । दोनों की दृष्टि में सृष्टि की बड़ी महत्ता है ।

सीक्षण में आस्वादन भी निहित है । इसलिए कवि को सीक्षण के अनुकूल सर्जन करना चाहिए । कविता कविता तभी होती है जब उसका सही सीक्षण होता है । काव्यास्वादन एक उपलब्धि है तो उसका एक मात्र साधन सीक्षण है । अनुभूतियों के हस्तान्तरण से पाठक अनुभूत सत्य की पहचान कर पाता है । इसलिए काव्य सर्जन की सफलता की कसौटी यही उसका सही सीक्षण है ।

अभिव्यंजना के सफल सीक्षण में परिणत करने के लिए प्रतीकों एवं बिंबों की तलाश करते हैं कवि । उनके माध्यम से अनुभूत सत्य को ठोस अमूर्त रूप से सीक्षित करने में सर्जक सफल हो जाता है । इलियट और वात्स्यायन ने सार्थक और सशक्त प्रतीकों और बिंबों का सफल प्रयोग किया ।

अनुभूति और काव्यानुभूति में अन्तर है । सारी अनुभूतियाँ काव्यानुभूतियाँ नहीं होती । वही काव्यानुभूति है जो परंपरा के अवबोध से संपृक्त हो । अर्थात् कवि की सार्थकता इस परंपरा के नैरन्तर्य में अपने को देखने में है । वह परंपरा का एक अंग है । इसलिए कवि उस अजस्र परंपरा से अलग रहकर सर्जन नहीं कर सकता । अपनी अनुभूतियों को परंपरा के अवबोध से उत्पन्न काव्य बोध के प्रकाश से मिलाकर अभिव्यंजित करना चाहिए ।

इस अतीत-बोध को, परंपरा के संस्कार को बड़े जतन से ही प्राप्त किया जा सकता है । परंपरा के परिप्रेक्ष्य में ही काव्यानुभूति की महत्ता सदैव निर्धारित होनी चाहिए तभी कविता वैयक्तिक धरातल से मुक्त होकर सामान्य होती है । यही कारण है कि इलियट अपने को अतीत से जोड़ना चाहते हैं । वे

परंपरा के बोध सर्जन के लिए अनिवार्य मानते है । परंपरा में ही कवि की सार्थकता है । परंपरा की उपलब्धि ही कवि को कवि बनाती है । उसके बिना कविता का जन्म नहीं होता ।

काव्य इतिहास को दुहराता नहीं, वह इतिहास के अवबोध से वर्तमान को सार्थक ढंग से अभिव्यक्त करता है । यह समय की सार्थकता परंरा-बोध की देन है । इसलिए कवि को परंपरा के अवबोध अर्जित करना चाहिए । परंपरा-बोध को प्राप्त करने पर कवि अपनी संस्कृति की ओर उन्मुख हो जाता है । इस सांस्कृतिक परिवेश से संपृक्त रचना का निर्माण ही कवि कर्म होता है । संस्कृति कवि को उस विस्तृत परंपरा की ओर आकृष्ट करती है । वर्तमान के साथ जुड़कर रहते हुए भी सर्जक में एक व्यापक इतिहास बोध क्रियाशील रहता है ।

साहित्य मानव मन का निरन्तर परिष्कार करता है । जीवन की समग्रता का बोध उसको उपलब्ध होता है । इस प्रकार जीवन की और व्यापक और स्वस्थ दृष्टिकोण मानव में पैदा हो जाता है । उसका चिंतन क्षेत्र उससे व्यापक हो जाता है । यथार्थ की पहचान कराके जीवन की अर्थवत्ता को साहित्य उसे प्रदान करता है ।

साहित्य मानव को उसके सांस्कृतिक धरातल से जोड़ता है । सांस्कृतिक धरातल से संपृक्त होकर मानव अपनी व्यष्टि सत्ता से बाहर आकर समष्टि की ओर बढ़ जाता है । वह समाज का अभिन्न अंग बन जाता है । सांस्कृतिक अवबोध से वह महसूस करता है कि समष्टि के प्रति भी उसे कुछ कर्त्तव्य होता है । इसलिए वह व्यक्तिबद्ध न रहकर सामाजिक भी हो जाता है । काव्य उसे इस

इस प्रकार व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करता है ।

काव्य से मनुष्य को अपनी उसकी चिरंतन संस्कृति का बोध होता है । उसमें वह अपनी अस्मिता की पहचान भी करता है । इलियट और वात्स्यायन के काव्यधर्म संबन्धी सिद्धान्तों में दोनोंनेइसे स्वीकार किया है । विभिन्न संस्कृतियों में युगों में मानव होने का बोध काव्य कराता है । मानव अपनी सही पहचान भी काव्य के द्वारा करता है । मानव की सार्थकता इस पहचान में है ।

निष्कर्षतया इलियट और वात्स्यायन के अनुसार परंपरा के प्रकाश में अनुभूतियों को साधारणीकृत रूप में संप्रेषित करना ही सच्चा साहित्यिक सर्जना है । काव्य मानव को ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का बोध कराकर उसकी अपनी अस्मिता की पहचान कराके निरन्तर विकास करने की क्षमता प्रदान करता है । जीवन के प्रति व्यापक और स्वस्थ दृष्टिकोण उत्पन्न करके अपने कर्त्तव्यों की ओर सचेत करता है ।

इस अध्ययन के परिणामस्वरूप हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सके हैं कि दोनों में अद्भुतजनक साम्य है । जहाँ तक हमारी जानकारी है, ये कवि कभी एक दूसरे से परिचित नहीं थे । फिर उनके विचार में और काव्यबोध में भी यह सादृश्य कैसे कैसे आया ? इसका उत्तर यह है कि वास्तव में नवीनता की खोज में दोनों की समान रुचि थी । साहित्य क्षेत्र में भी नवीनता की खोज में रहे । उनके साहित्य ही इसका सबूत है ।

Books of T.S.Eliot

1. After Strange Gods : Faber And Faber London - 1934
2. Collected Poems : Faber and Faber London - 1963
3. On Poets and Poetry : Faber And Faber London - 1957
4. Selected Essays : Faber And Faber London - 1930
5. Notes Towards the Defenition of Culture : Faber And Faber London - 1949
6. The Use of Poetry the Use of Criticism : Faber And Faber London - 1933
7. Four Quartets : Faber and Faber London - MCML Ix
8. To Criticize the Critic : Faber And Faber London - 1965
9. What is Classic : Faber And Faber London
10. Selected Prose : John Haywood Penguin Books London - 1930
11. The Sacred Wood : Methu Press - 1920

Books of other Authors

1. A Readers Guide to T.S.Eliot : George Williamson Thomson And Hudson London - 1955

2. An Introduction to Literary Criticism : S.M.Schruber Pergamon Press Oxford- 1965

3. British Writers : Ian Scott - Kilvert Charles Scribuers Sons Newyork - 1984 - First

4. Criticism in America : John Paul Pritchard Lyall Book Depot Ludhiana - 1970

5. Literary Criticism A Short History : William K.Wemsatt Oxford Publishing Com. New Delhi - 1970

6. Modern Verse : Micheal Roberts Faber And Faber London - 1965

7. Notes on T.S.Eliot Major Poems and Plays : Robert B. Kaplan Coles Publishing London - 1912

8. Notes on Some Figures Behind T.S.Eliot : Herbert Howarth Chatto & Winders London - 1965

9. Oxford Lectures on Poetry : A.S.Bradley Macmillan & Company London - 1962

10. Poetry And Morality : Michael Roberts Faber And Faber London - 1965

11. Principles of Liberary Criticism : Laselles Abererombie

12. Poets on Poetry : Charles Norman The Free Press Newyork - 1966

13. Seven Modern American Poets : Leonard Unger
A.H.Wheeler & Co.
Allahabad

14. Students Hand Book of American Literature : C.D.Narasimha Rai
Kalyani Publications
Ludhiana - 1972

15. T.S.Eliot : Peter Ackroyed
Hamish Hamilton
London - 1984 .First

16. T.S.Eliot- The Man And His Work : Allen Tate
Chatto & Windus
London - 1967

17. T.S.Eliot : Caroline Behr
Macmillion -
London - 1983 -First

18. T.S.Eliot Between Two Worlds : David Ward
Roulledge & Kegan Paul
London - 1973 - First

19. T.S.Eliot and Hermeneutics : Harret Davidson
Louisiana State University
Press, London - 1985-First

20. T.S.Eliot : Bernard Bergonz
Macmillian, Newyork - 1972

21. T.S.Eliot : Stephen Spender
Fotana - 1975

22. T.S.Eliot - A Memoir : Robert Sencort
Garnstone Press
London - 1971

23. T.S.Eliot : High Kunner
Euglewood Cliffs N.J,
1962 - First

24. T.S.Eliot : Richard March and Tambi Muttu
P L Ediliar Poetry
London -1948 - First

25. T.S.Eliot : Sheila Sullivan
George Allen And Unwin
London - 1973 - Second

26. T.S.Eliot : Leonard Unger
University of Mennesota Press
Minneapolis - 1961 - First

27. Twentith Century Auther : Kunitz S.J.
Wilson And Com. -1942

28. The Poetry of T.S.Eliot : D.E.S.Maxwell
Roulledge & Kegan Paul
1960

29. The Pelican Guide to English Literature : Boris Food
Penguin Books Ltd - 1964

30. The Appreciation of Poetry : P.Gurrey -London
Oxford University Press -1935

31. The American Tradition in Literature : Scully Bradley
W.W.Morton & Company
Newyork - 1962

32. The Plays of T.S.Eliot : David & James
Roulledge & Kegan Paul
London - 1962

33. The Function of Criticism : Yvor Winters
Roulledge & Kegan Paul
London - 1973

34. Writers on Writing : Walter Allen
Phoenix House London -1958

Periodicals

1. Indian Literature : March - April, 1987

एस्·एच्· वात्स्यायन के ग्रन्थ

1· अन्तरा	: राजपाल एण्ड सन्ज : दिल्ली 1975
2· आत्मपरक	: एम·पी·एच·दिल्ली : 1983
3· आलवाल	: राजकमल प्रकाशन दिल्ली 1971
4· आधुनिक हिन्दी साहित्य	: राजपाल प्रकाशन दिल्ली : 1976
5· एक बूंद सहसा उछली	: भारतीय ज्ञान पीठ : काशी : 1960 प्रथम
6· कवि‌दृष्टि	: लोक भारती प्रकाशन: इलाहाबाद :1983
7· कहाँ है द्वारिका	: राजपाल एण्ड सन्स : 1982 प्रथम सं·
8· केन्द्र और परिधि	: एम·पी·एच्· दिल्ली : 1984 प्रथम सं·
9· छाया का जंगल	: सरस्वती विहार : दिल्ली :1984
10· जन जनक जननी	: प्रभात प्रकाशन : दिल्ली 1983
11· जोग लिखी	: राजपाल एण्ड सन्स : 1977
12· तारसप्तक	: भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन काशी 1966
13· दूसरा सप्तक	: ज्ञानपीठ प्रकाशन : काशी 1970
14· नदी के द्वीप	
15· त्रिशंकु	: सूर्यप्रकाश मन्दिर : बीकानेर 1973
16· बारह खम्भा	: प्रभात प्रकाशन : दिल्ली : 1987 प्रथम
17· भग्दूत	: राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली 1975
18· भारतीय कलासृष्टि	: प्रभात प्रकाशन 1985 प्रथम
19· महावृक्ष के नीचे	: राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली 1977 प्रथम

20. रंग और कुछ राग : एन.पी.एच. 1982 प्रथम

21. स्वयंभरा : भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन काशी 1960 प्रथम

22. लिखि कागद कोरे : राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली 1972

23. शाश्वती : राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली 1979

24. समकालीन कविता के छन्द : एन.पी.एच : दिल्ली : 1986 प्रथम

25. सदानीरा : एन.पी.एच् : दिल्ली 1986 प्रथम

26. संवत्सर : एन.पी.एच् : दिल्ली : 1978 प्रथम

27. साहित्य और समाज परिवर्तन की प्रक्रिया : एन.पी.एच् : दिल्ली 1985 प्रथम

28. साहित्य का परिवेश : एन पी.एच् : दिल्ली 1985 प्रथम

29. सुनहले शैवाल : ऊषा प्रकाशन दिल्ली 1966 प्रथम

30. स्रोत और सेतु : राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली :1978

31. हिन्दी साहित्य एक आधुनिक परिदृश्य : राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली:1967

अन्य लेखकों के ग्रन्थ

1. अज्ञेय गद्य में : डा.ओम्प्रकाश अवस्थी
ग्रन्थम कानपुर 1982

2. अज्ञेय : विश्वनाथ प्रसाद तिवारी
नेशनल पब्लिशिंग हाउस : नई दिल्ली:
1978

3. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या : रामस्वरूप चतुर्वेदी
भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन काशी :1968

4. अज्ञेय का अन्तक्रिया साहित्य : डा.मथुरेश नन्दन कुलश्रेष्ठ
चित्रलेखा प्रकाशन : इलाहाबाद 1984

5. अज्ञेय कवि : ओम्प्रकाश अवस्थी
ग्रंथम : कानपुर : 1977 प्रथम सं.

6. अज्ञेय, धर्मवीरभारती और मोहन राकेश की कथायात्रा : सुनीता वशिष्ठ 1968
चिन्मय प्रकाशन जयपुर : प्रथम सं.

7. अज्ञेय जीवनी : विद्यानिवास मिश्र : 1963
राजपाल एण्ड सन्स : नई दिल्ली :
प्रथम सं.

8. अज्ञेय और उनके उपन्यास : डा.गोपालराय : 1975
मैकमिल्यन कंपनी आफ इण्डिया : प्रथम सं.

9. आज के लोकप्रिय कवि अज्ञेय : विद्यानिवास मिश्र : 1979
राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली

10. आधुनिक हिन्दी कविता सर्जनात्मक सन्दर्भ : रामदरश मिश्र : 1986
इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन दिल्ली : प्रथम सं.

11. कविता के साक्षात्कार	: सम्पादक 1979 संभावना प्रकाशन : हापुड : प्रथम सं.
12. कविता की तीसरी आँख	: प्रभाकर क्षोत्रीय : 1980 एन.पी.एच. नई दिल्ली : प्रथम सं.
13. कविता की तलाश	: चन्द्रकान्त बांदिवडेकर : 1983 विभूति प्रकाशन : दिल्ली : प्रथम
14. तारसप्तक के कवि काव्यशिल्प के मान	: कृष्णलाल 1979 प्रथम सं: साहित्यिक प्रकाशन : दिल्ली
15. समकालीन कविता का व्याकरण	: परमानंद श्रीवास्तव : 1980 शुम्भु प्रकाशन : दिल्ली : प्रथम सं.
16. साहित्य की चेतना	: विद्यानिवास मिश्र : 1967 विद्यांचल प्रकाशन : छतपुर : प्रथम सं.
17. टी.एस.इलियट के आलोचना सिद्धान्त	: डा.शिवमूर्ति पाण्डेय आलेख प्रकाशन : दिल्ली : 1979
18. साहित्य और संस्कृति कुछ अन्तर्यात्राएं	: डा.भगवतीप्रसाद सिंह : 1980 प्रकाशन संस्थान : दिल्ली : प्रथम सं.

19 कला के संबन्ध में युंग के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के आलोक में अज्ञेय की कविता के प्रागतिवादीय और मिथकीय तत्वों का अध्ययन — डा रंजन अप्रकाशित शोध ग्रन्थ

पत्रिकाएं

1. आजकल	: जून - 1987	
2. दिनमान	: अप्रैल - 1987	12 - 18
3. दिनमान	: अप्रैल - 1987	19 -25
4. नया प्रतीक	: मई - 1977	
5. रविवार	: अप्रैल - 1987	
6. संपर्क	: मार्च - 1987	

.....